सब्र जिंदगी के मकसद का दरवाजा खोलता है, क्योंकि सिवाय सब्र के उस दरवाजे की कोई और चाबी नहीं है।

– शेख सादी

सियासी रस्साकशी

अठारहवीं लोकसभा के पहले सत्र की शुरुआत और नए सांसदों के शपथ ग्रहण के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण काम लोकसभा अध्यक्ष पद पर नियुक्ति होगी। हालांकि इस बार इस पर जिस तरह की खींचतान चल रही है, वह अप्रत्याशित है, फिर भी नई लोकसभा में सत्ता पक्ष और विपक्ष के संख्या बल से बने समीकरण को देखते हुए इसे स्वाभाविक कहा जा सकता है। फिलहाल राष्ट्रपति ने भाजपा सांसद भर्तृहरि महताब को प्रोटेम अध्यक्ष नियुक्त किया है। इस क्रम में सत्ता पक्ष और विपक्ष के बीच लोकसभा अध्यक्ष पद के लिए सहमति नहीं बन पाने की वजह से इस बार अब इसके लिए चुनाव कराने की नौबत आ गई है। अब स्थिति यह है कि पिछली लोकसभा में निचले सदन के अध्यक्ष रहे भाजपा सांसद ओम बिरला ने राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के उम्मीदवार के तौर पर नामांकन दाखिल किया है। कांग्रेस सांसद के सुरेश विपक्ष के उम्मीदवार होंगे।

दरअसल, लोकसभा अध्यक्ष पद के लिए चुनाव की नौबत आने के पीछे मुख्य बात यह सामने आई है कि विपक्ष की ओर से लोकसभा उपाध्यक्ष पद दिए जाने की मांग उठाई गई, लेकिन सरकार ने इसे लेकर कोई आश्वासन नहीं दिया। नतीजतन, लोकसभा अध्यक्ष पद पर नियुक्ति अब चुनाव के जरिए ही होगा। इस मसले पर विपक्ष का कहना था कि लोकसभा उपाध्यक्ष का पद विपक्ष को दिए जाने की परंपरा रही है और अगर सरकार इस परंपरा का पालन करती है तो पूरा विपक्ष सदन के अध्यक्ष के रूप में सरकार के उम्मीदवार का समर्थन करेगा। निचले सदन में लोकसभा अध्यक्ष का पद कई लिहाज से बेहद अहम होता है। उन्हें संतुलित और तटस्थ रुख रखते हुए सभी जनप्रतिनिधियों के प्रति न्यायपूर्ण दिखना होता है, क्योंकि अध्यक्ष किसी सत्ताधारी दल या विपक्ष का नहीं होता, पूरे सदन का होता है। इसी तरह उपाध्यक्ष को भी सभी दलों के सदस्यों के प्रति समान भाव रखना होता है। ऐसे में अगर अध्यक्ष का चुनाव सभी दलों की सहमति से होता तो यह एक आदर्श स्थिति होती। मगर हालत यह है कि इस मामले में खुद सत्ताधारी गठबंधन के प्रमुख घटक तेलगु देसम पार्टी और जनता दल (एकी) के रुख ने भाजपा को चिंतित किया था।

सवाल है कि आखिर किन वजहों से सरकार और विपक्ष के बीच इस मामले में एक परिपक्व सहमति नहीं बन पाई। अगर विपक्ष लोकसभा में उपाध्यक्ष पद मिलने पर अध्यक्ष के लिए समर्थन देने को तैयार था, तब सरकार इस पर सहमत क्यों नहीं हुई? सच यह है कि लोकसभा अध्यक्ष का पद बेहद महत्त्वपूर्ण होता है और कई बार बहुत नाजुक स्थितियों में उनका फैसला निर्णायक होता है। सदन में बहुमत साबित करने, दल-बदल कानून लागू करने और सदन के सदस्यों की योग्यता और अयोग्यता का फैसला लेने के मसले पर लोकसभा अध्यक्ष के रुख पर बहुत कुछ निर्भर करता है। यह छिपा नहीं है कि पिछली लोकसभा के दौरान अध्यक्ष के रवैये को लेकर विपक्षी दलों के बीच खासा असंतोष देखा गया। जबकि यह पद लोकसभा को संचालित करने के लिहाज से जितना महत्त्वपूर्ण होता है, उतना ही जरूरी यह है कि अध्यक्ष पर सदन के सभी जनप्रतिनिधियों का यह विश्वास हो कि किसी भी स्थिति में वे पक्षपात और पूर्वाग्रह के बिना सबके प्रति न्यायपूर्ण रुख अपनाएंगे। इसे सुनिश्चित करना सरकार की भी जिम्मेदारी होती है। अगर लोकसभा में जरूरी मुद्दों पर सभी संबंधित सदस्य अपनी उपस्थिति दर्ज कर पाते हैं तो इससे लोकतंत्र की खूबसूरती ही बढ़ेगी।

लापरवाही की कीमत

शहरों-महानगरों में बने व्यावसायिक परिसरों या माल में जाने वाले लोग आमतौर पर सामान की खरीदारी के अलावा वहां होने वाली अलग-अलग गतिविधियों के प्रति भी आकर्षित होते हैं। इनमें पैसा चुका कर खेले जाने वाले कई तरह के खेल भी शामिल होते हैं, जो खासतौर पर बच्चों का ध्यान खींचते हैं। इन परिसरों में सुरक्षा के उच्च मानकों का पालन करने का दावा किया जाता है। मगर चंडीगढ़ के एक मशहूर माल में जिस तरह 'खिलौना ट्रेन' के अचानक पलट जाने से एक बच्चे की जान चली गई, उससे यही साबित हुआ है कि लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए ऐसी जगहों का प्रबंधन समूह कारोबारी गतिविधियां संचालित तो करता है, लेकिन उसके सुरक्षित होने को लेकर पर्याप्त फिक्र नहीं की जाती। माल में 'खिलौना ट्रेन' में बच्चों को बिठा कर उसे चलाते हुए इसका ध्यान रखने की जरूरत नहीं समझी गई कि गाड़ी में बैठे बच्चों की सुरक्षा कैसे सुनिश्चित करनी है। नतीजतन, एक जगह मुड़ते हुए गाड़ी पलट गई और उसके डिब्बे से ग्यारह वर्ष के एक बच्चे के सिर में इस तरह चोट लगी कि उसकी जान चली गई।

साफ है कि यह प्रबंधन की जिम्मेदारी उठाने में बरती गई घोर लापरवाही है, जिसकी कीमत एक परिवार को इस त्रासद तरीके से चुकानी पड़ी। व्यावसायिक परिसरों में ऐसे मामले अक्सर सामने आते हैं, जहां मनोरंजन आदि के लिहाज से किसी खेल का संचालन किया जाता है। मगर वहां सुरक्षा इंतजामों को लेकर जरूरी सावधानी नहीं बरती जाती है, जिसका खमियाजा वहां आए बच्चों या लोगों को भुगतना पड़ता है। ज्यादा दिन नहीं बीते हैं जब गुजरात के राजकोट में एक खेल परिसर में आग लगने से कम से कम तीस लोगों की जान चली गई थी। इस तरह के हादसों के उदाहरण होने के बावजूद व्यावसायिक परिसरों में बच्चों के लिए आयोजित गतिविधियों में हर स्तर पर जरूरी सावधानी क्यों नहीं बरती जाती है? वहां कारोबार या मनोरंजन गतिविधियों के मामले में सुरक्षा या व्यवस्था संबंधी मामलों की निगरानी और उसकी जांच किसकी जिम्मेदारी है? किसी बड़े हादसे के बाद सरकार और प्रशासन के बीच जैसी सक्रियता देखी जाती है, अगर वह नियमित तौर पर पहले से हो, तो शायद ऐसी घटनाओं को समय रहते रोका जा सकता है।

असमानता के धरातल पर महिलाएं

विश्व आर्थिक मंच द्वारा हाल ही में जारी वैश्विक लैंगिक अंतर रपट 2024 में 146 देशों की सूची में भारत 129वें स्थान पर पहुंच गया है, जबकि पिछले साल यह 127वें स्थान पर था।

ज्योति सिडाना

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 से लेकर 18 तक में समता का अधिकार अधिनियम के तहत लैंगिक आधार पर भेदभाव न किए जाने को अनिवार्य बताया गया है। इसलिए भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार और नीति निर्देशक तत्त्व में महिला सुरक्षा, सम्मान, विकास और भेदभाव से बचाव के प्रावधान सम्मिलित किए गए हैं। संविधान महिलाओं को न सिर्फ समानता का अधिकार देता, बल्कि सभी राज्यों को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक प्रावधान करने का भी निर्देश देता है। संविधान लागू होने के इतने वर्षों के बाद भी जब लैंगिक अंतर रपट जारी होती है, तो कुछ और ही सच्चाई सामने आती है।

विश्व आर्थिक मंच द्वारा हाल ही में जारी वैश्विक लैंगिक अंतर रपट 2024 में 146 देशों की सूची में भारत 129वें स्थान पर पहुंच गया है, जबकि पिछले साल यह 127वें स्थान पर था। सोचने का विषय है कि आखिर ऐसे कौन से मुद्दे हैं, जो यह अंतर घटने के बजाय बढ़ता जा रहा है। शुरुआती दौर में लेखिका मेरी वोल्स्टनक्राफ्ट ने सामाजिक ढांचे की आलोचना करते हुए कहा था कि स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखा गया, वे सार्वजनिक जीवन में भी अनुपस्थित रहती हैं, अतः स्त्रियों को तार्किक मनुष्य मानते हुए स्त्री-पुरुष में बुनियादी समानता स्थापित करने के प्रयास करने चाहिए। वहीं जान स्टुअर्ट मिल भी स्त्री अधिकारों का समर्थन करते हुए कहते हैं कि स्त्री-पुरुष का संबंध आधिपत्य के बजाय सहयोग पर आधारित होना चाहिए। उन्होंने स्त्रियों की शिक्षा, नागरिकता तथा संपत्ति में समान अधिकार का भी समर्थन किया। इसमें कोई दो राय नहीं कि समाज की आधी आबादी होने के बावजूद महिलाएं हमेशा से मूलभूत अधिकारों से वंचित रही हैं। इक्कीसवीं सदी में महिलाओं की स्थिति में अनेक बदलाव हुए हैं, जिन्हें नकारा नहीं जा सकता, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, सेना, सार्वजनिक क्षेत्र, विभिन्न प्रकार के रोजगार अवसर आदि में महिलाओं की सहभागिता बढ़ी है। मगर यह भी तथ्य है कि महिलाओं के विरुद्ध अपराधों की संख्या में भी दोगुनी-तिगुनी वृद्धि हुई है। क्या यह कहा जा सकता है कि महिलाओं की प्रगति और उनके विरुद्ध होने वाले अपराधों की दर में कोई सकारात्मक सहसंबंध है?

दरअसल, महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति बढ़ती जागरूकता, निर्णय लेने की स्वतंत्रता, आर्थिक स्वायत्तता, संपत्ति में समान अधिकार, ऐसे पक्ष हैं, जिन्होंने पितृसत्तात्मक समाज के सामने चुनौती को उत्पन्न किया है। सामान्य भाषा शिक्षण में जब तक अक्षरों से बनने वाले शब्दों का सिरा फल-फूल आदि से जुड़ता है तो उसे सहजता से ग्रहण किया जाता है, लेकिन अगर ऐसे शब्द महिलाओं के अधिकार और चेतना को केंद्र में रखते हैं, तब उसके प्रति रुख सकारात्मक नहीं रहता। इससे स्पष्ट होता है कि जब तक महिलाएं दमन और आधिपत्य को स्वीकार करती हैं, तब तक वे सभ्य और संस्कारी मानी जाती हैं और जैसे ही वे अपने अधिकार या अपने विरुद्ध होने वाले दुर्व्यवहार के लिए आवाज उठाती है उन पर ही अंगुली उठा दी जाती है।

विश्व आर्थिक मंच की रपट के अनुसार भारत उन देशों में शामिल है जहां आर्थिक लैंगिक समानता सबसे कम है। यानी यहां अनुमानित अर्जित आय में तीस फीसद से कम लैंगिक समानता दर्ज की गई है। पिछले वर्ष के 127वें स्थान से 129वें स्थान पर गिरावट का कारण शैक्षिक उपलब्धि और राजनीतिक सशक्तीकरण में आई कमी को माना गया है। भारत महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के मामले में 65वें स्थान पर है और श्रमबल भागीदारी दर के मामले में 134वें और समान काम के लिए समान वेतन के स्तर पर 120वें स्थान पर है, जो पुरुषों और महिलाओं के बीच आर्थिक असमानताओं को दर्शाता है। अगर इसी गति से समानता की ओर बढ़ते रहे तो पूर्ण लैंगिक समानता हासिल करने में लगभग 134 साल और लगेंगे, जो कि समग्र विकास की राह में बड़ी बाधा बन सकता है।

> इक्कीसवीं सदी में महिलाओं की स्थिति में अनेक बदलाव हुए हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, सेना, सार्वजनिक क्षेत्र, विभिन्न प्रकार के रोजगार अवसर आदि में महिलाओं की सहभागिता बढ़ी है। मगर महिलाओं के विरुद्ध अपराधों की संख्या में भी दोगुनी-तिगुनी वृद्धि हुई है। क्या यह कहा जा सकता है कि महिलाओं की प्रगति और उनके विरुद्ध होने वाले अपराधों की दर में कोई सकारात्मक सहसंबंध है, क्योंकि महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति बढ़ती जागरूकता, निर्णय लेने की स्वतंत्रता, आर्थिक स्वायत्तता, संपत्ति में समान अधिकार, जैसे पक्ष ने पितृसत्तात्मक समाज के सामने चुनौती को उत्पन्न किया है।

देखा जाए तो महिलाओं के प्रति समाज के दृष्टिकोण में अंतर उदाहरण प्राचीन काल से ही मिलते हैं। समय के कालखंड में लिखी रचनाओं में भी पुरुषों और महिलाओं के जीवन में असमानता को स्थापित करने वाले कई आख्यान रचे गए। महिलाओं ने हमेशा अपने अधिकार छोड़े और त्याग किया, लेकिन ऐसा उदाहरण शायद इतिहास में नहीं मिलेगा, जिसमें पुरुषों ने महिलाओं के लिए कोई त्याग किया हो। इसलिए यह कहना गलत न होगा कि लैंगिक असमानता सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा रही है। हां, इतना जरूर है कि पहले महिला अपने अधिकार नहीं जानती थी और न ही उनके विरुद्ध आवाज उठाती थी, लेकिन आज की शिक्षित और आत्मनिर्भर महिला अपने अधिकारों के लिए और उनके हनन के खिलाफ आवाज उठाने लगी है। अपने प्रति हुए गलत आचरण पर चुप्पी साधने की प्रवृत्ति अब टूटने लगी है।

समाज की अनेक घटनाएं पुरुष सत्तात्मक समाज के विरोधाभासी चरित्र को उजागर करती हैं। मसलन, विवाह के लिए जीवन साथी का चयन करते समय तो धर्म और जाति को बहुत महत्त्व दिया जाता है, उसी तरह किसके हाथ का बना खाना खाना है और किसके हाथ का नहीं, यह भी ध्यान रखा जाता है, लेकिन महिला के साथ दुर्व्यवहार या शारीरिक शोषण करते समय इनमें से किसी भी बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह किस धर्म या जाति की है, या किस आयु की है। ऐसा क्यों। महिलाओं के साथ हिंसा या शोषण के मामलों में पवित्रता-अपवित्रता के मूल्य हाशिए पर क्यों चले जाते हैं। अगर समाज में परिवर्तन की दर यही रही, तो रपट में सामने आए आंकड़ों के अनुसार महिलाओं और पुरुषों में समानता लाने के लिए अभी 134 साल और लगेंगे।

पहले ही बहुत देर हो चुकी है। लैंगिक असमानता के कारण समाज अनेक जोखिमों से घिरा हुआ है। अब और देर करने की कोई गुंजाइश नहीं बची है। स्वामी विवेकानंद उन शास्त्रों की आलोचना करते हैं, जो स्त्रियों को ज्ञान प्राप्ति की अधिकारिणी नहीं मानते। उनका मानना था कि देश की संपन्नता इस बात पर निर्भर करती है कि स्त्री-पुरुष के साथ समानता का व्यवहार किया जाए। स्त्री भी उतनी ही साहसी होती है, जितना कि पुरुष। इसलिए वे मानते थे कि नारी को भी योग्य, सक्षम और कामकाजी बनाना आवश्यक है, क्योंकि देश के आर्थिक विकास में दोनों के उत्तरदायित्व समान हैं। कहा जा सकता है कि महिलाओं को राजनीतिक अधिकार दिए बिना सामाजिक व्यवस्था में सुधार संभव नहीं हो सकता और सामाजिक व्यवस्था में बदलाव हुए बिना उनका आर्थिक सशक्तीकरण सही अर्थों में आकार नहीं ले सकता। इन सबको वास्तविकता के धरातल पर उतारने के लिए गांधीजी के सुझाव पर अमल करना जरूरी है कि समाज का सकारात्मक परिवर्तन व्यक्ति के हृदय परिवर्तन से ही संभव है।

ज्ञान के पन्ने

पावनी

अक्सर लोग अपने आप से तरह-तरह के सवाल करते हैं कि उनका यह जीवन ऐसा या वैसा है तो आखिर किसलिए है। कुछ लोग सोचते हैं कि आखिर वे कौन हैं, उनका इस जगत में क्या स्थान है। व्यवहार मनोवैज्ञानिक सप्रमाण यह कहते हैं कि इस दुनिया के बहत्तर फीसद लोग लगभग इसी तरह का चिंतन करते हैं। इन सवालों का जवाब हमको मिलता है किताबों में। किताब एक ऐसी तिजोरी है, जिसमे बेहिसाब दौलत भरी पड़ी है। इसे पढ़कर जो भी इस संपदा को पा लेता है, वह सबसे बढ़कर धनवान बनता है। जिज्ञासा शांत होने पर अनमोल धन यानी संतोष धन मिलता है।

कहा भी गया है कि 'जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान।' किताब एक चमत्कार तो करती ही है, वह पढ़ने वाले में हौले-से एक जादुई खुशी तरंगित कर देती है कि वह उदासी और अवसाद से बाहर निकलकर एक संपूर्ण मनुष्यता के भाव में बहने लगता है। इसलिए एक पुस्तक पढ़ना बिल्कुल वैसा ही है जैसे किसी अंतरंग मित्र से गपशप करना। अच्छी और उपयोगी पुस्तक का ज्ञान व्यक्ति को नई सीमाओं तक पहुंचने का जरिया बनाता है। जब व्यक्ति पुस्तक को पढ़ने के साथ गुन भी लेता है, तब वह एक अद्भुत ऊर्जा को महसूस करता है और अपनी सीमाओं से संघर्ष करता है। वह अपनी दैहिक और मानसिक सीमाओं को पार करने का कौशल विकसित करता है। इसके बाद, व्यक्ति नए स्तरों को प्राप्त करने के लिए एक नया आत्मविश्वास और क्षमताएं प्राप्त करता है। इस लिहाज से किताब खुशी और संतोष के अलावा संघर्ष के लिए साहस को ताकत देती है। महात्मा गांधी ने जान रस्किन की 'अनटु द लास्ट' पढ़कर अपने भीतर एक अनोखा परिवर्तन महसूस किया था, जिसे उन्होंने 'सर्वोदय' के रूप में रूपांतरित किया और एक शिक्षण उपकरण के रूप में उपयोग करना चुना। इसी तरह लियो टाल्स्टाय की पुस्तक 'द किंगडम आफ गाड इज विदइन यू' से गांधीजी काफी प्रभावित हुए थे और उन्होंने मानवता की रक्षा के लिए अहिंसा को विरोध का शस्त्र बनाया। दक्षिण अफ्रीका में संघर्ष के केंद्र के रूप में स्थापित आश्रम का नाम भी उन्होंने टाल्सटाय आश्रम रखा।

आजकल कुछ विद्यालय भी पढ़ने को एक जरूरी गतिविधि बना रहे हैं और अकबर-बीरबल और तेनालीराम की पुस्तकों को विद्यार्थियों के ग्रीष्मकालीन अवकाश के अध्ययन के लिए शामिल कर रहे हैं। कारण यह कि इन किताबों में सहज ही जीवन की छोटी-बड़ी समस्या का सरल समाधान मिल जाता है। साथ ही तत्कालीन भारत के माहौल और आचार-व्यवहार की झलक भी मिलती है। पुस्तकें मनुष्य के नैतिक मूल्यों को पोषित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। संतों और प्रसिद्ध लोगों द्वारा लिखी गई किताबें हमें एक अच्छा इंसान बनने के सही नैतिक मूल्यों के बारे में सिखाती हैं। अगर 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' जैसी पौराणिक कृतियां जीवन का नैतिक संस्कार सिखाती हैं तो 'सिंहासन बत्तीसी' और 'चंद्रकांता संतति' जैसी किताबें हमें जीवन के अनेक अनदेखे पहलू भी दिखा देती है। उसी तरह 'हैरी पाटर' और 'सिंड्रेला' जैसी किताबें हमें जीवन की कड़वी सच्चाइयों से दूर खूबसूरत दुनिया के बारे में सपने दिखाती हैं।

किताबें हर बच्चे के लिए बचपन का असली खजाना हैं। ये अच्छाई और बुराई के बीच फर्क करना भी सिखाती हैं। एक इंसान के शौक कई तरह के हो सकते हैं। उनमें से कुछ किताबों के शौक रखने वाले लोग होते हैं जो कभी अकेलापन महसूस नहीं करते और अपने जीवन में एक बेहतर दोस्त होने का अनुभव करते हैं। किताब का लेखक अपने जीवन भर के सफर और अपने ज्ञान को शब्दों में पिरो कर उसे एक किताब का रूप देता है। ऐसे अनेक लेखकों के अनेक तरह के विचार हमारे सामने एक किताब के रूप में होता है, जिसे पढ़कर मनुष्य के मस्तिष्क में सकारात्मक और शांत विचारों की धारा प्रवाहित होने लगती है। चीजों को गहराई से अनुभव करने में किताबों की भूमिका किसी के छिपी नहीं है।

दुनिया मेरे आगे

> एक तरह से किताब औषधि का भी काम करती है जो जीवन की हर छोटी-बड़ी दुविधा से बाहर आने का रास्ता क्षण भर में दिखा देती है। किताबों में लिखे शब्दों को लेखक अपने अंदाज में लिखता है, जिसे कविता, लेख, शायरी या कहानी के रूप में पढ़ा या सुना जाता है, मगर शब्दों का अर्थ वही होता है।

एक तरह से किताब औषधि का भी काम करती है जो जीवन की हर छोटी-बड़ी दुविधा से बाहर आने का रास्ता क्षण भर में दिखा देती है। किताबों में लिखे शब्दों को लेखक अपने अंदाज में लिखता है, जिसे कविता, लेख, शायरी या कहानी के रूप में पढ़ा या सुना जाता है, मगर शब्दों का अर्थ वही होता है। हालांकि यह किसी लेखक के अंदाज पर निर्भर करता है कि वह किस तरह अपनी बातों को लोगों के सामने रखता है। इसलिए जरूरी है कि युवाओं को किताबों को पढ़ने के लिए प्रेरित किया जाए, जिसके माध्यम से युवा या अन्य वर्ग के लोग एक दूसरे के विचारों से रूबरू हो सकें। शायद यही वजह है कि महान कथाकार और कहानी सम्राट प्रेमचंद की लिखी हुई कहानियां आज भी दुनिया-भर में बहुत अधिक पढ़ी जाती हैं। हर इंसान अपनी मनोभावना का प्रतिबिंब कहीं देखना चाहता है। ओ हेनरी की हर कहानी में सामाजिक माहौल पढ़कर पाठक को वह कहानी अपनी-सी लगती है।

इसीलिए किताबें हमारे जीवन की एकमात्र ऐसी अनमोल वस्तु है जो हमें खुद से रूबरू कराती है। किताब बिना बोले हमारे मन में एक आवाज भर देती है। इसके माध्यम से हम सही ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं, जिसकी कोई सीमा नहीं है। शब्दों का अर्थ हमारे जीवन को एक दिशा देने का काम करता है या यों कहें कि किताबों में किसी व्यक्ति के जीवन को बदलने तक की क्षमता होती है। ऐसी तमाम पुस्तकें हैं जो जीवन की अनेक परतें खोलती हैं। मन के लिए साबुन का काम करती हैं।

साझेपन के बजाय

भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम होती है और भाषाई विविधता किसी भी देश के सामर्थ्य का द्योतक और पूंजी होती है। यह छिपा तथ्य नहीं है कि आज बाजारवाद और तकनीक एक दूसरे के सहचर बने हुए हैं और लोगों के जीवन में अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। यहां तक कि हर काम का स्वचालित होना या डिजिटल होना मानक बना हुआ है। कृत्रिम बौद्धिकता का आरेख ऊर्ध्वगामी है। ध्यान रखा जाना चाहिए कि तकनीक मनुष्य के जीवन में गुणात्मक परिवर्तन लेकर आई है। लेकिन वैश्वीकरण के इस मुकाम पर भाषाई वर्चस्व का होना, इसके स्याह पक्ष को उजागर करता है। जिसका खमियाजा उन सीधे-सादे लोगों को भुगतना पड़ता है जिनकी भाषाई कुशलता नियत स्तर की नहीं होती। आर्थिक-धोखाधड़ी इसका ज्वलंत उदाहरण है। लोकतंत्र सिद्धांततः विविधता और न्याय का हिमायती होता है। जबकि 'वर्चस्व' शक्ति के प्रदर्शन को रेखांकित करता है जो अन्याय और शोषण को जन्म देता है। पिछली दो सदियों से भारत को सिर्फ 'अवसर' के रूप में देखा, समझा और पोषित किया गया है। नतीजतन आज विश्व में हम सबसे बड़े उपभोक्ता बनकर रह गए हैं।

– जोगिंद्र भारद्वाज, नरेला, दिल्ली

भविष्य से खिलवाड़

परीक्षाओं में धांधली देखी जा रही है, उसके परिणाम खतरनाक होंगे। परीक्षाओं में हो रही धांधलियों से मेहनतकश और मेधावी विद्यार्थियों को परेशान होना पड़ता है और बेईमान छात्र लाभ उठा लेते हैं। वहीं धांधलीबाज आर्थिक लाभ के लालच में हजारों विद्यार्थियों का भविष्य बिगाड़ रहे हैं। इस धंधे में भी माफिया पनप चुका है, जो नीट की धांधली में उजागर हो चुका है। बिना शुचिता और पारदर्शिता के होने वाली परीक्षा और नियुक्त अयोग्य इंजीनियर, डाक्टर और वैज्ञानिक आदि व्यक्तियों से देश के विकास में सहयोग की अपेक्षा करना व्यर्थ होगा। अदालत में विचाराधीन मामलों में कब, कितनी और कैसी राहत मिलेगी, कुछ कह नहीं सकते। जरूरत है दोषी को दंडित और मेधावी छात्रों को आवश्यक राहत देने की तथा प्राथमिकता से धांधलियों को रोकने की, अन्यथा इसके खतरनाक परिणामों की कल्पना करना मुश्किल है।

– बीएल शर्मा 'अकिंचन', उज्जैन

तनाव के मोर्चे

वर्ष 2024 के आम चुनाव में भाजपा के बहुमत से दूर रह जाने में विद्यार्थियों के बीच व्याप्त असंतोष एक महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है। पर अब भी विद्यार्थियों के हित को ज्यादा महत्त्व नहीं दिया जा रहा है। कुछ समय पहले राष्ट्रीय परीक्षा एजंसी यानी एनटीए द्वारा आयोजित होने वाली परीक्षा नीट के प्रश्न पत्र में हुई धांधली ने फिर से सरकार पर सवालिया निशान खड़ा कर दिया है। वहीं एनटीए यूजीसी नेट की परीक्षा में भी ऐसी ही धांधली होना यह सवाल पैदा करता है कि आखिरकार सरकार विद्यार्थियों के मुद्दों को गंभीरता से लेते हुए कार्रवाई क्यों नहीं कर रही है। सही है कि नए और प्राचीन महत्त्व के नालंदा विश्वविद्यालय का लोकार्पण हाल ही में हो गया, लेकिन जो छात्र अपने घर से दूर रहकर प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करते हैं. उनके परीक्षा का रद्द होना जहां उनके भीतर मानसिक तनाव पैदा करता है, वहीं उन्हें सामाजिक हाशिये पर भी पहुंचा देता है।

– करुणा नयन चतुर्वेदी, दिल्ली विवि

बाजार में पानी

आज बोतल बंद पानी का चलन हो गया है। आमतौर पर अधिकारियों की बैठक में हरेक के आगे पानी की बोतल रखी रहती है। दूसरी ओर, सड़कों पर आम लोगों को पानी खरीद कर पीना पड़ता है। आज बहुत सारे लोग आरओ का पानी पीते हैं। जहां एक ओर पानी बचाने के लिए लोगों को जागरूक किया जा रहा है, लोग पानी का मोल समझ रहे हैं, वहीं लोग पानी की बर्बादी का कारण भी बने हैं। नल में लगे पाइप से रास्ता या सड़क धोना, समरसेविल पंप खोल कर बंद करना भूल जाना, गाड़ियां धोना दरअसल पानी बर्बाद करने के तरीके है। जरूरत के वक्त पानी न मिलने पर पानी का महत्त्व आसानी से समझा जा सकता है। पानी की बोतलों की बिक्री बंद होनी चाहिए। लोगों को पीने के लिए पानी मुफ्त मिलना चाहिए।

– दिलीप कुमार गुप्ता, बरेली

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

https://t.me/AllNewsPaperPdf

www.readwhere.com

हज त्रासदी

तैयारी जरूरी

हज यात्रा में तीर्थयात्रियों की दु:खद मौतों के बाद बेहतर तैयारियों तथा सऊदी अरब सरकार की बेहतर प्रतिक्रिया की आवश्यकता उजागर होती है। यह वर्ष सर्वाधिक दु:खद हज यात्राओं में से एक रहा है जब 98 भारतीय हाजियों की मौत की पुष्टि हो गई है। विदेश मंत्रालय ने स्पष्ट किया है कि इन मौतों का कारण सऊदी अरब के मक्का में चलने वाली अभूतपूर्व लू थी। यह त्रासदी हालिया वर्षों में सर्वाधिक भयानक गर्मी के कारण हुई जिसमें तापमान 45 डिग्री सेल्सियस से ऊपर चला गया जिससे विभिन्न देशों के 1,000 से अधिक हज यात्रियों की मृत्यु हो गई। उच्च तापमान और अत्यधिक नमी के कारण अनेक तीर्थयात्रियों में गर्मी के कारण बीमारियां पैदा हो गईं। इनका असर खासकर पहले से बीमारियों का शिकार व वृद्ध लोग हुए। लू लगने तथा निर्जलीकरण के कारण चिकित्सा सुविधाओं पर बहुत बोझ पड़ा जिसके कारण बड़ी संख्या में लोग बीमार हुए या मर गए। पीड़ितों में मिस्र, इंडोनेशिया व जार्डन के नागरिक बड़ी संख्या में थे। इससे इस त्रासदी का व्यापक वैश्विक प्रभाव पता चलता है और हज यात्रियों के लिए बेहतर सुरक्षा व्यवस्थाओं की आवश्यकता उजागर होती है। हज यात्रा में हर साल लाखों मुसलमान मक्का आते हैं। हालांकि, सऊदी अरब हज यात्रियों की सुरक्षा के व्यापक प्रबंध करता है, पर इसके बावजूद अनेक त्रासद घटनायें हो जाती हैं। तीर्थयात्रियों की मौतों के पीछे स्वास्थ्य संबंधी मुद्दे बड़ा कारण हैं जिनमें गर्मी के कारण पैदा बीमारियां भी शामिल हैं। भयानक गर्मी और शारीरिक थकान के कारण निर्जलीकरण हो जाता है, लू लग जाती है तथा अन्य समस्यायें पैदा होती हैं। 2018 में भी दर्जनों हज यात्री भयानक गर्मी के कारण मर गए थे जो इस मौसम में सऊदी अरब में सामान्य बात है।

लू के विनाशकारी प्रभाव के कई कारण हैं। पहला, जलवायु परिवर्तन निरंतर स्पष्ट होता जा रहा है। इसके कारण अक्सर वैश्विक तापमान बढ़ने की घटनायें होती हैं तथा भयानक लू चलती है। इससे खासकर मध्यपूर्व में मौसम बहुत खराब हो जाता है तथा ऐसे आयोजन जानलेवा साबित हो सकते हैं। दूसरा, बड़ी संख्या में हज यात्रियों को सुविधायें देने के लिए ढांचागत संरचना में भारी निवेश के बावजूद मौसम का बहुत खराब होना इन सुविधाओं पर भारी पड़ता है। इससे उपयुक्त चिकित्सा देखभाल तथा शीतलन समाधान प्रदान करने में बाधा आती है। इसके साथ ही बहुत से हज यात्री भयानक गर्मी से निपटने के लिए ठीक से तैयार नहीं होते हैं। बहुत से लोगों को इसके बारे में समुचित जानकारी नहीं थी या वे इतने खराब मौसम से निपटने में अक्षम थे। उनको समुचित मात्रा में निर्जलीकरण से बचाने तथा अन्य रक्षात्मक उपायों की कमी थी जिसके कारण बड़ी संख्या में हज यात्रियों की मौत हुई। भविष्य में ऐसी त्रासदियों से बचने के लिए अनेक उपाय करने की आवश्यकता है। मौसम की पूरी सतर्कता से निगरानी की जानी चाहिए तथा सही समय पर लू संबंधी जानकारी से हज यात्रियों व अधिकारियों को बेहतर तैयारी करने का अवसर मिलेगा। लू की चेतावनियों की जीवन्त व्यवस्था तथा आवश्यक सावधानियों के बारे में महत्वपूर्ण सूचनायें देने से भविष्य में जोखिम को घटाया जा सकता है। इसके साथ ही ढांचागत संरचना में व्यापक स्तर पर सुधार की जरूरत है। इसमें ज्यादा छायादार क्षेत्रों तथा 'कूलिंग सेंटरों' की स्थापना शामिल है। इसके साथ ही इस बात के प्रयास आवश्यक हैं कि हज यात्रियों में निर्जलीकरण न होने पाए, उनको समुचित मात्रा में पानी और द्रव पदार्थ दिए जाएं ताकि उनको गर्मी संबंधी स्वास्थ्य मुद्दों से सुरक्षा दी जा सके।

भ्रष्टाचार का विकास पर प्रभाव

वैश्विक स्तर पर भ्रष्टाचार-उन्मूलन के अनेक प्रयासों के बावजूद व्यवस्था में भ्रष्टाचार बना हुआ है। इससे भारत में लोकतंत्र का भविष्य तथा उसका सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य प्रभावित होता है।

प्रफुल्ल गोराडिया
(लेखक, पूर्व राज्यसभा सदस्य हैं)

वैश्विक स्तर पर भ्रष्टाचार-उन्मूलन के अनेक प्रयासों के बावजूद व्यवस्था में भ्रष्टाचार बना हुआ है। इससे भारत में लोकतंत्र का भविष्य तथा उसका सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य प्रभावित होता है। कुछ दिन पहले मेरे एक अमेरिकन परिचित कोलकाता जाने के रास्ते पर दिल्ली से गुजर रहे थे। उन्होंने पिछले दस साल में भारत द्वारा की गई उल्लेखनीय प्रगति की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने स्वीकार किया कि भारत का विकास और प्रगति किसी भी दृष्टिकोण से आश्चर्यजनक है। लेकिन वे इस बात से बहुत परेशान थे कि यही भारतीय इतने अधिक भ्रष्टाचार को कैसे सहन करते हैं। भारत में भ्रष्टाचार बहुत व्यापक है और इसका व्यापक स्तर पर लोगों की सोच पर प्रभाव पड़ता है। उनको पता लगा कि भारत में कई राज्यों के मुख्यमंत्री वर्तमान समय में जेलों में बंद हैं। उन्होंने मुझे बताया, अमेरिका में लोग इस बात पर आश्चर्य करते हैं कि भारतीय जनता इतने बड़े स्तर पर दुर्व्यवहार कैसे सहन करती है और इसके कारण दुनिया भर में उसका सम्मान गिरता है। इसकी तुलना में दूसरे देशों पर गौर करें तो स्पष्ट होगा कि कुछ साल पहले जापान के एक प्रधानमंत्री को जेल जाना पड़ा था। लेकिन इस घटना से जापानी जनता बहुत व्यथित हुई और इसके बाद से, जहां तक हमें पता है ऐसी घटना फिर दुहराई नहीं गई। मेरे अमेरिकन परिचित एक तथ्य पर जोर दे रहे थे कि भारत में भ्रष्टाचार लगातार जारी रहने और इसकी व्यापक स्तर पर उपस्थिति के बावजूद आम जनता में इसके प्रति कोई शर्म या परेशानी की भावना नहीं है।

ऐसा नहीं कि दुनिया में कहीं और भ्रष्टाचार नहीं है। पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति तथा एक बार फिर 2024 में राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार डोनाल्ड ट्रंप को न्यूयार्क की एक अदालत ने 'फेलोनी' या झूठ बोलने का दोषी पाया है। यह कदाचार से ज्यादा गंभीर अपराध है। कुछ दिनों पहले वर्तमान राष्ट्रपति जो बाइडेन के पुत्र हंटर बाइडेन को नशीले पदार्थों के उपयोग के बारे में तथ्य छिपाने का दोषी पाया गया है। इसकी तुलना में भारत का रिकार्ड न केवल सहन सीमा में है, बल्कि यहां दागी मुख्यमंत्रियों और राजनेताओं को 'सजा' भी मिली है जो अपने आप में अत्यधिक उल्लेखनीय है। बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव को जानवरों के लिए निर्धारित सरकारी बजट से 600 करोड़ रुपये गबन का दोषी पाया गया। यह ऐसे देश में हुआ जहां लोग गाय को माता मान कर उसकी पूजा करते हैं। तमिलनाडु की पूर्व मुख्यमंत्री स्वर्गीय जयललिता एक समय सिनेमा की लोकप्रिय नायिका थीं, पर उनको भी भ्रष्टाचार के मामले में जेल जाना पड़ा। हाल ही में भ्रष्टाचार के आरोपों में झारखंड के पूर्व मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन तथा दिल्ली के वर्तमान मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल को जेल जाना पड़ा।

हेमंत सोरेन तथा अरविंद केजरीवाल पर हजारों करोड़ रुपये के भ्रष्टाचार के आरोप हैं। ऐसे में यह सवाल उठता है कि क्या इन नेताओं को अपना अस्तित्व बचाए रखने, अपनी सरकारें चलाने या चुनाव लड़ने के लिए पैसे की आवश्यकता के कारण भ्रष्टाचार करना पड़ा? इसका जवाब निश्चित रूप से 'नहीं' है। लगता है कि उन्होंने लालच के कारण हजारों करोड़ का भ्रष्टाचार किया। आश्चर्यजनक है कि इन लोगों को अपने किए पर कोई पछतावा तक नहीं है, जैसे कि उन्होंने कुछ भी गलत नहीं किया हो।

पिछले वर्षों में मुझे अनेक सजा प्राप्त चोरों और अपराधियों से मिलने का मौका मिला। इनमें से कुछ ने विरोध प्रकट करते हुए कहा कि उनको 'जरूरत से ज्यादा दंड मिला'। लेकिन इनमें से किसी ने पश्चाताप की जरा भी भावना नहीं व्यक्त की, न ही उन्होंने इस बात पर कोई अफ्सोस किया कि उनको ऐसा काम नहीं करना चाहिए था। विडंबना है कि भारत में भ्रष्टाचार में लिप्त पाए गए या इसके आरोपित लोग बार-बार न केवल चुनाव लड़ते रहे, बल्कि जोश के साथ चुनाव प्रचार भी करते रहे। अक्सर इनमें से अनेक प्रबल बहुमत से चुनाव जीतने में भी सफल हुए। इस परिघटना से यह संदेश भी गया कि शायद मतदाताओं को उनके 'भ्रष्टाचारी कृत्यों' की जरा भी चिन्ता नहीं है। ऐसे में यह सवाल भी स्वाभाविक रूप से उठता है कि जनता में भ्रष्टाचार की इस परोक्ष या प्रत्यक्ष स्वीकार्यता के प्रति समाज विज्ञानी क्या कहते हैं? आखिर ऐसी परिघटना का क्या कारण है? अधिकांश मतदाताओं के ईमानदार होने की संभावना है या कम से कम वे दूसरे लोगों से जीवन में ईमानदारी के व्यवहार की उम्मीद करते हैं। लेकिन आश्चर्य है कि फिर वे ऐसे नेताओं को कैसे सहन करते हैं जो सार्वजनिक धन का बड़ा हिस्सा हड़प कर उसे निजी उपयोग में लाते हैं? क्या मतदाता यह समझ नहीं पाते कि भ्रष्टाचारी नेता जो पैसा हड़प लेते हैं वह स्वयं उनकी कठोर परिश्रम से कमाई गई संपत्ति है?

स्वर्गीय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने भ्रष्टाचार को यह कह कर सही ठहराने का प्रयास किया था कि यह 'वैश्विक परिघटना' है। उन्होंने पूछा था, 'दुनिया का कौन सा देश भ्रष्टाचार से मुक्त है?' इंदिरा गांधी के समय के अनेक नेताओं ने इसे बेलगाम होकर सार्वजनिक संपत्ति हड़पने के लिए उनकी अनुमति मान लिया। इंदिरा गांधी के बड़े बेटे राजीव गांधी जब प्रधानमंत्री थे तब उनके ऊपर बोफोर्स तोपें खरीदने के मामले में भ्रष्टाचार का बड़ा आरोप लगा था। इसके बाद डा. मनमोहन सिंह के नेतृत्व में बनी कांग्रेस नीत संप्रग सरकार पर कार्यकाल के दस साल में भयानक भ्रष्टाचार के अनेकों आरोप लगे थे।

मनमोहन सरकार की पहचान भ्रष्टाचार तथा एक खास धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय का अंतहीन तुष्टीकरण बन गई थी। यदि उनके किसी मंत्री पर भ्रष्टाचार का आरोप सिद्ध होता या उसे जेल जाना पड़ता तो मनमोहन सिंह यह कह कर अपना बचाव करते थे कि उसका संबंध उनके गठबंधन साझीदारों से है और वह उनकी पार्टी का नहीं है। भले ऐसे में वे क्या कर सकते थे? इसके साथ ही उनको यह सार्वजनिक घोषणा करने में कोई तकलीफ नहीं हुई थी कि 'देश के संसाधनों पर मुसलमानों का पहला हक है और इस प्रकार स्वाभाविक रूप से उनको 15 प्रतिशत संसाधन आबंटित कर दिए जाने चाहिए।' भले ही उनका यह कृत्य 'भ्रष्टाचार' के दायरे में न आता हो, पर निश्चित रूप से यह नैतिक पतन की पराकाष्ठा है।

इन सबका खासकर भारत में लोकतंत्र के भविष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है? सौभाग्य से पिछले दस साल से भारत को एक ऐसा प्रधानमंत्री मिला है जिसने 'भ्रष्टाचार के खिलाफ अभियान' में कभी रियायत नहीं बरती है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का यह कथन बहुत लोकप्रिय हुआ, 'न खाऊंगा, न खाने दूंगा।' प्रधानमंत्री मोदी अपने इस कथन के प्रकाशवान प्रतीक बने हुए हैं। उनके द्वारा पिछले दस साल में उठाए गए अनेक कदमों और उपायों से भ्रष्ट राजनेताओं और अधिकारियों का जीना हराम हो गया है। उनके इन उपायों और कदमों में नोटबंदी, फर्जी कंपनियों की पहचान और उनको समाप्त करना, अस्तित्वहीन फर्जी एनजीओ समाप्त करना तथा वस्तु एवं सेवाकर-जीएसटी के माध्यम से देश की कर व्यवस्था को सुचारु बनाना शामिल है। उनके सतत प्रयासों से अनेक भ्रष्टाचारी नेता और अधिकारी जेल भेजे गए हैं। इससे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की 'वैश्विक नेता' के रूप में स्वीकार्यता बढ़ी है और उनका सभी सम्मान करते हैं।

यह कोई संयोग नहीं है कि आज भारत दुनिया की सबसे बड़ी पांचवीं अर्थव्यवस्था बन गया है और यह तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की ओर बढ़ रहा है। इसका सीधा संबंध भ्रष्टाचार के खिलाफ मोदी के लगातार और अथक युद्ध से है। लेकिन यह भी सच है कि पहले की सरकारों में गहराई तक व्याप्त भ्रष्टाचार का आदी रहा जनता का एक हिस्सा आजकल बहुत दु:खी है। पहले ऐसे तत्वों बिना प्रयास के पैसे बनाने, बिना किसी जवाबदेही के पद या शक्ति का लाभ उठाने का अवसर मिलता था और उनको दंड का भी कोई भय नहीं था। ऐसे लोगों को अचानक ऐसी दुनिया का सामना करना पड़ रहा है जिसके वे आदी नहीं थे। वे इसे पसंद नहीं करते हैं और स्वयं को उत्पीड़ित अनुभव कर रहे हैं। इस चुनाव में भाजपा की सीटें घटना इसी प्रतिक्रिया का भी परिणाम है।श के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण होगा।

आध्यात्मिक क्रियाओं की शक्ति

"हम आध्यात्मिक गतिविधियों के प्रभावों का अनुभव कर सकते हैं, यदि हम उन्हें करते हैं। ऐसी कई गतिविधियां हैं।"

अजीत बिश्नोई
(लेखक आध्यात्मिक शिक्षक हैं)

हमें आश्चर्य होता है या होना चाहिए कि क्या हम आध्यात्मिक गतिविधियों के प्रभावों का अनुभव कर सकते हैं, यदि हम उन्हें करते हैं। ऐसी कई गतिविधियां हैं। मैंने दस सबसे प्रमुख गतिविधियों को चुना है ताकि यह विस्तार से बता सकूं कि वे हमारे लिए क्या करती हैं। इसके अतिरिक्त, मैं यह बताने का प्रयास करूँगा कि वे समग्र रूप से क्या करती हैं, भले ही हम उनमें से कुछ को ही चुनें, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वे हमारे लिए उपयुक्त हैं या नहीं। उन्हें चुनने और उन्हें लंबे समय तक करने की हमारी क्षमता दोनों में हमारी प्रकृति निर्णायक कारक हैं। आखिरकार, उनका प्रभाव मीठा खाने और उसके स्वाद का आनंद लेने जैसा स्थूल नहीं है। सभी आध्यात्मिक गतिविधियाँ हम पर सूक्ष्म प्रभाव छोड़ती हैं, लेकिन उनका अनुभव किया जा सकता है। केवल एक शर्त है खुले दिमाग का होना। नकारात्मक या आलोचनात्मक रवैया उनके प्रभावों को महसूस करने से रोकेगा।

प्रार्थना से शुरू करें, ऐसा करना सबसे स्वाभाविक है, बच्चे भी परेशान होने पर या किसी चीज की जरूरत होने पर प्रार्थना करते हैं। क्या भगवान जवाब देते हैं? वे निश्चित रूप से जवाब देते हैं, लेकिन जरूरी नहीं कि हम जिस तरह से चाहते हैं, वैसा ही हो, क्योंकि हमें वह मिलना चाहिए जो हम चाहते हैं।

हमारा प्रयास व्यर्थ नहीं जाएगा। अगला है याद रखना, हम सभी करते हैं। यह बहुत स्वाभाविक है; भगवान हमारे जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा हैं, कम से कम हम भारतीयों के लिए – जो धन्य हैं। क्यों? क्योंकि बचपन से ही आध्यात्मिकता हमसे दूर नहीं होती; यह हमारे खून में है। इसका इनाम प्रार्थना करने जैसा ही होगा। तीसरा है मंदिर में देवता के दर्शन करना। हममें से बहुत से लोगों के घर में पूजा घर है, जहाँ

हम आसानी से दर्शन कर सकते हैं। हममें से बाकी लोगों के पास, कम से कम हममें से ज़्यादातर के पास भगवान के अवतारों की तस्वीरों वाले कैलेंडर हैं। इसका तुरंत फ़ायदा यह होता है कि हम अच्छा और आशावान महसूस करते हैं। भगवान को देखना इतना अद्भुत है। चौथी सबसे आम आध्यात्मिक गतिविधि भगवान के नाम या सिर्फ़ ओम का जाप करना है। इसका इतना असर होता है कि एक बार शुरू करने के बाद, व्यक्ति राम जैसे नामों को दोहराता रहता है। हम भारतीय लगभग हमेशा 'नमन' करते हैं, ख़ास तौर पर, जब हम किसी देवता के सामने होते हैं। यह क्या करता है? सबसे बढ़िया चीज़ जो यह करता है, वह है हमारे अंदर विनम्रता पैदा करना, जिससे हमारा अहंकार नियंत्रित रहता है। हममें से बहुत से लोग भगवान का शुक्रिया अदा करते हैं अगर हमारे जीवन में कुछ अच्छा होता है। यह हमें और अच्छे समय का हकदार बनाता है, और वे निश्चित रूप से आते हैं। शास्त्रों को पढ़ना इतना आम नहीं है, लेकिन इतना दुर्लभ भी नहीं है। हनुमान चालीसा बहुत लोकप्रिय है; मैंने हनुमान चालीसा को याद करके इस जीवन में अपनी आध्यात्मिक यात्रा शुरू की।

एक और लोकप्रिय आध्यात्मिक गतिविधि मंदिरों या अन्य स्थानों पर सुनना (उपदेश) है। वे हमें समझदार बनाते हैं। अंतिम है 'ध्यान' करना। इसके लाभ व्यापक रूप से ज्ञात हैं और उन्हें दोहराने की आवश्यकता नहीं है। अब आध्यात्मिक गतिविधियों को करने के समग्र लाभों की ओर मुड़ते हैं। जब हम उन्हें करते हैं, तो हम ईश्वर की संगति प्राप्त करते हैं। क्या हम उनसे जुड़ नहीं रहे हैं? आध्यात्मिक ऊर्जा हमारे अंदर प्रवाहित होगी। यह बहुत खास है, क्योंकि यह हमारी 'आत्मबल' (आंतरिक शक्ति) को बढ़ाता है।

इसके अलावा, ईश्वर हम पर ध्यान देते हैं, जैसे एक प्रिंसिपल एक प्रतिभाशाली छात्र पर ध्यान देता है। अगर हम इस मार्ग पर आगे बढ़ने में ईमानदार हैं, तो हम उनकी निगरानी में रहते हैं। भगवान हमें बढ़ावा देना शुरू करते हैं, जैसा कि उन्होंने मेरे मामले में किया। बड़ी तस्वीर की अवधारणा जड़ पकड़ रही थी। ईश्वर में आस्था बढ़ने लगी, साथ ही 'कर्मफल सिद्धांत' में भी आस्था बढ़ने लगी। मैं समझने लगा कि भाग्य क्या होता है, यानी पिछले जन्मों के संचित कर्मफल, जिनका फल अभी मिलना बाकी है। मुझे यह भी एहसास हुआ कि ईश्वर उनके आने में हस्तक्षेप नहीं करते, बल्कि उनसे सफलतापूर्वक निपटने में हमारी मदद कर सकते हैं। माया का प्रभाव कम होने लगा और 'धुंध' (अज्ञान) इतना प्रबल नहीं रहा। मैं अपने कार्यों को मनमाने ढंग से तय करने के बजाय ईश्वर से मार्गदर्शन लेने के लिए प्रोत्साहित हुआ कि मुझे क्या करना चाहिए। धर्म मेरे अंदर स्वाभाविक रूप से आने लगा, साथ ही मदद के लिए ईमानदारी से प्रार्थना करने लगा। मैं अपने दिल में जानता था कि मैं बहुत छोटा, असहाय, अज्ञानी और असुरक्षित था। केवल ईश्वर ही मदद कर सकते हैं, और उन्होंने मेरी देखभाल करना शुरू कर दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने मुझे अपने 'निमित्त' (साधन) के रूप में उपयोग करना शुरू कर दिया। मुझे आध्यात्मिक ग्रंथ लिखने के लिए प्रोत्साहित किया गया, जिसके बारे में मेरे भगवान ने मार्गदर्शन करना शुरू किया।

आप की बात

कांग्रेस का ड्रामा

2024 के लोकसभा चुनाव में विपक्ष ने एक बेहद झूठे विमर्श का प्रचार कर थोड़ी-बहुत सफलता अवश्य पाई, पर वह मोदी को प्रधानमंत्री बनने से नहीं रोक पाया। कांग्रेस के नेतृत्व वाला विपक्ष अभी भी संविधान की प्रतियां हाथों में लेकर संसद परिसर में संविधान बचाओ और लोकतन्त्र बचाओ के नारे लगाकर देश को भ्रमित कर रहा है। जिनके पूर्वजों ने 25 जून 1975 को अपनी सत्ता बचाने के लिए देश पर आपातकाल थोपा था आज वही निर्लज्जता के साथ गला फाड़कर संविधान और लोकतन्त्र बचाने निकले हैं। इन्दिरा गांधी द्वारा थोपे गए आपातकाल में प्रेस का गला घोटा गया था, सभी मानवाधिकार छीन लिये गये थे तथा विरोधियों को जेलों में ठूंस दिया गया था। विरोधियों के नाखून तक उखड़वा दिये थे। मीसा जैसे कानून की स्मृति में लालू यादव ने अपनी एक बेटी का नाम ही मीसा रख दिया था। आज वही मीसा राहुल के साथ है। आज उसी प्रधानमंत्री का पौत्र संविधान बचाने निकला है। कांग्रेस 2019 के चुनाव को अंतिम चुनाव कहकर मतदाता को बहका रही थी। 2024 के चुनाव को भी कांग्रेस ने अन्तिम चुनाव कहा, पर वह सैकड़े तक नहीं पहुंच सकी। वास्तव में लोकतंत्र व संविधान के बजाय विपक्ष अपने अस्तित्व पर खतरा महसूस करते हुए यह नौटंकी कर रहा है।

– **नरेन्द्र टोंक,** मेरठ

थोथी विपक्षी मानसिकता

संसद में विपक्ष का नया नजारा जनता को देखने को मिला। सारे विपक्षी संविधान की प्रति लेकर संसद भवन में शपथ के दौरान दिखे। यह उनकी थोथी मानसिकता ही दर्शाती है। उनसे ही पूछा जाए कि क्या पिछले 10 वर्षों तक देश संविधान के तहत नहीं चला? अगर संविधान के अनुकूल नहीं चलता तो उन्हें याद कर लेना चाहिए 50 वर्ष पूर्व के आपातकाल को जहाँ संविधान को ताक पर रखकर सत्ता चलाई गई। सबको याद रखना चाहिए कि देश में भ्रष्टाचार गहरी जड़ें जमा चुका है। इसे संवैधानिक विधि से कम करने के प्रयास किये गए तथा आरक्षण यथावत रहा और है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2014 में पद पर आने के बाद से देश को हर प्रकार से मजबूत करने के प्रयास किए। सवाल है कि विपक्षियों के हाथों में संविधान की प्रति मात्र दिखावे के रूप में रखी गई या वे संविधान के अनुरूप क्या संसद को पूर्णकालीन रूप से चलने में सत्ता को मदद करेंगे। भले ही संविधान, लोकतंत्र व आरक्षण खतरे में का शोर मचाने से विपक्ष को चुनावी लाभ मिला हो, पर वह संविधान के पीछे अपना भ्रष्टाचार, तुष्टीकरण व परिवारवाद छिपा नहीं सकता है। देश की जनता बहुत गौर से उसका यह ड्रामा देख रही है।

– **शकुंतला महेश नेनावा,** इंदौर

नायडू से उम्मीदें

चंद्रबाबू नायडू के भारी बहुमत से राज्य की सत्ता में वापस आने और केंद्र सरकार में साझेदारी से अमरावती को नए अत्याधुनिक विकसित शहर और राजधानी के रूप में विकसित करने के सभी अवसर उपलब्ध हैं। केंद्र सरकार भी देश के सभी राज्यों में आधुनिकतम सेवाओं वाली राजधानियां बनाने में तत्पर रहती है। नरेन्द्र मोदी एक राजनीतिज्ञ होने के साथ व्यापार व वाणिज्य को बढ़ावा देने का महत्व भी समझते हैं। वे जानते हैं कि यदि अमरावती को सिंगापुर की तर्ज पर विकसित कर दिया जाए तो देश के भीतर ही पर्यटन का एक नया केंद्र बन जाएगा और कुछ ही वर्षों में बढ़ी हुई आमदनी वहां के नागरिकों के लिए वरदान साबित होगी। स्वयं को मुख्यमंत्री के बजाय राज्य का सीईओ कहने और दशकों पहले हैदराबाद को साइबराबाद बनाने में सफल चंद्रबाबू नायडू को सुनहरा अवसर मिला है। उम्मीद करनी चाहिए कि वे प्रचंड बहुमत देने वाली राज्य की जनता को निराश नहीं करेंगे। नायडू पर आरोप था कि शहरीकरण की दौड़ में उन्होंने ग्रामीण व कृषि अर्थव्यवस्था पर ध्यान नहीं दिया था। उम्मीद है कि वे इस बार शहरी विकास तथा ग्रामीण विकास में संतुलन बनाते हुए राज्य को देश में पहले स्थान पर लाने में सफल होंगे।

– **विभूति बुपक्या,** खाचरोद

सूडान में गृहयुद्ध

सूडान में जारी मानवीय त्रासदी पर मीडिया का ध्यान बहुत कम है। गृहयुद्ध के कारण सिर्फ इस साल सूडान में 15 हज़ार लोग मारे जा चुके हैं। यह देश आज दुनिया का सबसे बड़ा बाल विस्थापन संकट झेल रहा है, जहाँ अप्रैल 2023 से 46 लाख से अधिक बच्चे अपने घरों से भाग चुके हैं। इनमें लगभग 10 लाख बच्चे सीमा पार चाड, मिस्र और दक्षिण सूडान में जाने को मजबूर हुए हैं। बच्चे आठ महीने तक अनिश्चितता, आघात और हिंसा झेलने के बाद पलायन को मजबूर हुए हैं। वहां के स्कूलों में बच्चे अब नहीं के बराबर है। इस प्रकार सूडान की एक पूरी भावी पीढ़ी अनपढ़ होकर अपने साथ ही देश-दुनिया को विकृत करेगी। यूनिसेफ प्रमुख के अनुसार, सूडान बच्चों के लिए दुनिया का सबसे खराब स्थान बन गया है। यहां चारों तरफ अकाल, विस्थापन, कुपोषण एवं बीमारी का बोलबाला है। सूडान के इस गृहयुद्ध और बच्चों पर आई विपदा के समाधान के प्रयास के बजाय विश्व शक्तियां अपनी राजनीति चमकाने में लगी हैं। सूडान जैसी त्रासदी ऐसे समय मानवता के लिए सबसे बदनुमा धब्बा है, जब सुख समृद्धि के नए रास्ते खुल रहे हैं।

– **जंग बहादुर सिंह,** जमशेदपुर

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 112

श्रम सुधार

देश में श्रम संबंधों का संचालन करने वाले 40 केंद्रीय और 100 राज्यस्तरीय कानून मौजूद हैं जो औद्योगिक विवादों के निस्तारण, कार्य परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा और वेतन भत्तों जैसे विभिन्न मामलों से संबंधित हैं। बीते वर्षों के दौरान देश में श्रम कानूनों की बहुलता, पुरातन प्रावधानों, परिभाषाओं की अनिश्चितता और अस्पष्टता के कारण इनका अनुपालन कठिन हो गया। दरों की बहुलता के अलावा श्रम कानूनों की जटिलता भी देश की औद्योगिक वृद्धि को प्रभाावित कर रही थी। इस मसले को हल करने के लिए सरकार ने साहसी कदम उठाते हुए श्रम कानूनों को सरलीकृत करते हुए चार व्यापक श्रम संहिताओं में शामिल करने का प्रावधान किया। मौजूदा 44 केंद्रीय कानूनों और 29 केंद्रीय श्रम कानूनों को समेकित करके चार श्रम संहिताओं में शामिल किया गया- वेतन संहिता (2019), सामाजिक सुरक्षा संहिता (2020), औद्योगिक संबंध संहिता (2020) और व्यावसायिक, सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्य परिस्थिति संहिता (2020)।

इन श्रम संहिताओं को संसद के दोनों सदनों की मंजूरी मिली और राष्ट्रपति ने भी उन्हें स्वीकृति प्रदान की। चारों श्रम संहिताओं पर मसौदा केंद्रीय नियम केंद्र सरकार द्वारा पूर्व प्रकाशित किए गए। चार वर्ष बाद उनके अनुमानित लाभ अभी भी हासिल होने बाकी हैं क्योंकि इनका क्रियान्वयन नहीं हो पाया। इस संदर्भ में श्रम एवं रोजगार मंत्रालय ने राज्य सरकारों के अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित करने की योजना की घोषणा की है ताकि उन्हें श्रम संहिताओं से परिचित कराया जा सके। इस पहल का स्वागत किया जाना चाहिए क्योंकि इन संहिताओं में कारोबारी सुगमता बढ़ाने और औपचारिक रोजगार निर्माण करने की पूरी संभावना है। ये संहिताएं कई अहम बदलाव लाएंगी जिसमें मौजूदा 100 के बजाय 300 कर्मचारियों वाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों में कर्मचारियों की छंटनी की सीमा बढ़ाने जैसी बातें शामिल हैं। नियोक्ताओं के लिए इस प्रकार लचीलापन बढ़ाने से और अधिक निवेश आएगा क्योंकि तब कंपनियां अपनी श्रम शक्ति को कारोबार की जरूरत के हिसाब से घटा-बढ़ा सकेंगी और उन्हें किसी नियामकीय बाधा का सामना नहीं करना होगा। कामगारों के हड़ताल करने के अधिकार को लेकर भी बदलाव किए गए हैं। इसके अलावा सामाजिक सुरक्षा के लाभ को बढ़ाकर श्रमिकों के एक बड़े हिस्से तक कर दिया गया है। इसके कारण परिचालन लागत में इजाफा हो सकता है लेकिन इससे श्रम शक्ति अधिक सुरक्षित और प्रेरित महसूस करेगी। इससे उत्पादक में भी इजाफा देखने को मिलेगा।

श्रम समवर्ती सूची का विषय है जिस पर संसद और विधान सभाएं दोनों कानून बना सकती हैं। क्रियान्वयन में अवश्य देरी होती रही है क्योंकि कुछ राज्यों को अभी भी इन संहिताओं के अधीन नियम तय करने हैं। वीवी गिरि राष्ट्रीय श्रम संस्थान के मुताबिक 24 राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों ने इन चारों संहिताओं के अधीन नियम बना लिए हैं। पश्चिम बंगाल, मेघालय, नागालैंड, लक्षद्वीप और दादरा एवं नागर हवेली को अभी नियम बनाने हैं। स्पष्ट है कि केंद्र सरकार संहिताओं को तभी लागू करना चाहती है जब सभी राज्य एकमत हों। ऐसा इसलिए कि क्रियान्वयन के बाद कानूनी दिक्कतों से बचा जा सके। इसके अलावा कुछ राज्यों में जहां मसौदा नियम बन चुके हैं वहां राज्यों की संहिताएं केंद्र की संहिताओं से अलग हैं। इससे क्रियान्वयन में दिक्कत आएगी। केंद्र ने राज्य सरकारों के अधिकारियों को श्रम संहिताओं के बारे में संवेदी बनाने काम शुरू करके अच्छा किया है। उसे मतभेदों को दूर करने पर काम करना चाहिए। भारत को कारोबारी सुगमता सुधारने, विनिर्माण आधार बढ़ाने और बाहरी प्रतिस्पर्धा में बेहतरी के लिए आधुनिक श्रम कानूनों की आवश्यकता है। इससे बहुप्रतीक्षित रोजगार तैयार होंगे और अर्थव्यवस्था की दीर्घकालिक वृद्धि संभावनाओं में सुधार होगा।

विनय सिन्हा

भारत में नियामकीय सुधार का एजेंडा

सर्वशक्तिमान नियामक देश की अर्थव्यवस्था और नागरिकों के जीवन पर बहुत प्रभावकारी स्थिति में हैं। उनके संचालन में सुधार करना नई सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए। बता रहे हैं के पी कृष्णन

नियमन हमारे जीवन को हमारे सोच से अधिक प्रभावित करते हैं। हम नाश्ते पर जो कॉफी पीते हैं, बाहर जाने के लिए ई-प्लेटफॉर्म से टैक्सी मंगाते हैं, उस सफर के लिए ई-भुगतान करते हैं, दवाइयां तथा पोषक उत्पाद मंगाते हैं तो ये सभी गतिविधियां विनियमित बाजार में घटित होती हैं। इनमें से हर क्षेत्र का प्रदर्शन और मजबूती एक या अधिक नियामकों की क्षमता पर निर्भर करती है।

आज केंद्र स्तर पर 20 से अधिक सांविधिक नियामकीय प्राधिकरण (एसआरए) हैं जो वित्त, दूरसंचार, बिजली, पानी, खाद्य सुरक्षा, प्रतिस्पर्धा, वेयरहाउसिंग, हवाई अड्डे, बड़े बंदरगाह, ऋणशोधन, चिकित्सा पेशेवर, दंत चिकित्सक, नर्स, अंकेक्षक और मूल्यांकन क्षेत्रों से संबद्ध हैं। कई एसआरए राज्य स्तर पर काम करते हैं। समग्र रूप से देखें तो ये सीधे तौर पर देश के सकल घरेलू उत्पाद के 75 फीसदी का नियमन करते हैं। इनका प्रदर्शन या प्रदर्शन की कमी अब भारत की विकास परियोजना के लिए रणनीतिक महत्त्व रखती है।

कई मायनों में नियमन ने उपभोक्ताओं और समाज के लिए अच्छे नतीजे दिए हैं। अधिकांश नियामक विनियमित संस्थाओं द्वारा प्रदान की जा रही वस्तुओं और सेवाओं में एक खास स्तर की सुरक्षा और गुणवत्ता बरकरार रखने में सफल रहे हैं। बहरहाल इन सफलताओं के साथ कई दिक्कतें भी सामने आईं। विशेष नियामकों की स्थापना के बाद के शुरुआती आशावाद की जगह उनके काम से जुड़ी चिंताओं ने ले ली। चिंताओं को विधि के शासन, प्रतिस्पर्धा, उपभोक्ता संरक्षण तथा आर्थिक गतिशीलता में बांटा जा सकता है। कई लोग किसी जटिल संस्थान के काम को वहां शीर्ष पर मौजूद व्यक्ति के साथ जोड़कर देखते हैं। वे इस बात पर जोर देते हैं कि बेहतर प्रदर्शन के लिए सर्वश्रेष्ठ लोगों का चयन किया जाए। नियुक्ति के निर्णय भी मायने रखते हैं। शीर्ष पर मौजूद व्यक्ति का चरित्र टीम के कौशल, रणनीति, नैतिक बल आदि पर भी गहरा असर डालता है। परंतु संगठनों के बेहतर प्रदर्शन को केवल बेहतरीन लोगों की बदौलत नहीं हासिल किया जा सकता है। संगठनात्मक प्रदर्शन को संगठन का डिजाइन आकार देता है जो संतुलन कायम करने का काम करता है। नियामक एक असामान्य सार्वजनिक संगठन होता है क्योंकि वह विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कामों का मिश्रण होता है। इससे उन्हें एक खास समय पर किसी एक क्षेत्र में असीमित अधिकार मिल जाते हैं। इससे पहले देश में ऐसा नहीं देखा गया था।

भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) अथवा भारतीय रिजर्व बैंक जैसे नियामकों का अपने नियंत्रण वाली संस्थाओं पर विस्तृत और गहरा नियंत्रण है। यह ऐसा नियंत्रण है जो सन 1991 के पहले के भारत में नहीं देखा गया था। किसी अन्य उन्नत अर्थव्यवस्था वाले देश में यह नहीं मौजूद है। ऐसी संस्थाओं के नियमन ने जहां बाजार विकास में मदद की वहीं इस स्तर की ताकत ने निजी क्षेत्र के आत्मविश्वास को प्रभावित करना शुरू कर दिया है। इससे नवाचार प्रभावित हो रहा है और भारत की सफल अर्थव्यवस्था के रूप में उभरने की संभावनाओं को भी नुकसान हो रहा है। ऐसी ताकत के साथ बहुत अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है ताकि औपचारिक प्रक्रियाओं के दौरान नियामक सही प्रक्रियाओं का पालन कर सकें। यह बात हमें स्वायत्तता, प्रक्रिया, जवाबदेही और लोगों से जुड़े संगठित सिद्धांतों की ओर ले जाती है। ऐसा सुधारवादी एजेंडा इस तरह के हालात निर्मित करेगा जो लोगों के आर्थिक विकास और बेहतरी के लिए अच्छे होंगे।

लोगः किसी विनियमित क्षेत्र में तकनीकी विशेषज्ञता और विषय की जानकारी को वह वजह माना जाता है जिनके चलते नियामक बनाए जाते हैं। फिलहाल तो लगभग सभी एसआरए में वरिष्ठ स्तर पर सभी लोग पूर्व या सेवारत सरकारी अधिकारी हैं। आंशिक तौर पर ऐसा इसलिए है क्योंकि नियुक्ति प्रक्रिया में सरकार का दबदबा है और बाहरी विशेषज्ञों की भागीदारी नाम मात्र की होती है। इन नियुक्तियों का कार्यकाल भी अलग-अलग होता है। विषय विशेषज्ञों के एक विविध समूह का विचार जिसका कार्यकाल की कार्यावधि भी अलग-अलग होती है। विषय विशेषज्ञों के विविध समूह का विचार जिसका कार्यकाल पूर्व अनुमानित और निश्चित हो, तथा जो अनिवार्य तौर पर तकनीकी ढंग से नियमन को लेकर काम करे, जिसमें राजनीतिक विचार विमर्श न के बराबर हो, ऐसा विचार अभी दूर है।

स्वायत्तताः परिचालन की स्वायत्तता यानी सरकारी विभागों से दूरी एसआरए का एक बुनियादी तर्क है। हमें विभिन्न विधायी प्रावधानों को सुसंगत बनाने की आवश्यकता है ताकि सभी एसआरए बिना सरकारी मंजूरी के नियमन कर सकें। इसके लिए स्वायत्तता की जरूरत है। बदले में इसके लिए मानव संसाधन और वित्तीय स्वायत्तता की जरूरत होती है। इन विधायी प्रावधानों के साथ संसाधनों की स्वायत्तता को संतुलन के साथ मिश्रित करने की आवश्यकता होती है ताकि आत्मप्रशंसा तथा अन्य दुरुपयोगों से बचा जा सके।

प्रक्रियाः नियामकों द्वारा तैयार नियम कानून की तरह होते हैं। लोकतांत्रिक समाजों में कानून बनाने की शक्ति निर्वाचित संस्थाओं को होती है जो जनता के प्रति औपचारिक तौर पर जवाबदेह होती हैं। ऐसे में उम्मीद की जाती है कि इस शक्ति को गैर निर्वाचित व्यक्तियों को सौंपते समय इनके उपयोग में सावधानी बरती जाएगी। नियमन निर्माण में एक किस्म से लोकतांत्रिकता और वैधानिकता का अभाव है। यहां कानून लिखने का काम निर्वाचित प्रतिनिधियों से अधिकारियों के हाथ दे दी गई है। इसी तरह लिखित प्रक्रियाओं की आवश्यकता है ताकि यह निर्धारित हो सके कि नियामक के कार्यपालिका संबंधी और न्यायिक कार्यों को किस प्रकार अंजाम दिया जाए।

जवाबदेहीः सभी सरकारी एजेंसियां अपने काम और उसके परिणामों के लिए संसद के जरिये जनता के प्रति जवाबदेह होती हैं। यह संवैधानिक लोकतंत्र वाले देशों में एक मानक प्रक्रिया है। अधिकांश भारतीय एसआरए कानूनों में प्राथमिक जवाबदेही संसदीय निगरानी की है जो इन एसआरए के सालाना प्रदर्शन और वित्तीय रिपोर्ट पर खुली चर्चा के माध्यम से तय की जाती है। हमारी संसद में किसी एसआरए को लेकर ऐसी चर्चा कभी नहीं हुई। जवाबदेही के लिए तीन सुधारों की आवश्यकता हैः एक सही ढांचे वाला बोर्ड जिसके कामकाज और भूमिका को लेकर स्पष्टता हो, पंचाट में अपील की सुविधा तथा भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा अंकेक्षण की व्यवस्था।

एक दशक पहले एसआरए में सुधार को लेकर वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग ने एक व्यापक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। इसकी अध्यक्षता सर्वोच्च न्यायालय के एक पूर्व न्यायाधीश ने की थी। इसमें विभिन्न क्षेत्रों के विषय विशेषज्ञ शामिल थे। आयोग ने देश के सभी एसआरए में सुधार के लिए एक विस्तृत रिपोर्ट पेश की थी। अब वक्त आ गया है कि इस रिपोर्ट को बाहर निकाला जाए, इसमें जरूरी सुधार किए जाएं और इसे वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जाए। इसके पश्चात इसकी अनुशंसाओं पर काम किया जाना चाहिए।

(लेखक आईसीपीपी में मानद सीनियर फेलो और पूर्व अफसरशाह हैं)

भारत में फिर 'राजनीतिक' अर्थव्यवस्था हावी

अतार्किक विकल्प
देवाशिष बसु

ठीक 30 वर्ष पहले मैंने कहा था कि रिलायंस इंडस्ट्रीज एक कंपनी नहीं बल्कि यह दो कंपनियों का समूह है। एक कंपनी ने विनिर्माण संयंत्र एवं उत्पाद बेचने पर ध्यान केंद्रित किया तो दूसरी ने पूंजी जुटाने एवं अपने आंतरिक संसाधनों से 'समूह' के प्रबंधन पर ध्यान दिया। ये दोनों ही इकाइयां एक दूसरे का सहयोग करती थीं। नरेंद्र मोदी के साथ भी यही बात लागू होती है क्योंकि उनके दो रूप हैं। मोदी का एक रूप प्रधानमंत्री कार्यालय से देश का प्रशासन चलाता है तो दूसरा जीवन से भी अपनी बड़ी छवि अपनाकर राजनीतिक अभियानों के माध्यम से वोट बटोरने में निरंतर जुटा रहता है। पिछले दस वर्षों तक यह रणनीति कारगर रही। एक राजनीतिज्ञ के रूप में मोदी ने हिंदुत्व, राष्ट्रवाद और जन कल्याणवाद के नाम पर अधिकांश चुनावों में विजय पताका फहरा दिया। इस अभियान में उनकी पार्टी का भी उन्हें पूरा सहयोग मिला।

मोदी के कार्यकाल में ब्याज दरें औसत स्तर पर रहीं, राजकोषीय घाटा नियंत्रण में था, अप्रत्यक्ष कर एवं शुल्कों में भारी बढ़ोतरी हुई और भारी भरकम आधारभूत परियोजनाएं शुरू करने पर राजस्व का एक बड़ा हिस्सा खर्च किया गया। शेयर बाजार भी सरकार के कदमों के साथ ताल मिलाता रहा और शहरों में रहने वाले तथाकथित संभ्रांत लोग मोदी के हरेक नारों एवं विचारों को बिना किसी झिझक के स्वीकार करते रहे। इन लोगों को इससे भी फर्क नहीं पड़ा कि मोदी ने कितनी ही बार मुख्य मुद्दे ही बदल दिए और पुराने नारों की जगह नए नारों में लोगों का ध्यान भटकाते रहे। इन लोगों को पूरा विश्वास था कि 2024 के आम चुनाव में मोदी भारी जीत दर्ज करने जा रहे हैं। मगर चुनाव के नतीजे अधिकांश लोगों के लिए चौंकाने वाले थे और यह भी साबित हो गया कि पिछले 10 वर्ष अपवाद थे और जो हो रहा था उसका सिलसिला जारी नहीं रह सकता। पिछले 25 वर्षों का नियम-गठबंधन राजनीति-फिर केंद्र में लौट आया है। इस लोकसभा चुनाव से पहले राजनीति अहमियत नहीं रखती थी। यह मान लिया गया था कि मोदी की लोकप्रियता ने यह प्रश्न ही नकार दिया है कि देश की बागडोर कौन संभालेगा। राजनीति एक बार फिर राजनीतिक अर्थव्यवस्था में प्रवेश कर गई है। नरसिंह राव सरकार से लेकर जनता दल के साथ हुए प्रयोग और बाद में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और फिर 2014 तक कांग्रेस के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकारों के साथ भी यही बात दिखी। क्या गठबंधन राजनीति अर्थव्यवस्था के लिए बाधा है? क्या कथित तौर पर स्वेच्छाचारी मोदी गठबंधन सरकार चला सकते हैं? इन प्रश्नों के पक्ष और विपक्ष दोनों तरफ मजबूत तर्क मौजूद हैं। परंतु, इनका कोई सीधा उत्तर हम नहीं जानते हैं। हां, इतना जरूर जानते हैं कि उन प्रश्नों के उत्तर अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। मतदाताओं ने साफ संकेत दिए हैं कि हिंदुत्व, राष्ट्रवाद और जन कल्याणवाद वोट बटोरने के औजार नहीं रह गए हैं। हिंदुत्व और राष्ट्रवाद किसी के लिए, दो वक्त की रोटी का प्रबंध नहीं कर सकते। जन कल्याणवाद न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। मगर इंस्टाग्राम, फेसबुक और मनोरंजन धारावाहिक देख कर महत्त्वाकांक्षी जीवन-शैली का आदी हो चुका कौन सा मतदाता इस न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति भर होने से संतुष्ट हो सकता है?

ऐसा प्रतीत होता है कि मीम, लोगों का ध्यान खींचने वाले वाक्यांश, अनुप्रास वाले शब्द गढ़ना, चतुराई वाले संक्षेप अक्षर, योजनाएं और 'अच्छे दिन', 'अमृत काल' और 'विकसित भारत' जैसे नारों के दिन अब लद गए हैं। लोग इनसे अब प्रभावित नहीं हो रहे हैं क्योंकि केवल इनसे उनका काम चलने वाला नहीं है, उनकी ख्वाहिशें कहीं अधिक हैं। किसान कृषि उत्पादों का अधिक मूल्य चाहते हैं, युवा रोजगार चाहते हैं, एक मां अपने बच्चों के लिए बेहतर शिक्षा चाहती है और श्रमिक अपने काम का अधिक पारिश्रमिक चाहते हैं। क्या कोई राजनीतिक दल या गठबंधन ये मांगें पूरी कर सकता है? जब मोदी वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री बने थे उन्होंने वादों की झड़ी लगा दी थी। उनमें एक वादा यह भी किया गया था कि किसानों को उनकी उत्पादन लागत के आधे से अधिक हिस्से के बराबर तक मुनाफा प्राप्त होगा। वर्ष 2016 में उन्होंने इससे भी बढ़कर एक बात कह दी। मोदी ने कहा कि छह वर्षों में किसानों की आय दोगुना हो जाएगी। ये वादे न केवल खोखले निकले बल्कि उन्होंने आनन-फानन में संसद में तीन कृषि विधेयक पारित कराने का भी प्रयास किया। किसान इससे आग बबूला हो गए मगर सरकार ने सख्त रुख अपनाया और किसानों को रोकने के लिए सड़कों पर गड्ढे खोदने से लेकर तमाम रुकावटें तैनात कर दीं। स्वास्थ्य, शिक्षा जैसी सेवाएं दोगुना खर्चीली हो गई हैं जिनसे हरेक व्यक्ति प्रभावित हो रहा है। मगर आधिकारिक मुद्रास्फीति दर 5 प्रतिशत से भी कम है। ग्रामीण क्षेत्रों में आय नहीं बढ़ रही है। उच्च मध्य वर्ग इस हकीकत से वाकिफ नहीं है क्योंकि मुख्यधारा के समाचार माध्यमों (मीडिया) को जमीनी सच्चाई नहीं दिखाने या सुनाने के परोक्ष निर्देश मिले हुए हैं।

अब शहरों में रहने वाले उच्च मध्य वर्ग के लोगों को अचानक यह चिंता सताने लगी है कि अगर पिछड़े एवं बुनियादी सुख-सुविधाओं से वंचित लोग प्रति महीने 5 किलोग्राम राशन से संतुष्ट नहीं होंगे तो फिर क्या हाल होगा?

इसका एकमात्र समाधान है बुनियादी बदलाव क्योंकि मीम, जन कल्याणवाद जैसे नारों के जाल में लोग नहीं फंसना चाहते हैं। बदलाव लाने के प्रयास के हिस्से के तौर पर निजी क्षेत्र को मजबूत बनाना होगा। निजी क्षेत्र ही दीर्घ अवधि तक लगातार रोजगार सृजन जारी रख सकता है। यह पढ़ने या सुनने में अटपटा जरूर लगेगा मगर मोदी को अन्य क्रियाकलापों से अलग रोजगार देने वाले क्षेत्रों एवं व्यवसायों का 'ध्यान' करना चाहिए। जब दस वर्ष पूर्व मोदी आए थे तो ऐसी उम्मीद जगी थी कि वह कांग्रेस के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार में पनपे सांठगांठ वाली पूंजीवादी व्यवस्था और भ्रष्टाचार का खात्मा करेंगे और एक नियम आधारित सरकार चलाएंगे जो कर में कटौती करेगी और अफसरशाही पर लगाम लगाएगी। यह भी आशा जगी थी देश में उद्यमशीलता को बढ़ावा देगी। मगर ठीक इनका उल्टा हो रहा है। सुगमता एवं स्वतंत्रता के साथ कारोबार करने की इजाजत नहीं है, कर वसूली चरम पर है, राज्य एवं जिला स्तरों पर भ्रष्टाचार बढ़ गया है, तेल के दाम जमकर जेब हल्की कर रहे हैं और लगातार बढ़ती अफसरशाही ने उद्यम प्रणाली को निचोड़ कर रख दिया है। देश में 100 स्मार्ट सिटी तैयार करने की दिशा में काफी कम प्रगति हुई है। वहीं, मौजूदा शहरों का ढांचा अस्त-व्यस्त लग रहा है जिससे लोगों की उत्पादकता और कारोबारी तंत्र पर प्रतिकूल असर हुआ है। राजनीति दांव-पेच का बोलबाला बढ़ने और अर्थव्यवस्था को लेकर गंभीरता के बीच क्या किसी को लगता है कि आर्थिक संपन्नता बतलाने वाले संकेतक सुधरेंगे? या फिर मध्यम वर्ग पूर्व की तरह ही स्वर्णिम भविष्य की कल्पना त्याग कर परिस्थितियों से पहले की तरह ही जूझते रहेंगे?

(लेखक डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू डॉट मनीलाइफ डॉट इन के संपादक हैं)

आपका पक्ष

पांच राज्यों में विधान सभा चुनाव

लेख 'कश्मीर में चुनाव की तैयारी में जुटा आयोग' अनुच्छेद 370 के समाप्त होने के बाद के राजनीतिक परिदृश्य में जम्मू कश्मीर में विधान सभा चुनाव कराने की तैयारी से अवगत कराता है। जम्मू कश्मीर में चुनाव कराना केंद्र सरकार, स्थानीय प्रशासन और चुनाव आयोग के लिए बहुत बड़ी चुनौती है और इसमें सीमा पार से सरकार, सेना और आईएसआई की ओर से आतंकवादी हमलों, रैलियों में गड़बड़ी, मतदान के दौरान हमलों का प्रयास किया जा सकता है। लोकसभा चुनाव परिणाम के बाद तीसरी बार मोदी सरकार के गठन के बाद हताश आतंकवादियों ने हिंदू तीर्थयात्रियों पर हमले किए। जम्मू-कश्मीर के अतिरिक्त महाराष्ट्र, हरियाणा, झारखंड और दिल्ली में भी विधान सभा चुनाव होने हैं। पिछले लोकसभा चुनावों से सबक लेते हुए इन सभी पांच राज्यों में एक साथ और एक ही चरण में चुनाव संपन्न होने चाहिए और यह चुनाव

जम्मू कश्मीर, महाराष्ट्र, हरियाणा, झारखंड और दिल्ली में विधान सभा चुनाव होने हैं

भी मंगलवार से गुरुवार के बीच होने चाहिए जिससे सभी मतदाता चुनावों में भाग ले सकें। राजनीतिक दल इन चुनावों में अपराधियों, भ्रष्टाचारियों, माफिया और कारावासी प्रत्याशियों को चुनावों में न खड़ा करें। सभी पांच राज्यों में चुनाव एक साथ कराने के लिए जितने अर्धसैनिक बलों और अन्य राज्यों के पुलिस बल तैनात करने पड़ें, सरकार को कोताही नहीं करनी चाहिए और चुनाव संपन्न कराने वाले अधिकारियों और कर्मचारियों को भरपूर सुरक्षा मिलनी चाहिए। भारत में ऐसा वर्ग और ऐसे तत्त्व सक्रिय हैं जो देश को विदेश में बदनाम करना और देश के भीतर अराजकता चाहते हैं। जम्मू कश्मीर सहित पांचों राज्यों में शांति और सफलतापूर्वक चुनाव संपन्न हों, यह देश के अनवरत विकास के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।

विनोद जौहरी, दिल्ली

दोषियों को कड़ी सजा मिले

परीक्षाओं में बढ़ती धांधलियां रोकने के वास्ते अपराधियों को दंडित करने के लिए कड़े कानून बनाने की जरूरत है। पेपर लीक रोकने के लिए परीक्षाओं को पूरी तरह से ऑनलाइन करना चाहिए। परीक्षा का प्रश्नपत्र छपने के बाद उसे पुलिस थाने में रखा जाना चाहिए। वहीं से प्रश्न पत्र परीक्षा केंद्रों तक पहुंचाए जाएं। परीक्षा गड़बड़ी के मामलों की सुनवाई फास्ट ट्रैक में की जाए और दोषियों को उनकी संपत्ति जब्त करने जैसी कड़ी सजा मिले।

गोपाल सोनी, धार

डमी अभ्यर्थियों पर कसनी होगी लगाम

आमतौर पर जो अभ्यर्थी डमी कैंडिडेट का इस्तेमाल करते हैं, वे फॉर्म भरते समय अपनी फोटो के बजाय डमी कैंडिडेट की फोटो लगा देते हैं और कई बार डमी कैंडिडेट के साथ अपनी फोटो मर्ज करा लेते हैं। इसका फायदा उठाकर वे परीक्षा केंद्र पर आते हैं और फर्जी आधार कार्ड भी बना लेते हैं। परीक्षा के दौरान अभ्यर्थियों से हैंड-राइटिंग सैंपल लिया जाए और बाद में किसी भी स्तर पर आवश्यकता पड़ने पर इस हैंडराइटिंग सैंपल के जरिये अभ्यर्थी की जांच की जाए। इसके अलावा परीक्षा केंद्र पर अभ्यर्थियों की वीडियोग्राफी भी कराई जाए।

धीरेंद्र सोमानी, बेंगलूरु

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

भारत आदिवासी पार्टी के सांसद राजकुमार राउत मंगलवार को 18वीं लोकसभा सत्र में शामिल होने के लिए ऊंट पर सवार होकर संसद पहुंचे।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। –वाल्तेयर

राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

चुनावी राजनीति की फांस का असर क्यों

टकराव जब लक्ष्मण रेखा पार कर जाए तो वही होता है, जो मंगलवार को लोकसभा में हुआ। लोकसभा अध्यक्ष पद के लिए आम तौर पर सर्वसम्मति से होने वाले चुनाव की बजाय अब मुकाबला तय हो गया है। उम्मीद थी कि नवनिर्वाचित सांसदों को शपथ लेने के लिए प्रोटेम स्पीकर की नियुक्ति को लेकर उपजा विवाद अब थम जाएगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। एनडीए के ओम बिरला के सामने 'इंडिया' गठबंधन ने के. सुरेश को मैदान में उतार दिया। यह बात और है कि मौजूदा समीकरणों में जीत का जरूरी आंकड़ा 'इंडिया' के पास नहीं है।

अठारहवीं लोकसभा के सत्र के ऐसे आगाज से आगे के हाल का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। लोकतंत्र में पक्ष-प्रतिपक्ष का अपना महत्त्व है। इसके बावजूद आम जनता के मन में यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि स्पीकर के चुनाव को लेकर उपजे इस टकराव को क्या टाला नहीं जा सकता था? लोकसभा अध्यक्ष का चुनाव आम सहमति से होने की परिपाटी यदि कायम रहती तो क्या यह अच्छा नहीं होता? सब जानते हैं कि इस मामले में दोनों तरफ से गंभीर प्रयास हुए होते तो हमेशा की तरह लोकसभा अध्यक्ष का चुनाव आम सहमति से होने में कोई बाधा नहीं थी। यह बात सही है कि राजनीतिक दलों की अपनी- अपनी रणनीति व अपनी-अपनी मजबूरियां होती हैं। लेकिन लाख टके का अनुत्तरित सवाल तो यह है कि चुनावी राजनीति की फांस का असर आखिर लोकतंत्र के मंदिर में क्यों दिखाई दे? बीते बरसों में संसद ने पक्ष-प्रतिपक्ष के बीच जैसा टकराव देखा वैसा शायद ही कभी नजर आया हो। सवाल यह भी है कि आखिर लोकसभा अध्यक्ष के पद को लेकर यह टकराव हुआ क्यों? क्या इस टकराव की वजह लोकसभा में डिप्टी स्पीकर का पद है? आमतौर पर यह पद मान्यता प्राप्त विपक्ष को जाता रहा है। कांग्रेस की सरकार थी तो डिप्टी स्पीकर पद विपक्ष के पास बना रहा। पांच साल अकाली दल और पांच साल भाजपा का डिप्टी स्पीकर रहा। बीते दस सालों में लोकसभा में मान्यता प्राप्त विपक्ष नहीं था, तो पद खाली रहा। इस बार प्रमुख विपक्षी दल बनकर उभरी कांग्रेस की मांग है कि यह पद उसकी झोली में जाना चाहिए।

सत्तारूढ़ दल के संसदीय प्रबंधक इस मुद्दे का हल निकाल लेते तो टकराव से बचा जा सकता था। संसद चलाने की जिम्मेदारी सत्ता पक्ष की ज्यादा है। सत्तापक्ष और विपक्ष को जनादेश का सम्मान करने के लिए तैयार रहना होगा। लोकतंत्र में जीत- हार के अपने मायने हैं, लेकिन देश चलाने के लिए दलगत मतभेद भुला एक मंच पर आना ही होगा।

सामयिक: गिग वर्कर्स ने जीवन को सुगम बनाया है पर इस व्यवस्था की कीमत उन्हें भी चुकानी पड़ रही है

आखिर कितनी पारदर्शी है गिग अर्थव्यवस्था

डॉ. विवेक एस. अग्रवाल
संचार और शहरी स्वास्थ्य विशेषज्ञ
@patrika.com

गिग वर्कर्स की कार्य करने की वर्तमान परिस्थितियां अत्यंत गंभीर हैं और यदि सही अध्ययन हो तो उनके स्वास्थ्य, औसत जीवनकाल और सुरक्षा को लेकर खतरनाक तथ्य सामने आएंगे।

कुछ खाना है, कुछ पहनना है, कहीं घूमना है या घर का सामान मंगवाना है यानी जीवन का कोई भी पहलू हो, ऑनलाइन ऑर्डर से वस्तु प्राप्त करने की संस्कृति अब हर घर तक पहुंच गई है। इसमें जाति, वर्ग, आयु जैसा कहीं कोई भेद नहीं है। दिन-प्रतिदिन छोटी से लेकर बड़ी वस्तु तक को मंगवाने के लिए विभिन्न प्रचलित और अप्रचलित ऐप पर निर्भरता और इनके माध्यम से घर-गृहस्थी के संचालन की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। इसका अंजाम क्या होगा, यह किसी को नहीं मालूम। बस ये सहज माध्यम बनती जा रही हैं हर समस्या के हल के रूप में एक उत्पाद की त्वरित डिलीवरी का।

इंसान को निरंतर आलसी बनाने की प्रवृत्ति के मध्य इस संपूर्ण अर्थव्यवस्था की पारदर्शिता से आम जन अनभिज्ञ है। उसे तो मात्र सुगमता का ही एहसास है और इस बाबत वह गर्व से चर्चा भी करता है। देखा जाए तो इंसान के भोलेपन और तथ्यों से अनभिज्ञता का लाभ, जब जिसका मौका लगता है, ले लेता है और वर्तमान में ऑनलाइन क्रय व्यवस्था यह अनुचित लाभ ले रही है। एक ओर निर्भरता की पराकाष्ठा की ओर बढ़ता इंसान है, तो दूसरी ओर छिपा हुआ मंतव्य और बढ़ती अपारदर्शी प्रवृत्तियां, जिनसे आमजन पूर्णतया अनभिज्ञ है। वह तो इसी मायाजाल में है कि घर बैठे, सस्ती और समान गुणवत्ता की वस्तु उसे प्राप्त हो रही है, लेकिन यह वास्तविकता नहीं है।

नियम-कानून के अभाव में विभिन्न ऑनलाइन प्लेटफॉर्म आधारित गिग व्यवस्था विभिन्न स्तरों पर अपारदर्शी कारोबार में लिप्त है। उदाहरण के तौर पर विभिन्न प्लेटफॉर्म के जरिए मंगवाई जाने वाली मिठाई का मूल्य दुकान के मूल्य से अधिक होता है। ग्राहक तो मूल्य के विवरण में वितरण मूल्य शून्य और बहुत ही कम जैसे 5 रुपए का प्लेटफॉर्म शुल्क देखकर प्रसन्न हो जाता है, उसके ऊपर विभिन्न बैंक, वॉलेट इत्यादि द्वारा प्रदत्त छूट अतिरिक्त प्रसन्नता देती है, लेकिन इन सब छूट के बावजूद वस्तु का आधार मूल्य मूल दुकान पर ही सस्ता होता है।

आने वाले समय में गिग अर्थव्यवस्था से कोई भी अछूता नहीं रहने वाला। विचारणीय बिंदु यह है कि यदि किसी प्रतिष्ठान से खरीद की जाए या उसकी सुविधाओं का उपयोग किया जाए तो व्यक्ति, आधारभूत ढांचे समेत कई लागत आती हैं पर गिग व्यवस्था के तहत विक्रय में ये नगण्य रहती हैं। फिर विक्रय मूल्य कम होने के स्थान पर अधिक क्यों होता है? अपारदर्शिता मात्र मूल्य को लेकर ही नहीं है, अपितु पैकेजिंग, वजन, आकार आदि को लेकर भी है। विडम्बना यह है कि न इस बाबत ठोस आंकड़े हैं और प्रदर्शित एवं वितरित वस्तु के आकार और वजन में फर्क भी ऐसा जो सामान्य दृष्टि से ओझल हो जाए। यह छोटी-छोटी बचत का तरीका कुल मिलाकर बड़ी बचत करवा देता है, क्योंकि विक्रय करने वाली संस्था जानती है कि न तो ग्राहक खरीदी गई वस्तु को मापेगा-तोलेगा, न ही सरकारी तोल-माप विभाग इसमें दखल देगा। इसी का अनुचित लाभ उठाने वालों के लिए एक किलो में 10 ग्राम की कटौती सामान्य बात है। इसी तरह एक प्रसिद्ध कचौड़ी-समोसे की दुकान पर गिग विक्रय के लिए अलग-अलग आकार की सामग्री रखने का उदाहरण भी उल्लेखनीय है, हालांकि अलग काउंटर होने से इनमें भेद करना जरा भी मुश्किल नहीं रहता। दुकान/संस्थान पर तो पैकेजिंग को वजन में शामिल न करने का अंकुश रहता है, पर गिग व्यवस्था में यह नियंत्रण भी नहीं रह पाता है।

अपारदर्शिता के चलते व्यक्ति की जेब पर बोझ तो बढ़ ही रहा है, स्वास्थ्य की दृष्टि से भी लापरवाही या रणनीति के तहत नुकसान पहुंचने की आशंकाएं रहती हैं। किसी प्रतिष्ठान पर खाद्य सामग्री विक्रय में निर्धारित मानदंडों जैसे कि समय सीमा में ही विक्रय की बाध्यता रहती है पर वहां से निकलते ही नियम-कानून के दायरे खत्म हो जाते हैं।

जहां एक ओर उपभोक्ता अपारदर्शी व्यापार व्यवस्था का शिकार हो रहा है, वहीं सेवा प्रदत्त करने वाले गिग वर्कर भी असुरक्षित वातावरण में कार्य कर रहे हैं। प्रतिवर्ष 17 प्रतिशत की दर से बढ़ने वाली गिग अर्थव्यवस्था वर्तमान में कुल सकल घरेलू उत्पाद का करीब सवा प्रतिशत ही है, लेकिन आगामी वर्षों में गैर कृषि क्षेत्र में इसके माध्यम से लगभग 9 करोड़ रोजगार के अवसर सृजित होंगे। ये अकुशल से लेकर अतिकुशल तक सभी स्तर के होंगे। इसमें वेतन एवं पारिश्रमिक की अत्यधिक विसंगतियां भी दुर्भाग्यपूर्ण हैं। विषमता की पराकाष्ठा वाली इस व्यवस्था में जहां अकुशल कर्मी अत्यंत असुरक्षित एवं चुनौतीपूर्ण वातावरण में कार्य कर रहा है, वहीं कुशलता के आधार पर व्यवसायरत लोग अपनी नेटवर्थ के चरम पर हैं। इस कारण भी सरकारी स्तर पर नियंत्रण जरूरी है। यदि सही ढंग से अध्ययन किया जाए तो गिग वर्कर्स के स्वास्थ्य, औसत जीवनकाल और सुरक्षा को लेकर खतरनाक तथ्य सामने आना निश्चित है।

बढ़ती गिग अर्थव्यवस्था का प्रवाह न तो रोका जा सकता है, न ही यह उचित है लेकिन कानून के माध्यम से गुणवत्ता, तोल-माप और पारदर्शिता के सख्त नियंत्रण से उपभोक्ताओं को शिकार होने से बचाया जा सकता है। जैसे कि ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर वास्तविक मूल्य, वजन और अवधिपार होने की तारीख का स्पष्ट उल्लेख हो। साथ ही गिग वर्कर्स के लिए सामाजिक सुरक्षा का आवरण भी होना चाहिए। जीवन सुगम बनाने वाली यह व्यवस्था यदि नियंत्रित रूप में क्रियान्वित हो तो यह अधिक स्वीकार्य होगी।

फैक्ट फ्रंट

टोरंटो की शान 'सुई'

कनाडा के टोरंटो शहर के सीएन टावर ने करीब तीन दशक तक दुनिया की सबसे ऊंची स्वतंत्र इमारत का रेकॉर्ड अपने नाम रखा। हालांकि दुबई और शंघाई की इमारतों ने इसे पीछे छोड़ दिया है, फिर भी हर साल दस लाख से ज्यादा पर्यटक यहां आते हैं। इसके आकार की वजह से स्थानीय लोग इसे ' द निडल (सुई) ' भी कहते हैं। 553 मीटर ऊंचा यह टॉवर फरवरी 1974 में बनकर तैयार हुआ था और 26 जून 1976 को जनता के लिए खोला गया था। शुरू में यह निजी स्वामित्व में था, लेकिन टावर का स्वामित्व 1995 में कनाडाई सरकार को हस्तांतरित कर दिया गया था। अब इसे एक सार्वजनिक निगम द्वारा प्रबंधित किया जाता है।

यूएस: बाइडन-ट्रंप को बताना चाहिए कि कर्ज के मुद्दे पर वे क्या करेंगे

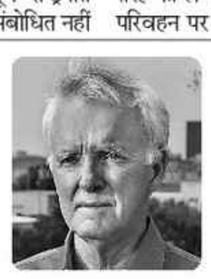

चुनावी बहस में कर्ज के मुद्दे को संबोधित किया जाना बेहद जरूरी

जे. रॉबर्ट कैरी
नेब्रास्का का पूर्व गवर्नर, 1992 में राष्ट्रपति पद के लिए डेमोक्रेटिक पार्टी के दावेदारों में शामिल थे
द वाशिंगटन पोस्ट से विशेष अनुबंध के तहत

अमरीका में गुरुवार को होने वाली प्रेसिडेंशियल डिबेट के लिए 90 मिनट का समय तय किया गया है। राष्ट्रपति बाइडन और पूर्व राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप शायद ध्यान देने योग्य हर मुद्दों को संबोधित नहीं करें। कोई फर्क नहीं पड़ता कि कौन से मुद्दे उठाए गए हैं, लेकिन चार अक्षरों के एक शब्द का उल्लेख यदि नहीं किया गया तो यह एक महत्त्वपूर्ण अवसर को हाथ से गंवा देने जैसा होगा। चार अक्षरों का यह शब्द है – डीइबीटी यानी कर्ज – राष्ट्रीय कर्ज। यह एक स्पष्ट, गंभीर और अत्यधिक महत्त्व रखने वाली समस्या है जिस पर कोई भी चर्चा नहीं करना चाहता। दूसरी ओर, यह इतना महत्त्वपूर्ण मुद्दा है कि इसे हरगिज अनदेखा नहीं किया जा सकता। वर्षों से बढ़ते कर्ज की यह बदनामी अब राष्ट्रीय स्तर पर भयावहता लिए हुए है और इसका बुरा असर आने वाले समय में देश के आर्थिक-सामाजिक भविष्य पर पड़ेगा। प्रेसिडेंशियल डिबेट की मेजबानी करने वाले सीएनएन के पत्रकार जेक टैपर और डेना बाश को बाइडन और ट्रंप दोनों से यह कहलाने में असफल नहीं होना चाहिए कि वे इस मुद्दे पर क्या करेंगे।

जानकारी के लिए कुछ अहम तथ्य इस तरह हैं – (1) 1994 के बाद से सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में जनता द्वारा लिया ऋण 48 से 97 प्रतिशत यानी दोगुना हो गया है। यह अनुपात द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत के रेकॉर्ड स्तर के करीब है। कांग्रेस के बजट कार्यालय का अनुमान है कि 2054 में यह कर्ज जीडीपी के 166 प्रतिशत तक पहुंच जाएगा। (2) 18 जून को एक पूर्वानुमान में, कांग्रेस के बजट कार्यालय (सीबीओ) का अनुमान है कि कर्ज पर ब्याज के रूप में संघीय खर्च इस साल 892 बिलियन डॉलर तक पहुंच जाएगा। सिर्फ चार माह पहले के पूर्वानुमान से इसमें 22 बिलियन की वृद्धि हुई है। ब्याज के रूप में इतना बड़ा खर्च रक्षा बजट (849 बिलियन डॉलर) और स्वास्थ्य बजट (858 बिलियन डॉलर) को पार कर जाएगा। (3) ब्याज भुगतान भी इस वर्ष सैन्य बल में सेवा करने वाले या इसी तरह की लम्बी सेवा करने वाले लोगों की पेंशन, शिक्षा और परिवहन पर किए जाने वाले कुल खर्च से अधिक होगा। (4) बजट घाटे के इस वर्ष 1.9 ट्रिलियन डॉलर होने का अनुमान है, कुछ महीने पहले के अनुमान से 300 बिलियन डॉलर अधिक। माना जा रहा है कि एक दशक के भीतर यह प्रतिवर्ष 2.9 ट्रिलियन डॉलर तक बढ़ जाएगा। (5) तीन प्रमुख क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों में से दो (स्टैंडर्ड एंड पूअर्स और फिच) ने कर्ज की उच्चतम रेटिंग एएए से घटाकर एए+ कर दी है। दोनों एजेंसियों ने इसकी वजह बढ़ता कर्ज और राजनीतिक शिथिलता बताई है।

ऐसी कठोर वास्तविकताओं की प्रतिक्रिया में, पर्यवेक्षकों के लिए लंबे समय तक यह संभव नहीं होगा कि वे आश्वस्त करने वाले लोक-लुभावन उपायों के साथ कर्ज की चिंताओं को खारिज करें। सीबीओ निदेशक का कहना है कि अमरीका 'आर्थिक स्थिरता के लिए जोखिम' का सामना कर रहा है, तो जेपी मॉर्गन चेज के सीईओ जेमी डिमोन ने चेतावनी दी है कि अमरीका 'अत्यधिक पूर्वानुमानित' आर्थिक संकट की ओर बढ़ रहा है। अर्थशास्त्र में नोबेल विजेता पॉल क्रुगमैन ने भी पिछले साल अक्टूबर में लिखा था – सरकारी खर्च में ज्यादा कमी, जो एक दशक पहले एक बुरा विचार था, अब अच्छा विचार है। कुछ सांसदों का प्रस्ताव है कि समाधान के लिए एक नया द्विदलीय आयोग बनाया जाए और इसे कांग्रेस में लाया जाए। 1994 से लेकर अब तक कई आयोग बन चुके हैं और अब एक नए आयोग की जरूरत पर चर्चा हो रही है। इंतजार जितना लंबा होगा, स्थिति उतनी ही विकट होती जाएगी। इन मुद्दों को कैसे संबोधित किया जाना चाहिए, इस पर मतभेद हो सकते हैं, लेकिन मतभेदों को दूर करने की दिशा में उचित कदम का इंतजार अब मुश्किल होता जा रहा है।

नाइका माइन: मेक्सिको में पांच लाख वर्ष से बन रहे विशाल सेलेनाइट क्रिस्टल

मेक्सिको के चिहुआहुआ में स्थित नाइका माइन में 12 मीटर (करीब 39 फुट) लंबे और 55 टन तक वजनी सेलेनाइट क्रिस्टल हैं। ये क्रिस्टल पांच लाख सालों में खनिज-समृद्ध हाइड्रोथर्मल तरल पदार्थों और लगभग 136 डिग्री फारेनहाइट जैसे उच्च तापमान के संयोजन का नतीजा हैं। दुर्भाग्य से पर्यटकों को इस जगह आने की अनुमति नहीं है, क्योंकि परिस्थितियां बेहद प्रतिकूल हैं। वैज्ञानिकों को भी विशेष परमिट और वाटर-कूल्ड सूट के साथ ही आने दिया जाता है। सतह से करीब 300 मीटर नीचे इस जादुई दुनिया की खोज 17 वर्ष पहले दो भाइयों ने नाइका पर्वत के नीचे एक सुरंग की खुदाई के दौरान की थी।

प्रसंगवश

विकास की इबारत लिखनी होगी सीमा से सटे गांवों में

युवाओं का ही गांवों से मोह खत्म हो गया तो देर-सवेर यहां सुविधाएं जुटाने का भी कोई अर्थ नहीं निकलने वाला

सीमा पर बसे गांवों का सामरिक महत्त्व सदैव ही रहा है। राजस्थान के सीमावर्ती इलाकों में बसे गांवों में रहने वालों ने भी बंटवारे का दर्द झेला है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने बॉर्डर के आखिरी गांव को पहला गांव कहने की बात कही तो इन गांवों के विकास की प्राथमिकता की केन्द्र सरकार की मंशा भी जाहिर की। लेकिन जब राजस्थान के सीमा से सटे गांवों की बात करते हैं तो ये आज भी बिजली-पानी और सड़क जैसी मूलभूत सुविधाओं के अभाव से जूझ रहे हैं। यदि कहीं ये सुविधाएं पहुंच भी पाई हैं तो आधी-अधूरी ही। दूरदराज के इलाकों में होने के कारण प्रशासनिक अमला की इन गांवों तक पहुंच की बात भी मुश्किल से ही सुनने में आती है। राजस्थान में सीमा से सटे गांवों के विकास के लिए धरातल पर काम हो, इसकी जरूरत लम्बे समय से महसूस की जा रही है। वह इसलिए भी क्योंकि युद्धकाल में इन्हीं गांवों में बसे लोगों ने सुरक्षा बलों का हर पल साथ दिया है।

बॉर्डर से जुड़े गांवों के विकास के लिए केन्द्र सरकार ने उत्तर भारत में वाइब्रेंट विलेज योजना लागू कर रखी है। योजना के तहत पहले चरण में 4800 करोड़ रुपए की लागत से 19 जिलों के चुनिंदा गांवों में विकास की नई इबारत लिखने का काम शुरू भी हो गया है। पंजाब, गुजरात, राजस्थान के सीमावर्ती गांवों को फिलहाल इस योजना से वंचित रखा गया है। इस योजना के तहत काम होने पर बॉर्डर के गांवों में मूलभूत सुविधाएं तो बढ़ेंगी ही, लोगों को रोजगार के अवसर भी मिलेंगे। ऐसे में पलायन के कारण खाली हो रहे इन गांवों में फिर से बसावट नजर आने लगेगी। इस तथ्य को भी ध्यान रखना होगा कि पुरानी पीढ़ी ने अभावों में रहकर भी गांवों को नहीं छोड़ा है। नई पीढ़ी इन गांवों में मोबाइल नेटवर्क नहीं होने के कारण रहना ही नहीं चाहती। सरकारों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया तो इंटरनेट और मोबाइल वाली यह पीढ़ी गांव में नहीं टिकेगी। ऐसे में बात यह भी करनी जरूरी हो गई है कि बॉर्डर के इन गांवों में युवा नहीं रहे तो सामरिक सुरक्षा को लेकर भी मुश्किलें आ सकती हैं। बॉर्डर के गांवों के युवाओं के साथ बीएसएफ, सेना और पुलिस समन्वय रखती है, ताकि ये युवा देशभक्ति से ओतप्रोत रहते हुए हर मुश्किल घड़ी में तैयार रहें। इन युवाओं का ही गांवों से मोह खत्म हो गया तो देर-सवेर यहां सुविधाएं जुटाने का भी कोई अर्थ नहीं निकलने वाला। जरूरत इन पहले गांवों में पहल करने की है।

- रतन दवे
ratan.dave@in.patrika.com

अंतराष्ट्रीय नशा निषेध दिवस आज: नवयुवकों में फैशन और दिखावे के कारण भी नशाखोरी की प्रवृत्ति बढ़ रही है

नशे से मुक्ति का संकल्प है विकसित भारत की तरफ कदम

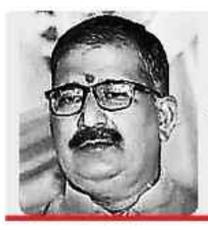

प्रो. आर. एन. त्रिपाठी
प्रोफेसर, समाज शास्त्र काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी और सदस्य, उत्तरप्रदेश लोकसेवा आयोग
@patrika.com

मादक द्रव्य की तस्करी में बड़े-बड़े पूंजीपति तथा ऊंचे तबके के लोग भी शामिल हैं। साथ ही नितांत गरीब तथा बेरोजगार युवा भी पैसा कमाने के लिए इस तरह के अपराध में लिप्त हो जाते हैं।

किसी भी समाज में जब हम उसके सामाजिक विघटन के मूल तत्वों की तरफ देखते हैं तो इसमें मुख्य वैयक्तिक विघटन होता है। आज व्यक्ति में विभिन्न तरीकों से उसके व्यक्तित्व का क्षरण हो रहा है। इन सबमें सबसे बड़ा क्षरण मादक द्रव्यों के व्यसन से हो रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन इसी को देखते हुए 26 जून को 'नशा मुक्त संसार' का नारा दे रहा है तथा इस बार उसकी मुख्य थीम है कि 'सबूत स्पष्ट हैं, रोकथाम में निवेश करें।' अंतरराष्ट्रीय 'नशा निषेध दिवस' इसलिए मनाया जा रहा है ताकि नशा मुक्त विश्व बन सके और नशे की तस्करी बंद हो सके।

अंतरराष्ट्रीय नशा निषेध दिवस पूरे विश्व में मनाया जाना चाहिए, 1987 के दिसंबर माह में संयुक्त राष्ट्र महासभा में इसका जिक्र किया गया था। नशीली पदार्थों और उनकी गैर कानूनी तस्करी के विरुद्ध हर साल 26 जून को अंतरराष्ट्रीय नशा निषेध दिवस मनाया जाना चाहिए, इसका आह्वान किया गया था। इसके बाद पहला अंतरराष्ट्रीय नशा निषेध दिवस 26 जून 1989 को मनाया गया। इसका मुख्य उद्देश्य नशीले पदार्थों के सेवन से होने वाली हानि से लोगों को अवगत कराना और उनकी गैरकानूनी तस्करी का विरोध करना था। अब इस दिन हर वर्ष विश्वभर में नशे के खिलाफ जागरूकता से जुड़े कार्यक्रम किए जाते हैं। सामाजिक तौर पर विश्लेषण करें तो देखेंगे यह अवगुण हर वर्ग में बढ़ता ही चला जा रहा है। इतना ही नही सामाजिक परंपराओं की तरह व्यसनी व्यक्ति इसे पीढ़ी दर पीढ़ी आगे भी बढ़ा रहे हैं। इसका परिणाम यह है कि नई पीढ़ी के जिस व्यक्ति को समाज के लिए नवाचार करना चाहिए था, वह पुरानी पीढ़ी के किसी व्यसनी व्यक्ति से जुड़कर इस दलदल में फंस जाता है। तकनीकी और मेडिकल शिक्षा से जुड़े बड़े-बड़े संस्थानों में भी कई विद्यार्थी नशे में लिप्त नजर आते हैं। व्यसन पहले व्यक्ति के व्यक्तित्व को तोड़ता है। फिर वह सामाजिक ताने-बाने को तोड़ता है, संस्था और परिवार को तोड़ता है। इसके बाद प्रदेश और देश को नुकसान पहुंचाता है।

नशे की गिरफ्त में आए व्यक्ति अपना एक अलग समाज बना लेते हैं। व्यसनी सामाजिक झंझावात से मुक्ति नशे में खोजता है। नशाखोरी की समस्या किसी एक राष्ट्र या देश प्रदेश तक सीमित नहीं है, बल्कि विश्वव्यापी है। इसके पीछे के कारणों की चर्चा करें तो बात स्पष्ट हो जाता है कि नशे की तस्करी और बिक्री का बहुत ही लाभकारी व्यापार है। सीमित समय तथा अल्प संसाधन से व्यक्ति खूब पैसा बना लेता है। इसलिए मादक द्रव्य की तस्करी में बड़े-बड़े पूंजीपति तथा ऊंचे तबके के लोग भी शामिल हैं। साथ ही नितांत गरीब तथा बेरोजगार युवा भी पैसा कमाने के लिए इस तरह के अपराध में लिप्त हो जाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र व्यसन की परिभाषा में कहता है कि जिसकी लत लग जाए वही नशा है। अवैध नशीली दवाएं संपन्न-विपन्न व्यक्ति दोनों प्रयोग कर रहे हैं। संपन्न वर्ग में नशे के लिए हेरोइन, चरस, इंजेक्शन, सर्प विष, नशीली दवाइयों का प्रयोग बढ़ रहा है। गरीब तबका गांजा, अफीम, देशी शराब जैसे नशे का इस्तेमाल ज्यादा करता है। भारत की समुद्री सीमा कई देशों से लगी हुई है। पड़ोस के कुछ देशों में मादक द्रव्यों की तस्करी के लिए माहौल है। इस हालत में भारत के लिए नशे के अवैध व्यापार को रोकना बड़ी चुनौती है।

लोगों को नशे की गिरफ्त से बचाने के लिए हमें वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर काउंसलिंग की आवश्यकता है। समाज का जो प्रबुद्ध वर्ग है, उसका दायित्व बनता है कि वह समाज के प्रति विशेष चेतन हो और आगे आए। नवयुवकों में फैशन और दिखावे के कारण भी नशे की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इसको रोकना चाहिए, उन्हें समझाना होगा। परिवार, मनोवैज्ञानिक सलाहकार, डॉक्टर, अध्यापक, सभी लोगों को एक साथ समन्वय टीम बनाकर व्यसनी व्यक्ति तक पहुंचना होगा। मानवाधिकार संगठनों, जागरूकता में लगी संस्थाओं, कानूनविदों, समाजशास्त्रियों, धर्मगुरुओं को भी आगे आना होगा। कानूनी तौर पर दुकानों के निरीक्षण, डॉक्टरी पर्चों का हिसाब, आधार कार्ड पर ही नशे वाली दवाइयों की खरीद-फरोख्त, सीसीटीवी कैमरों के विस्तार, समय-समय पर ड्रग पॉलिसी में परिवर्तन करने जैसे कदम उठाकर इस समस्या पर प्रहार किया जा सकता है।

विकसित भारत के लक्ष्य को या विकसित विश्व के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए नशे से मुक्ति आवश्यक है। समय रहते अगर इस समस्या पर गंभीरता से ध्यान नहीं दिया गया तो यह समस्या दिन दूनी रात चौगुनी बड़ी होती जाएगी। अपने अगल-बगल के जो भी व्यक्ति नशे की गिरफ्त में हैं, उनको इससे मुक्त कराने के लिए सभी को प्रयास करना चाहिए। विकसित भारत का लक्ष्य पाने के लिए यह शुरुआत जरूरी है।

आपकी बात

जरूरी है तालमेल

तीर्थ स्थलों पर भीड़ प्रबंधन पर ध्यान नहीं दिया जाता। इससे हादसे होते रहते हैं। तीर्थों से जुड़े ट्रस्टों और प्रशासन के बीच तालमेल होना आवश्यक है।

-नरेंद्र शर्मा, कोटा

आज का सवाल

वर्षा जल निकासी की समय रहते व्यवस्था क्यों नहीं की जाती?

ईमेल करें
edit@epatrika.com

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की प्रतिक्रियाएं

इसे स्कैन करें

पत्रिकायन का सवाल था, ' तीर्थ स्थलों पर भीड़ प्रबंधन को लेकर सजगता क्यों नहीं बरती जाती?' ऑन लाइन भी देखें।
https://shorturl.at/VLdgb

संपादकीय

जाति से ज्यादा जरूरी है कौशल-जनगणना

एक आधुनिक समाज बनाने के लिए नई सोच जरूरी है। अगर दशकों से जारी आरक्षण के बाद भी पिछड़ी जातियां आर्थिक-सामजिक-शैक्षिक मुख्यधारा में नहीं हैं तो नया हल तलाशना होगा। आंध्र प्रदेश के नए सीएम ने अपने राज्य में पहला और सबसे अहम फैसला स्किल-सेंसस (कौशल-जनगणना) कराने का लिया ना कि जाति-आधारित जनगणना। इस गैर-राजनीतिक लेकिन शुद्ध विकास-परक फैसले के पीछे कारण है पीएलएफएस की ताजा रिपोर्ट, जिसके तहत बेहतर साक्षरता दर के बावजूद राज्य में बीमारू राज्यों से ज्यादा बेरोजगारी पाई गई। सरकार और देश के नीति-निर्माताओं को भी आंध्र मॉडल लागू करना चाहिए ना कि यह कहकर खुश होना चाहिए कि देश में दुनिया के सबसे ज्यादा (56 लाख) प्रशिक्षित युवा हैं। नीति आयोग और शिक्षा मंत्रालय यह मूल समस्या नहीं समझ पा रहे हैं कि उसके अपने सर्वे के अनुसार भी आखिर क्यों किसी हाई-स्कूल या इंटर तक पढ़ाई किए युवक के मुकाबले स्नातक के बेरोजगार होने के चांसेस ज्यादा हैं। पीएलएफएस की रिपोर्ट में पाया गया कि राष्ट्रीय स्तर पर 15-29 वर्ष के युवाओं में बेरोजगारी 10% (सभी आयु वर्ग के औसत से तीन गुने से भी ज्यादा) क्यों है और क्यों यह प्रतिशत बिहार में (13.9), यूपी में (7), एमपी में (4.4) और राजस्थान में (12.5) है। ग्रेजुएट्स में यह बेरोजगारी इन राज्यों में क्रमशः 16.6,11, 9.3 और 23.1 प्रतिशत है, जबकि अपेक्षाकृत शिक्षित आंध्र में 24 प्रतिशत। दरअसल न तो युवा रोजगारपरक शिक्षा की ओर उन्मुख हैं ना ही तकनीकी शिक्षा जरूरत के मुताबिक है। सन् 2015 के नीति-पत्र में ये दोनों कमियां मानी गईं। एक साल पहले स्वयं नीति आयोग ने बताया कि आईटीआई-ट्रेंड हर एक हजार युवाओं में एक नौकरी पा सका है क्योंकि प्रशिक्षण उद्योगों की जरूरत से 20 साल पुराना है। नई एआई क्रांति के मद्देनजर तकनीकी शिक्षा आईटीआई से आईआईटी तक बदलनीहोगी।

सुर्खियों से आगे • सरकार सक्षम है, परीक्षा प्रणाली की साख लौटाने का फैसला ले सकती है

परीक्षाओं की खोई साख लौटे तो बात बने!

नवनीत गुर्जर
navneet@dbcorp.in

बहुत से काम होते हैं सरकार के पास!

अब भी हैं।

नई केंद्र सरकार को खेतों पर चांद लटकाने, हवाओं को गति देने और फुदकते पत्थरों को पंख देने जैसे बड़े काम छोड़कर छोटे-छोटे किंतु जरूरी काम सबसे पहले करने चाहिए। इन जरूरी कामों में सबसे पहला काम प्रतियोगी परीक्षाओं की खोई हुई साख लौटाने का हो तो इससे बेहतर कुछ नहीं हो सकता।

लाखों बच्चों का भविष्य इसी पर निर्भर करता है। उनके पैरेंट्स की चिंता भी इसी से मिटेगी।

नीट का झमेला चल रहा है। देशभर में।

कहीं से पर्चा लीक होने के भेद खुल रहे हैं। कहीं से ओएमआर शीट में गड़बड़ी के नमूने आ रहे हैं। ग्रेस मार्क्स का भेद अब तक खुल नहीं पाया है। दुविधा यह है कि जो बच्चे इस पर्चा लीक का लाभ ले चुके या जिन्हें ग्रेस मार्क्स का फायदा मिला, वे तो संख्या में बहुत कम हैं, ज्यादातर बच्चे तो वे हैं, जिनका धांधली के इस पूरे घटनाक्रम से कोई वास्ता ही नहीं है। असल परेशानी इन्हीं बच्चों की है।

वे अपने ही वजूद की आंच के आगे खड़े होकर तप रहे हैं। किसी अदृश्य पीड़ा के ताप से। किसी दहाड़ती हुई चुप्पी के शोर से।

कई सवाल हैं उनके मन में। यदि परीक्षा रद्द हो गई तो दोबारा देनी होगी? दोबारा इतने मार्क्स आ पाएंगे या नहीं, यह कैसे कह सकते हैं? परीक्षा रद्द नहीं हुई तो अदालती फैसलों से पहले काउंसलिंग होगी या नहीं? काउंसिलिंग हो भी गई और उसके बाद फैसला कुछ और आ गया तो क्या होगा?

...और सबसे बड़ा सवाल यह है कि अगर दोबारा परीक्षा हुई, तो उसमें कोई धांधली नहीं होगी, इसकी गारंटी क्या है?

उधर पैरेंट्स अपने बच्चों से भी ज्यादा परेशान हैं। बुरा हाल है। भावनात्मक उबाल अपने चरम पर है।

भावनात्मक इसलिए कि हम हिंदुस्तानी माता-पिताओं के लिए बच्चों का भविष्य बड़ा भावुक विषय होता है। दरअसल माता-पिता किसी समस्या या अड़चन के कारण अपने जीवन में जो नहीं कर पाए, वह सब अपने बच्चों से करवाना चाहते हैं।

मैं किसी वजह से डॉक्टर नहीं बन पाई तो अपनी बच्ची से वह सपना पूरा करवाकर ही मन को शांति मिलेगी। इस तरह के सपने हर पैरेंट पाले रहता है। सही भी है। ये बात और है कि कई बार अपने सपने को बच्चों से पूरा करवाने की इस जिद में कई बार हम उनकी रुचि को तवज्जो नहीं दे पाते।

परेशानी इन्हीं बच्चों की है...

जो बच्चे इस पर्चा लीक का लाभ ले चुके या जिन्हें ग्रेस मार्क्स का फायदा मिला, वे तो संख्या में बहुत कम हैं, ज्यादातर बच्चे तो वे हैं, जिनका धांधली के इस पूरे घटनाक्रम से कोई वास्ता ही नहीं है। असल परेशानी इन्हीं बच्चों की है।

लेकिन चूंकि परीक्षा हो चुकी है, इसलिए यहां मामला रुचि का नहीं है। साफ-सुथरी और साख वाली परीक्षा प्रणाली ही अब लाखों बच्चों और उनके माता-पिताओं को तसल्ली दे सकती है। इसका कोई शॉर्ट कट भी नहीं हो सकता। परीक्षा प्रणाली की साख को बनाने और बनाए रखने में तो सरकार के गठबंधन साथियों की तरफ से भी कोई आपत्ति नहीं आएगी।

वैसे भी अब तक गठबंधन सरकार होने के बावजूद इस बार काफी मजबूती के साथ मोदी सरकार अग्रसर है। मंत्रिमंडल उनकी मर्जी से बना और काफी ताकतवर बना।

बड़े दिनों से लोकसभा अध्यक्ष (स्पीकर) को लेकर तरह-तरह की अफवाहें चल रही थीं। कोई कह रहा था कि टीडीपी की ओर से स्पीकर पद की शर्त रखी गई है। कोई कह रहा था कि आंध्र भाजपा की अध्यक्ष- जो चंद्रबाबू नायडू की साली भी हैं- को स्पीकर बनाया जा सकता है।

लेकिन तमाम अफवाहों और आशंकाओं को निर्मूल साबित करते हुए मोदी सरकार ने अपनी ओर से पुराने स्पीकर ओम बिड़ला का ही नाम आगे बढ़ा दिया है। संभवतया वे बुधवार को अठारहवीं लोकसभा के अध्यक्ष चुन भी लिए जाएंगे।

कुल मिलाकर सरकार अब किसी भी फैसले के लिए स्वतंत्र है और सक्षम भी।

इसलिए परीक्षा प्रणाली की साख लौटाने का कोई भी फैसला सरकार पूरी जिम्मेदारी के साथ ले ही सकती है।

इस आलेख पर सुझाव एवं प्रतिक्रिया देने के लिए इस क्यूआर कोड को स्कैन करें

प्रेरणा

जब कभी भी संभव हो विनम्र बनिए और ये हमेशा संभव है। - दलाई लामा

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
ptvijayshankarmehta.com

भोजन प्रसन्नता का कारण बने, तकलीफ का नहीं

शरीर का प्रमुख अंग है हमारा लिवर और आंतें। आंतों का काम केवल भोजन को पचाना ही नहीं है। ऋषि-मुनि कहा करते थे कि अन्न से ही मन बनता है। अब इस प्रक्रिया में थोड़ा गहरे उतरें। इस पर विज्ञान भी सहमत है कि प्रसन्नता के लिए दो हॉर्मोन हैं- सेरोटोनिन और डोपामाइन। और इन दोनों ही हॉर्मोन का एक बड़ा हिस्सा शरीर में आंतों में निर्मित होता है। इसलिए भोजन को दवा, पूजन, अच्छे व्यवहार और मेडिटेशन के रूप में माना जाए। हमारे विचार, हमारी भावनाएं और हमारे भीतर की संवेदनाएं हमारी आंतों को प्रभावित करती हैं। इसलिए भोजन करते समय किसके साथ बैठे हैं, ये भी महत्वपूर्ण है। क्या बातचीत की जा रही है, ये और भी महत्वपूर्ण है। यदि नकारात्मक संवाद चल रहा है, माहौल अपवित्र है, तो भोजन आपको तकलीफ दे जाएगा। पति-पत्नी एक प्रयोग कर सकते हैं। एक साथ बैठकर भोजन करें। महीने में एक या दो बार एक थाली में भी कर सकते हैं। क्योंकि इन दोनों के बीच की शांति, समझ, सहयोग का परिणाम पूरा परिवार लेता है। ये दोनों एक साथ भोजन करें, तो निश्चित रूप से इनके भीतर की तरंगें और भोजन का परिणाम, पूरे परिवार की प्रसन्नता का कारण बनेगा।

• Facebook: Pt. Vijayshankar Mehta

अर्थात् • हालात ऐसे कि दुनिया को प्रलय के लिए ज्यादा कुछ नहीं, बस एक-दो सिरफिरे नेता चाहिए...

दुनिया एक बार फिर एटमी लड़ाई के मुहाने पर है

अंशुमान तिवारी
मनी-9 के एडिटर
anshuman.tiwari@tv9.com

साल 1962, महीना अक्टूबर, क्यूबा में सोवियत मिसाइलों की तैनाती का प्रमाण मिलते ही अमेरिकी इतिहास में पहली बार डेफकॉन 2 अलर्ट की मुनादी हो गई। यानी परमाणु हमले की तैयारी का अलर्ट! मिसाइलों पर न्यूक्लियर वॉरहेड लाद दिए गए। एयरफोर्स के जहाज बम-मिसाइल लादकर हवाई पट्टियों पर गुर्राने लगे। बस एक इशारा और क्यूबा पर ताबड़तोड़ हमला हो जाना था।

राष्ट्रपति को सुरक्षित रखने के इंतजाम सक्रिय हो गए। जॉन एफ. कैनेडी ने सोवियत विरोधी एयर चीफ जनरल कर्टिस से पूछा कि क्यूबा पर जवाबी हमले में उनकी कितनी मिसाइलें तबाह हो सकती हैं। कर्टिस ने कहा 90 फीसदी। केनेडी ने पूछा, और बची हुई? कर्टिस बोले, पूरी तरह खात्मा होने की गारंटी नहीं दे सकता। केनेडी ने कहा, उनकी शेष 10 फीसदी मिसाइलें मियामी, शिकागो यहां तक कि न्यूयॉर्क तक को तबाह कर देंगी। कर्टिस के पास उत्तर नहीं था। केनेडी ने कहा यह पागलपन रोकना होगा।

राष्ट्रपति के भाई रॉबर्ट केनेडी रात के अंधेरे में वाशिंगटन के सोवियत दूतावास पहुंचे। राजदूत अलेक्जेंडर डॉब्रीनिन के जरिए सोवियत राष्ट्रपति निकिता ख्रुश्चेव से समझौता हुआ। अमेरिका ने क्यूबा पर हमला न करने गारंटी दी, टर्की से ज्यूपिटर मिसाइलें (ऑपरेशन पॉट पाई) हटाईं, तब क्यूबा से मिसाइलों की विदाई हुई।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद अगले पचास साल तक सोवियत रूस के साथ कोल्ड वॉर अमेरिका की राजनीति, संस्कृति, अर्थव्यवस्था और समाज का हिस्सा बना गया था। अमेरिकी नेताओं की पीढ़ियां इसी खौफ के सहारे चुनाव जीतती रहीं। हथियारों की होड़ नया अमेरिकन ड्रीम थी, जिसमें थर्मो-न्यूक्लियर हथियारों का पूरा जखीरा जुटा लिया गया। 1987 में रेगन-गोर्बाचोव समझौते और सोवियत संघ के विघटन के बाद दुनिया को जो राहत मिली थी, अब उसकी उलटी गिनती शुरू हो गई है। उत्तर कोरिया से चीन और ईरान तक पेशबंदी करते राष्ट्रपति पुतिन न्यूक्लियर जंग की चेतावनी दे रहे हैं और इसे कोई हल्के में नहीं ले रहा। विनाशक हथियारों की होड़ है।

टूट गया धैर्य : 22 फरवरी 2023 को यूक्रेन पर रूस के हमले की पहली बरसी थी। इसी दिन पुतिन ने ऐलान किया कि रूस अमेरिका के साथ स्टार्ट संधि में भागीदारी को निलंबित कर रहा है। जनसंहारक हथियारों की होड़ को लेकर अमेरिका और रूस के बीच संधियों में यह आखिरी सक्रिय संधि थी। इसमें नए परमाणु हथियारों पर रोक लगाई गई। संधि के स्थगित होने के बाद रूस के नाभिकीय हथियारों की जानकारी गोपनीय हो जाएगी। ठीक पांच माह बाद अगस्त 2023 में अमेरिका में रक्षा तैयारियों पर उठ रहे सवालों के बीच पेंटागन के न्यूक्लियर, बायोलॉजिकल और केमिकल डिफेंस प्रोग्राम के सहायक मंत्री डेबरा रोसेनब्लूम ने कहा न्यूक्लियर हथियारों के आधुनिकीकरण में कोई देरी नहीं होगी।

परमाणु युद्ध की तबाही...

1981 में निकोलस मेयर की फिल्म 'द डे आफ्टर' प्रसारित हुई। यह परमाणु युद्ध की तबाही पर केंद्रित थी। इसे अमेरिका में एक करोड़ लोगों ने एक साथ देखा। राष्ट्रपति रोनाल्ड रेगन ने भी। उन्होंने डायरी में लिखा मैं काफी चिंतित हूं। यहीं से 'रेगन-रिवर्सल' की शुरुआत हुई।

बनने लगीं मिसाइल : जनवरी 2024 में नॉर्थरोप ग्रुमान ने बताया कि उसने अमेरिका की नई एलजीएम 35ए सेंटिनल न्यूक्लियर मिसाइल के लिए सेकंड स्टेज सॉलिड मोटर रॉकेट का सफल परीक्षण कर लिया है। ग्रुमान उन चार कंपनियों में शामिल है, जिन्हें अमेरिका में न्यूक्लियर हथियारों की नई पीढ़ी तैयार करने का ठेका मिला है। अमेरिका अपने दो दशक पुराने न्यूक्लियर ट्रायड यानी जमीन से हवा में, समुद्री और एयरक्राफ्ट मिसाइल ढांचे का आधुनिकीकरण रहा है। मिनटमैन थर्ड मिसाइलों को सेंटिनल इंटरकॉन्टिनेंटल बैलिस्टिक मिसाइल, कोलंबिया क्लास बैलिस्टिक मिसाइल सबमरीन को ओहायो क्लास से और बी21 बॉम्बर एयरक्राफ्ट मिसाइल को बी2 ए स्पिरिट से बदला जाना है। अमेरिका के पास इस समय 3700 न्यूक्लियर हथियार हैं, जिनमें 1700 अलग-अलग जगह तैनात हैं, जबकि शेष एनर्जी विभाग के गोदामों में हैं। इनसे पूरी दुनिया कई बार तबाह हो सकती है। इसमें अधिकांश थर्मो-न्यूक्लियर हैं यानी हिरोशिमा वाले बम से कहीं ज्यादा घातक फ्यूजन बम- जिसका परीक्षण नवंबर 1952 में मार्शल आइलैंड पर हुआ था।

हथियारों की इस नई होड़ के लिए फेडरल बजट से 100 अरब डॉलर का बजट दिया गया है, जिससे खाली पड़े 450 न्यूक्लियर बेस पर नई मिसाइलें लगाई जाएंगी। नेशनल न्यूक्लियर सिक्योरिटी एडमिनिस्ट्रेशन करीब 16.5 अरब डॉलर से पूरे जखीरे का आधुनिकीकरण करेगा। 1987 के बाद एटमी हथियारों पर इतनी सक्रियता दिखी है।

अंतरिक्ष में युद्ध : अमेरिका का धैर्य चुकने की कुछ ताजा सूचनाएं हैं। खुफिया एजेंसियां पेंटागन को बता चुकी हैं कि रूस सैटेलाइट ध्वस्त करने वाले न्यूक्लियर हथियार यानी एंटी सैटेलाइट वेपन बना रहा है। रूस के पास यह तकनीक है, जिसके जरिए बड़े सैटेलाइट से छोटे उपग्रह छोड़े जा सकते हैं, जो अन्य उपग्रहों को बर्बाद करने की क्षमता रखते हैं। इनमें भी नाभिकीय हथियारों से लैस उपग्रहों से होने वाली तबाही पारंपरिक न्यूक्लियर वेपन से कई गुना होगी। सैटेलाइट दुनिया का भविष्य हैं। लोअर अर्थ ऑरबिट में सैटेलाइट की होड़ चरम पर है। रूस की यह तैयारी अंतरिक्ष के शांतिपूर्ण इस्तेमाल की संधि के खिलाफ है। अमेरिकी एजेंसियां बता रही हैं कि रूस नए किस्म के न्यूक्लियर हथियार बना रहा है, जिन्हें एक्जॉटिक वेपंस कहा जाता है। ये स्पेस से भी चलाए जा सकते हैं। एआई, स्पेस और थर्मो-न्यूक्लियर की तिकड़ी के बाद दुनिया को प्रलय के लिए ज्यादा कुछ नहीं बस एक-दो सिरफिरे नेता चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

वेब भास्कर

पुरस्कृत तस्वीर : एकता में शक्ति का उदाहरण है यह तस्वीर

किंग पेंगुइन की कॉलोनी की तस्वीरें आपने जरूर देखी होंगी। लेकिन यह तस्वीर उनकी एकता का अद्भुत उदाहरण है। विश्वप्रसिद्ध फोटोग्राफर पॉल निक्लेन कहते हैं कि ये किंग पेंगुइन (मॉर्निंग पेंगुइन) अपने भूखे चिक्स का पेट भरने के लिए सुबह-सुबह शिकार पर निकलती हैं। लेकिन किनारे पर मौजूद सील्स और सी-लेपर्ड से बचने के लिए इस तरह समूह में इकट्ठी रहती हैं। अंटार्कटिका के साउथ जॉर्जिया स्थित इस बस्ती में 20 हजार से ज्यादा पेंगुइन हैं। पेंगुइन की कॉलोनियां भी इस तरह होती हैं कि ताकि वे हर तरह के माहौल में फिट हो सकें। पॉल की यह तस्वीर कई अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार जीत चुकी है। **तस्वीर साभार :** Paul Nicklen

दूरदृष्टि • नेतन्याहू की रुचि जंग समाप्त करने में नहीं

इजराइल के लोकतंत्र के सामने अस्तित्व का खतरा

थॉमस एल. फ्रीडमैन
तीन बार पुलित्ज़र अवॉर्ड विजेता एवं 'द न्यूयॉर्क टाइम्स' में स्तंभकार

4 नवंबर, 2022 को- यानी इजराइल की वर्तमान दक्षिणपंथी गठबंधन सरकार के चुनाव जीतने के ठीक बाद- मैंने एक लेख लिखा था- जिसका शीर्षक था : 'जिस इजराइल को हम सब जानते थे, वह अब नहीं है।' इस शीर्षक का उद्देश्य इस बात की चेतावनी देना था कि यह गठबंधन कितना कट्टरपंथी है। उस समय बहुत-से लोग मेरी बातों से असहमत थे। लेकिन मेरा मानना है कि उसके बाद घटी घटनाओं ने उन्हें गलत साबित कर दिया है- और स्थिति आज पहले से भी ज्यादा बदतर हो चुकी है, यानी : 'जिस इजराइल को हम सब जानते थे, वो तो खैर अब नहीं ही है, लेकिन उसकी जगह जिस इजराइल ने ली थी, उसके सामने भी आज अस्तित्व का संकट मंडरा रहा है।'

इजरायल एक क्षेत्रीय महाशक्ति ईरान के खिलाफ मोर्चा खोले हुए है, जिसने अपने सहयोगियों और प्रॉक्सी यानी हमास, हिजबुल्ला, हूतियों और इराक की शिया-मिलिशिया का उपयोग करके इजराइल को एक शिकंजे में जकड़ने में कामयाबी हासिल की है। फिलहाल तो इजराइल के पास इसका कोई सैन्य या कूटनीतिक जवाब नहीं है।

इससे भी बदतर बात यह है कि उसे तीन मोर्चों- गाजा, लेबनान और वेस्ट बैंक- पर युद्ध की संभावना का सामना करना पड़ रहा है, लेकिन एक नए खतरनाक मोड़ के साथ। वो खतरनाक मोड़ यह है कि हमास के विपरीत लेबनान में हिजबुल्ला सटीक वार करने वाली मिसाइलों से लैस है, जो इजरायल के बुनियादी ढांचे के बड़े हिस्से को नष्ट कर सकती हैं। हिजबुल्ला की मिसाइलें इजराइल के हवाई अड्डों से लेकर बंदरगाहों, विश्वविद्यालय परिसरों, सैन्य ठिकानों से लेकर बिजली संयंत्रों तक पर वार कर सकती हैं।

लेकिन इजराइल का नेतृत्व उसके प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू कर रहे हैं, जिन्हें भ्रष्टाचार के आरोपों में जेल जाने से बचने के लिए हर हाल में सत्ता में बने रहना है। और ऐसा करने के लिए उन्होंने अपने जमीर को धुर-दक्षिणपंथी यहूदी चरमपंथियों के हाथों बेच दिया है। उन्होंने उनके साथ गठजोड़ करके सरकार बनाई है। उनके ये सहयोगी इस बात पर जोर देते हैं कि इजराइल को गाजा में तब तक लड़ना चाहिए, जब तक कि वह हमास के आखिरी लड़ाके को न मार दे। इसे वे टोटल-विक्ट्री कहते हैं।

वे हमास के बाद गाजा पर शासन करने के लिए फिलिस्तीनी प्राधिकरण- जिसने ओस्लो शांति समझौते को स्वीकार किया है- के साथ किसी भी तरह की साझेदारी को भी अस्वीकार करते हैं, क्योंकि वे जॉर्डन नदी और भूमध्य सागर के बीच के सभी क्षेत्रों पर इजराइल का पूर्ण नियंत्रण चाहते हैं। और इन क्षेत्रों में गाजा भी शामिल है।

लेकिन अब नेतन्याहू की आपातकालीन युद्ध कैबिनेट जंग को समाप्त करने और गाजा से सुरक्षित रूप से वापस निकलने की योजना में मौजूद खामियों के चलते चरमरा गई है। उनकी सरकार में मौजूद चरमपंथी सत्ता बनाए रखने के लिए अपने अगले कदम पर नजर गड़ाए हुए हैं। वे पहले ही बहुत नुकसान कर चुके हैं, और फिर भी राष्ट्रपति बाइडेन, इजराइल समर्थक लॉबी एआईपीएसी और कांग्रेस में कई लोग अभी तक इस बात को स्वीकार नहीं कर पाए हैं कि यह सरकार वास्तव में कितनी कट्टरपंथी है।

इजराइल का नेतृत्व बेंजामिन नेतन्याहू कर रहे हैं, जिन्हें भ्रष्टाचार के आरोपों में जेल जाने से बचने के लिए हर हाल में सत्ता में बने रहना है। और ऐसा करने के लिए उन्होंने अपने जमीर को यहूदी चरमपंथियों के हाथों बेच दिया है।

उलटे, हाउस स्पीकर माइक जॉनसन और उनके साथियों- जिन्हें 'शरारती तत्व' कहकर संबोधित किया जाना चाहिए- ने नेतन्याहू को 24 जुलाई को कांग्रेस की संयुक्त बैठक को संबोधित करने के उच्च सम्मान से पुरस्कृत करने का निर्णय ले लिया है। कोई और विकल्प न पाकर सीनेट और सदन के शीर्ष डेमोक्रेट्स ने भी इस निमंत्रण पर हस्ताक्षर कर दिए। लेकिन इस रिपब्लिकन-कसरत का अघोषित लक्ष्य डेमोक्रेट्स को विभाजित करना और उनके सबसे प्रगतिशील प्रतिनिधियों से अपमानजनक बातें कहलवाना है, ताकि अमेरिका के यहूदी वोटर्स और डोनर्स का ध्यान डोनाल्ड ट्रम्प की ओर मोड़ा जा सके!

(द न्यूयॉर्क टाइम्स से)

प्रासंगिक • संघ परिवार के एक लाख से ज्यादा कार्यकर्ताओं को बंदी बनाया गया था...

आपातकाल से संघर्ष में संघ का योगदान महत्वपूर्ण था

प्रकाश जावड़ेकर
पूर्व सूचना-प्रसारण मंत्री

प्रकाश जावड़ेकर पूर्व सूचना-प्रसारण मंत्री हाल ही में संपन्न हुए लोकसभा चुनाव में कांग्रेस और इंडी गठबंधन ने एनडीए सरकार पर संविधान को बदलने का आरोप लगाया था। लेकिन सच्चाई तो यह है कि संविधान की तोड़-मरोड़ कांग्रेस ने 49 साल पहले की थी। हमें आज 1975 में लगे आपातकाल के घटनाक्रम को समझने की ज्यादा जरूरत है।

आपातकाल के घटनाक्रम में 12 जून की तिथि महत्वपूर्ण है। इसी दिन गुजरात चुनाव में पहली बार कांग्रेस को हार मिली थी। सभी विपक्षी दलों ने एकजुट होकर संयुक्त मोर्चा के नाम से चुनाव लड़ा था, जिसमें वे जीते थे। संयोग से उसी दिन इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इंदिरा गांधी का लोकसभा चुनाव भ्रष्टाचार के आरोप में निरस्त कर दिया था। इंदिरा जी को अब डर था कि उनका प्रधानमंत्री पद खतरे में है। इसलिए उन्होंने आपातकाल की रणनीति बनाई। इस संदर्भ में 25 जून निर्णायक तारीख है, क्योंकि 25 जून को रामलीला मैदान पर विशाल जनसभा हुई थी, जिसको जेपी और अन्य नेताओं ने संबोधित किया था। इस जनसभा से भयभीत होकर इंदिरा जी ने तुरंत कांग्रेस नेता सिद्धार्थ शंकर राय को बुलाया और उन्हें आपातकाल की योजना बताई।

इसके बाद सिद्धार्थ शंकर राय ने संविधान के अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल लगाने का पत्र तैयार किया। फिर दोनों तुरंत तत्कालीन राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली के पास गए। हमेशा ऐसा प्रस्ताव राष्ट्रपति के पास मंत्रिमंडल की सहमति से ही जाता है। लेकिन केवल खानापूर्ति के लिए दूसरे दिन सुबह छह बजे मंत्रिमंडल की बैठक हुई और उसमें इस प्रस्ताव को स्वीकृत किया गया।

तुरंत देशभर में आदेश रवाना हुए कि सभी विपक्षी दलों के नेताओं को गिरफ्तार किया जाए। उसी दिन और एक काम किया गया कि दिल्ली के समाचार पत्रों के कार्यालय की बिजली काटी गई और इन पर सेंसरशिप लगा दी गई। यह सूचना पाते ही देश भर में संघ परिवार ने सत्याग्रह आंदोलन शुरू किया और उसमें लाखों कार्यकर्ता सहभागी हुए। कुल मिलाकर 1 लाख 10 हजार लोग बंदी बनाए गए, जिनमें एक लाख से ज्यादा संघ परिवार के थे। इससे युवाओं में भी आक्रोश था।

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के हजारों कार्यकर्ताओं ने महाविद्यालय और विश्वविद्यालय के सामने सत्याग्रह किया। केवल गुजरात और तमिलनाडु में विपक्षी दलों की सरकार थी इसलिए वहां थोड़ी राहत थी। लेकिन इसके बावजूद यह राज्य भी भूमिगत आंदोलन के केंद्र बने थे। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने आपातकाल के समय संघ योजना के तहत जिस तरह से जमीनी संघर्ष किया था, उसको लोग हमेशा याद करते हैं।

संघ परिवार के कार्यकर्ता इसलिए भी जोश में थे, क्योंकि उसी दौरान विदेश के कई नेता भी अपने-अपने देशों में जेल में बंद थे। इसमें नेल्सन मंडेला जैसी कद्दावर शख्सियत भी शामिल थी। यही वजह थी कि इससे संघर्ष करने की हमारी मानसिक तैयारी पूरी थी। हममें एक जोश था और होश भी था। 18 जनवरी 1977 को इंदिरा जी ने आपातकाल हटाने की घोषणा की। 20 मार्च को चुनाव का ऐलान किया। जयप्रकाश नारायण, अटलजी, आडवाणी, चरण सिंह, मोरारजी देसाई इन सभी ने तय किया कि 50 दिन का जो अवसर मिल रहा है, उसका उपयोग किया जाए। 26 जनवरी को सभी नेता जेल से रिहा हुए और फिर 50 दिन में इन नेताओं ने जमीन पर जाकर अभूतपूर्व क्रांति लाने वाला काम किया। जनता में कांग्रेस के खिलाफ आक्रोश था। यह चुनाव के नतीजों में भी दिखाई पड़ा। इंदिरा जी रायबरेली से और संजय गांधी अमेठी से चुनाव हार गए थे। जनता पार्टी को 295 सीटें मिली। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर लिखित संविधान को समाप्त करने की जो कोशिश हुई थी, उसे संघ परिवार और उस समय के विपक्ष के संघर्ष से पुनर्स्थापित किया गया था।

आतंक का विरोध जरूरी

आतंकवाद विश्व के समक्ष एक बड़ी चुनौती है. इससे निपटने के लिए व्यापक अंतरराष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है. लेकिन अनेक देश आतंकी संगठनों और सरगनाओं को शरण देते हैं, तो कुछ ऐसे देश भी हैं, जो अपनी विदेश एवं रक्षा नीति के एक तत्व के रूप में आतंक का इस्तेमाल करते हैं. फिर भी ऐसे देश दूसरों को लोकतंत्र, शांति और मानवाधिकार का पाठ पढ़ाने की चेष्टा करते हैं. कनाडा के ऐसे रवैये से क्षुब्ध होकर भारत ने कहा है कि वहां हो रहा आतंकवाद का निरंतर महिमामंडन निंदनीय है. साल 1985 में एयर इंडिया के कनिष्क विमान को बम विस्फोट से तबाह करने की घटना के 39 वर्ष होने के अवसर पर कनाडा में भारतीय उच्चायोग ने यह भी कहा है कि कनाडा में आतंक की प्रशंसा करने वाले आयोजनों को अनुमति देना दुर्भाग्यपूर्ण है. शांति के पैरोकार सभी देशों और लोगों को ऐसे कृत्यों की भर्त्सना करनी चाहिए. कनिष्क बम कांड कनाडा में बसे खालिस्तानी आतंकियों की करतूत थी, जिसमें विमान में सवार सभी 329 लोग मारे गये थे. मृतकों में 86 बच्चे भी थे. आज भी कनाडा, अमेरिका और कुछ अन्य पश्चिमी देशों में पनाह लिये आतंकी एवं अलगाववादी ऐसे हमलों की सराहना करते हैं तथा भारत विरोधी कार्यक्रम करते रहते हैं. इतना ही नहीं, चार दशक बाद भी इस हमले के लिए जिम्मेदार लोगों को कनाडा सजा नहीं दे सका है. शांति एवं लोकतंत्र का समर्थक कहने वाले देश कनाडा की संसद में कुछ दिन पहले खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर को श्रद्धांजलि दी गयी, जिसकी हत्या पिछले साल जून में हुई थी. इस पर कड़ी आपत्ति जताते हुए भारत ने कनाडा से कहा है कि जो लोग भारत के खिलाफ अभियान चला रहे हैं और हिंसा की वकालत कर रहे हैं, उन पर कार्रवाई होनी चाहिए. आज विश्व में भारतीय मूल के लोग सबसे बड़ा प्रवासी समुदाय हैं. जिस भी देश में वे हैं, वहां के विकास में उल्लेखनीय योगदान दे रहे हैं. इस कारण हर जगह उनका बड़ा सम्मान भी है. लेकिन उन देशों में कुछ भारत-विरोधी तत्व समुदाय की एकता और भाईचारे को तोड़ने में लगे हैं. ऐसे गिरोह अमेरिका और कनाडा से लेकर ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया समेत अनेक देशों में सक्रिय हैं. इन देशों की सरकारें भारत के लगातार अनुरोध के बाद भी रोक नहीं रही हैं. भारत को धमकी देने की प्रवृत्ति और भारतीयों पर हमलों की घटनाएं बढ़ती ही जा रही हैं. भारत ने स्पष्ट संदेश दिया है कि राजनीतिक लाभ के हिसाब से आतंक, अतिवाद और हिंसा को नहीं देखा जाना चाहिए तथा दूसरे देशों की एकता एवं अखंडता का पूरा सम्मान किया जाना चाहिए.

भारत ने कनाडा से कहा है कि जो लोग भारत के खिलाफ अभियान चला रहे हैं और हिंसा की वकालत कर रहे हैं, उन पर कार्रवाई होनी चाहिए.

परीक्षा प्रणाली में बड़े सुधार जरूरी

डॉ अजीत रानाडे
अर्थशास्त्री
editor@thebillionpress.org

नेशनल टेस्टिंग एजेंसी (एनटीए) विभिन्न परीक्षाओं के साथ चार बड़ी परीक्षाएं आयोजित करती है- नीट, जेइइ, यूजीसी-नेट और सीयूइटी. बीते कुछ वर्षों से इन सभी परीक्षाओं के अनुभव गड़बड़ियों से अछूते नहीं रहे हैं. इससे छात्रों और अभिभावकों की चिंताएं बहुत बढ़ी हैं. इन परीक्षाओं की तैयारी में अमानवीय दबाव के कारण छात्रों में आत्महत्या के बढ़ते मामलों को भी नहीं भूलना चाहिए.

लगभग 25 वर्ष पहले आइआइटी, बंबई के निदेशक पद का कार्यकाल पूरा करने के तुरंत बाद प्रो सुहास सुखात्मे का एक साक्षात्कार प्रकाशित हुआ था. उनसे एक प्रश्न यह पूछा गया था कि पांच साल के उनके कार्यकाल की कुछ विशेष बातें क्या रहीं. उन्होंने एक पंक्ति में जवाब दिया- 'मुझे किसी ने अपने बच्चे का प्रवेश कराने के लिए नहीं कहा.' इस उत्तर का गहरा महत्व है. इससे पहली बात तो यह निकलती है कि आप निदेशक को प्रभावित कर प्रवेश नहीं पा सकते. दूसरी बात, 'तंत्र' का कोई व्यक्ति ऐसा कहने या करने की सोच भी नहीं सकता. मंत्री, उद्योगपति, राजनेता या अभिजन, कोई भी हो, प्रवेश परीक्षा के अलावा किसी अन्य तरीके से आइआइटी में दाखिला पाने के बारे में सोच नहीं सकता था. यह एक अलिखित नियम था, जो समय के साथ एक कायदा बन गया, जिसे सभी मानते थे. यह नियम संयुक्त प्रवेश परीक्षा की पवित्रता में भरोसे के कारण बना रहा और यह पवित्रता अनुल्लंघनीय थी. इसी कारण अन्य कुछ संस्थानों ने भी इस परीक्षा के अंकों को अपने यहां प्रवेश का आधार बनाया. यह प्रणाली लगभग चार दशकों तक चलती रही, जब केवल पांच आइआइटी संस्थान थे और परीक्षार्थियों की संख्या का प्रबंधन हो सकता था. परीक्षा की पूरी प्रक्रिया का संचालन बारी-बारी से आइआइटी संस्थान करते थे. आइआइटी के प्राध्यापकों की पीढ़ियों ने यह सुनिश्चित किया कि परीक्षा की शुचिता बनी रहे.

लेकिन एक समय के बाद यह संभव नहीं रहा. आपूर्ति और मांग के बीच खाई बढ़ती गयी. आइआइटी में प्रवेश के लाभ आसमान छूने लगे. कोचिंग क्लास उद्योग मनमाने तरह से चलने लगे. ऐसे में सीट बढ़ाने की जरूरत पैदा हुई. आइआइटी संस्थानों की संख्या बढ़ी, प्रवेश अधिक होने लगे और आवेदकों की तादाद भी बहुत हो गयी. साल 2013 के आसपास यह गंभीर नीतिगत चर्चा होने लगी कि सभी इंजीनियरिंग और मेडिकल संस्थानों के लिए देशभर में एक परीक्षा की व्यवस्था हो. इसका उद्देश्य छात्रों और अभिभावकों को कई प्रवेश परीक्षाओं में बैठने की मुश्किलों से राहत दिलाना था. साथ ही, इससे देश में परीक्षाओं के स्तर भी समान होते. कोचिंग उद्योग द्वारा पैदा की गयी खाई और उनकी भारी कमाई से जुड़ी चिंताएं भी थीं. सो, हम 'एक परीक्षा' व्यवस्था में आ गये. साल 2017 में एक अलग एजेंसी गठित की गयी, जिसे नेशनल टेस्टिंग एजेंसी (एनटीए) नाम दिया गया. यह एजेंसी विभिन्न परीक्षाओं के साथ चार बड़ी परीक्षाएं आयोजित करती है- मेडिकल प्रवेश के लिए नेशनल एलिजीबिलिटी-कम-एंट्रेंस टेस्ट (नीट), इंजीनियरिंग प्रवेश के लिए ज्वाइंट एंट्रेंस एग्जाम (जेइइ), यूजीसी-नेट और सेंट्रलाइज्ड यूनिवर्सिटी एंट्रेंस टेस्ट (सीयूइटी). बीते कुछ वर्षों से इन सभी परीक्षाओं के अनुभव गड़बड़ियों से अछूते नहीं रहे हैं. इससे छात्रों और अभिभावकों की चिंताएं बहुत बढ़ी हैं. इन परीक्षाओं की तैयारी में अमानवीय दबाव के कारण छात्रों में आत्महत्या के बढ़ते मामलों को भी नहीं भूलना चाहिए.

इस साल नीट (अंडरग्रेजुएट) और यूजीसी-नेट परीक्षाओं में गड़बड़ी को लेकर बड़ा विवाद खड़ा हो गया है. यूजीसी-नेट परीक्षा 19 जून को होने वाली थी. उसे महज एक दिन की सूचना पर रद्द कर दिया गया. इस परीक्षा में देशभर के 317 शहरों में लगभग नौ लाख छात्र बैठने वाले थे. नेशनल टेस्टिंग एजेंसी ने इसलिए इस परीक्षा को रद्द किया क्योंकि उसे पर्चे लीक होने की आशंका थी. इससे पहले से ही नीट (अंडरग्रेजुएट) का मामला गर्म था, जिसके परिणाम चार जून को घोषित हुए थे. संयोग से उसी दिन लोकसभा चुनाव के नतीजे भी आये थे. इस परीक्षा में 571 शहरों और 4750 केंद्रों में 24 लाख छात्र शामिल हुए थे. लेकिन परिणामों में गड़बड़ियां लग रही थीं. जितने अंक लाकर पिछले साल 6800 के आसपास रैंक हासिल की जा सकती थी, इस बार उतने अंक में 21 हजार की रैंक मिली. इतना ही नहीं, 67 छात्रों को पूरे अंक मिले, जिनमें से छह छात्रों के क्रमांक एक ही अनुक्रम में थे और इनका परीक्षा केंद्र भी एक ही था. इससे रोष फैलना स्वाभाविक था. जब छात्रों ने सोशल मीडिया पर अपने अंकों को साझा किया, तो एक अजीब-सी बात देखी गयी, जिसका खुलासा एनटीए ने नहीं किया था. वह बात यह थी कि 1563 छात्रों को ग्रेस मार्क्स दिये गये थे, जिसके बारे में किसी पूर्व शर्त की घोषणा नहीं की गयी थी. ऐसे अंक दिव्यांग छात्रों को ठोस कारणों से दिये जा सकते हैं, लेकिन इस मामले में वे इसलिए दिये गये क्योंकि परीक्षा केंद्र पर प्रश्न पत्र बहुत देर से पहुंचे थे.

तब तक पूरा मामला सर्वोच्च न्यायालय पहुंच चुका था. ग्रेस मार्क्स को रद्द किया गया और पुनः परीक्षा का आदेश दिया गया. बड़े पैमाने पर पर्चा लीक होने की आशंका तथा एनटीए के दोषपूर्ण प्रणाली से जुड़े सवाल अभी हैं. ऐसा लगता है कि नकल का बड़ा घोटाला हुआ है. इस संबंध में बिहार और गुजरात में कुछ गिरफ्तारियां भी हुई हैं. न तो यह कहानी अभी खत्म हुई है और न ही छात्रों और अभिभावकों का भारी तनाव कम हुआ है. आज बड़े बदलावों और सुधारों की आवश्यकता है. ऑप्टिक मार्क्स रिकॉग्निशन (ओएमआर) के इस्तेमाल वाली परीक्षाओं के लिए उनको छापने, ढोने और सुरक्षित केंद्रों पर ले जाने की जरूरत होती है. अब ऐसी व्यवस्था की प्रासंगिकता नहीं है. महाराष्ट्र की एक महत्वपूर्ण सरकारी परीक्षा एजेंसी लगभग 15 साल पहले ही स्क्रीन-बेस्ड सिस्टम को अपना चुकी है. अत्याधुनिक तकनीकों के इस दौर में हमें ओएमआर जैसे तरीके की जरूरत नहीं है. कंप्यूटर से सवालों के क्रम को ऐसे बदला जा सकता है कि सवाल बनाने वाले को इसका पता पर्चा सामने आने पर ही लगे. तकनीक आधारित समाधानों को देश में कई जगहों पर अपनाया गया है. हमें एक परीक्षा और एक राष्ट्रीय एजेंसी पर भारी दबाव को कम करना चाहिए. हम दो या इससे अधिक टेस्ट की व्यवस्था कर सकते हैं, जो प्रतिस्पर्धात्मक हों. इसमें कुछ निजी कंपनियों को भी शामिल किया जा सकता है. तीसरा सुधार दीर्घकालिक है, जिसमें हमें मांग और आपूर्ति की बड़ी खाई को कम करना होगा. इसका यह भी अर्थ है कि हम शिक्षा क्षेत्र को जकड़न से मुक्त करें तथा उच्च शिक्षा के संस्थानों को पाठ्यक्रम तय करने, शिक्षक भर्ती करने और उनका वेतन तय करने, शुल्क का निर्णय लेने आदि में अधिक स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता दें. अन्यथा हमारे लाखों युवा अपनी महत्वपूर्ण युवावस्था को मनोवैज्ञानिक बोझ के साथ परीक्षा की तैयारी और बार-बार परीक्षा देने में बर्बाद करते रहेंगे, जहां सफलता मिलना लॉटरी लगने से भी अधिक मुश्किल है. **(ये लेखक के निजी विचार हैं.)**

पहचान के लिए जूझते कर्नाटक के बेडगंपना आदिवासी

प्रो टीवी कट्टीमनी
कुलपति
केंद्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश
tvkattimani@gmail.com

आदिवासियों का इतिहास प्रमुख रूप से मौखिक है और अधिकांश मामलों में उनका दस्तावेजीकरण नहीं किया गया है. यह बात बेडगंपना पर भी लागू होती है. बेडगंपना से जुड़ी एक प्रमुख मौखिक कहानी बेडर कणप्पा नामक शिकारी से जुड़ी है, जिसे अर्जुन का पुनर्जन्म कहा जाता है.

कर्नाटक के चामराजनगर जिले के हनूर तालुका का मले महादेश्वर पहाड़ी क्षेत्र अपने जीवंत सांस्कृतिक परिदृश्य से समृद्ध है. इसके केंद्र में दो आदिवासी समुदाय हैं- बेडगंपना और सोलिगा. सोलिगा को अनुसूचित जनजाति के रूप में पहचाना जाता है, पर उनके करीबी पड़ोसी बेडगंपना अभी भी अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर रहे हैं. विभिन्न रिपोर्टों के अनुसार कर्नाटक के चामराजनगर जिले में लगभग 31,500 बेडगंपना रहते हैं और कुछ तमिलनाडु के सीमावर्ती इलाकों में भी हैं. राज्य सरकार की सामाजिक श्रेणी की सूची में बेडगंपना नहीं है. इस आदिवासी समुदाय को वीरशैव लिंगायत के साथ विलीन किया गया है, जिसे राज्य की पिछड़ी समुदाय सूची में रखा गया है. शब्द 'बेड' शिकारी को संदर्भित करता है, जबकि 'गम' समूह और 'पना' जाति को इंगित करता है. इस प्रकार 'बेडगंपना' का अर्थ है 'शिकार करने वाला जाति समूह'. बेडा, बेडार या बेदारा जैसे समान आदिवासी समूहों को जनजातियों के रूप में सूचीबद्ध किया गया है, पर बेडगंपना किसी जाति या जनजाति की सूची में नहीं है.

आदिवासियों का इतिहास प्रमुख रूप से मौखिक है और अधिकांश मामलों में उनका दस्तावेजीकरण नहीं किया गया है. यह बात बेडगंपना पर भी लागू होती है. बेडगंपना से जुड़ी एक प्रमुख मौखिक कहानी बेडर कणप्पा नामक शिकारी से जुड़ी है, जिसे अर्जुन का पुनर्जन्म कहा जाता है. महाभारत में उल्लेख है कि अर्जुन की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने उन्हें पाशुपात अस्त्र प्रदान किया. उन्होंने उन्हें कलियुग में बेडर कणप्पा नामक एक शिकारी के रूप में पुनर्जन्म लेने का आशीर्वाद भी दिया, जिसे बेडगंपना का पूर्वज कहा जाता है. शैव भक्त शिकारी बेडर कणप्पा का मंदिर आंध्र प्रदेश के श्रीकालहस्ती में स्थित है. इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि इतिहास के अनुसार लगभग 600 वर्ष पूर्व बेडगंपना के पूर्वज श्रीकालहस्ती में रहते थे, जो बाद में एक शाही विवाह के कारण कर्नाटक चले गये. माना जाता है कि 14वीं शताब्दी में मले महादेश्वर स्वामी, जिन्हें महादेश्वर बेट्टा की सात पहाड़ियों का रक्षक कहा जाता है, लोगों को अकाल से बचाने के लिए इस स्थान पर पहुंचे. उनके दो भक्त थे, जो भाई थे- करय्या और बिलय्या. जहां करय्या को सोलिगा का महान पूर्वज कहा जाता है, उसी तरह बिलय्या बेडगंपना के पूर्वज माने जाते हैं. मले महादेश्वर स्वामी ने उन्हें शिकार छोड़ने की सलाह दी. बिलय्या का परिवार इस पर सहमत हो गया, लेकिन चूंकि यह क्षेत्र मुख्यतः पहाड़ी है और कृषि करना कठिन है, इसलिए करय्या के परिवार ने शिकार को अपना मुख्य व्यवसाय बनाये रखने का फैसला किया. इस कारण सोलिगा और बेडगंपना के बीच कोई विवाह संबंध नहीं है. बेडगंपना ने खुद को 'बेडगंपना लिंगायत' के रूप में संदर्भित किया, जिसे हमेशा 'वीरशैव लिंगायत' के साथ मिला दिया जाता है.

बेडगंपना मुख्य रूप से तीन विशेष कारणों से जनजाति होने का अधिकार खो देते हैं- उनके बीच कोई सामाजिक-धार्मिक/सांस्कृतिक असमानता/अस्पृश्यता नहीं देखी जाती है, जनजाति होने के नाते वे शाकाहारी नहीं हो सकते हैं और वे शिवलिंग पहनते हैं एवं लिंगायतों के रीति-रिवाजों का पालन करते हैं. शाकाहारी होने और शिवलिंग पहनने के कारणों की पहले चर्चा की गयी है. असमानता या अस्पृश्यता का पालन जनजातियों को संदर्भित करने का मानदंड नहीं है. देश के किसी भी आदिवासी समुदाय में अस्पृश्यता नहीं है. अस्पृश्यता का मामला अनुसूचित जातियों से संबंधित है. यद्यपि संविधान में जनजातियों की कोई विशेष परिभाषा नहीं है, पर अनुच्छेद 342 अनुसूचित जनजातियों यानी 'बहिष्कृत' और 'आंशिक रूप से बहिष्कृत' क्षेत्रों में रहने वाली 'पिछड़ी जनजातियों' को समझने के लिए 1931 की जनगणना को आधार के रूप में स्वीकार करता है. इसके अलावा, उन्हें पहली बार प्रांतीय विधानसभाओं में भारत सरकार अधिनियम 1935 के तहत प्रतिनिधित्व दिया गया था. स्वतंत्रता के बाद जस्टिस लोकुर समिति (1965) ने आदिम लक्षणों, विशिष्ट संस्कृति, भौगोलिक अलगाव, बड़े पैमाने पर समुदाय के साथ संपर्क में आने की हिचकिचाहट और पिछड़ेपन के आधार पर जनजातियों की पहचान के लिए पांच मानदंड स्थापित किये हैं.

बेडगंपना इन सभी मानदंडों के अंतर्गत आते हैं. वे अन्य प्रकृति पूजा करने वाली जनजातियों की तरह प्रकृति की पूजा करते हैं. बेडगंपना की एक प्रमुख बीमारी एनीमिया है. भारत में एनीमिया की समस्या खासकर सिकल सेल एनीमिया, थैलेसीमिया मुख्य रूप से आदिवासी क्षेत्रों में पायी जाती है. वन अधिनियमों के कारण भूमि स्थानांतरण जैसे मुद्दों का भी बेडगंपना ने सामना किया है. इस समुदाय ने इस तथ्य को भी स्पष्ट कर दिया है कि उनका वीरशैव लिंगायत से कोई संबंध नहीं है. वे विभिन्न सरकारी योजनाओं से भी वंचित है. बेडगंपना जैसी कई गैर-मान्यता प्राप्त जनजातियां हैं. इन कमजोर समुदायों को विनाश और सांस्कृतिक विलुप्ति के रास्ते से बाहर निकालने का समय आ गया है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

रूस-वियतनाम परमाणु ऊर्जा परियोजनाओं के लिए आये साथ

रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन बीते सप्ताह वियतनाम की यात्रा पर थे, जहां उनका स्वागत वियतनामी उप प्रधानमंत्री ट्रान होंग हा और पार्टी के शीर्ष राजनयिक ले होई ट्रुंग ने किया. रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन और उनके वियतनामी समकक्ष टो लैम के बीच हनोई में वार्ता हुई. जहां वियतनाम के राष्ट्रपति ने पुतिन के साथ वार्ता के बाद कहा कि रूस और वियतनाम रक्षा और सुरक्षा के क्षेत्र में सहयोग को मजबूत करेंगे. दोनों देश के नेताओं ने वार्ता के बाद विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग पर कई दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किये. इनमें शिक्षा में सहयोग पर एक समझौता और वियतनाम में परमाणु प्रौद्योगिकी केंद्र की स्थापना के लिए कार्यक्रम पर एक ज्ञापन भी शामिल है. इसके साथ ही रूसी गैस कंपनी नोवाटेक ने पेट्रोवियतनाम के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किया है और वह वियतनाम में एलएनजी परियोजनाएं शुरू करने के लिए तैयार है. नोवाटेक पहले से ही निन्ह थुआन प्रांत में काना एलएनजी पावर परियोजना में शामिल है. वियतनाम के राष्ट्रपति ने आगे कहा कि रूस और वियतनाम ने अंतरराष्ट्रीय कानून के अंतर्गत रक्षा सहयोग बढ़ाने तथा अन्य देशों के साथ ऐसे गठबंधन और संधियां न करने पर सहमति व्यक्त की, जो एक-दूसरे की स्वतंत्रता, संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता को नुकसान पहुंचा सकती हैं. वहीं पुतिन ने जोर देकर कहा कि वियतनाम के साथ व्यापक रणनीतिक साझेदारी को मजबूत करना रूस की प्राथमिकताओं में से एक है. पिछले वर्ष, (द्विपक्षीय) व्यापार में आठ प्रतिशत की वृद्धि हुई. दोनों पक्षों का अंतर-सरकारी आयोग इस पर मिलकर काम कर रहा है. पुतिन ने यह भी कहा कि यूरेशियन आर्थिक संघ और वियतनाम के बीच 2015 के मुक्त व्यापार समझौते के कार्यान्वयन से व्यापार की वृद्धि निश्चित रूप से सुगम हुई है. रूस दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्रों के संगठन के साथ संवाद विकसित करने को बहुत महत्व देता है, जिसके प्रमुख सदस्यों में से वियतनाम भी है.

-धीरेंद्र प्रताप सिंह

जयंती विशेष

राष्ट्रीय स्वाभिमान से कभी समझौता नहीं किया बंकिम ने

कृष्ण प्रताप सिंह
वरिष्ठ पत्रकार
kp_faizabad@yahoo.com

वर्ष 1838 में 26 जून को पश्चिम बंगाल के उत्तरी चौबीस परगना जिले के कांठलपाड़ा गांव के एक समृद्ध बंगाली परिवार में दुर्गादेवी व यादवचंद्र की सबसे छोटी संतान के रूप में जन्मे बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय को आम तौर पर उनके अमर गीत 'वंदेमातरम' के लिए जाना जाता है. इस गीत को न केवल हमारे राष्ट्रीय गान का गौरव प्राप्त है, बल्कि स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान क्रांतिकारियों ने इसका उद्घोष करते हुए स्वतंत्रता की वेदी पर अपने प्राणों की बलि भी दी है.

बंकिम के सभी भारतीय भाषाओं के शीर्षस्थ उपन्यासकार बनने और प्रसिद्धि का शिखर छूने की कथा भी कुछ कम दिलचस्प नहीं है. न उनकी कवि प्रतिभा कुछ कम विलक्षण है, न उनके द्वारा निजी व साहित्यिक जीवन में निभायी गयी ईमानदारी व खुद्दारी. मेदिनीपुर में शुरुआती स्कूली शिक्षा के बाद उन्होंने हुगली के मोहसिन कॉलेज और उसके बाद कोलकाता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में पढ़ाई की तथा 1857 में इसी कालेज से बीए करने वाले पहले भारतीय बने. वर्ष 1869 में उन्होंने कानून की डिग्री और डिप्टी मजिस्ट्रेट पद पर नियुक्ति पायी. कुछ वर्ष तत्कालीन बंगाल सरकार में सचिव के पद पर भी काम किया. उस दौर में अधिकांश बड़े सरकारी पदों पर अंग्रेज ही नियुक्त होते थे और स्वाभिमानी बंकिम का उनसे प्रायः टकराव हो जाता था. वे कोलकाता में कार्यरत थे, तो एक दिन ऐतिहासिक ईडन गार्डन में अंग्रेज कमिश्नर मिनरो अचानक उनसे टकरा गया. वे उसे नजरअंदाज कर आगे बढ़ गये, तो उसने इसे उनकी गुस्ताखी समझ न केवल उनका तबादला करा दिया, पदोन्नति की राह भी रोक दी. वर्ष 1891 में सेवानिवृत्त होने तक उन्होंने इस नौकरी में और भी बहुत कुछ झेला. परंतु वे उन सब को लेकर नहीं, इसे लेकर दुखी रहते थे कि यह नौकरी जब तक रही, उनके स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय होने के रास्ते में बड़ी बाधा बनी रही.

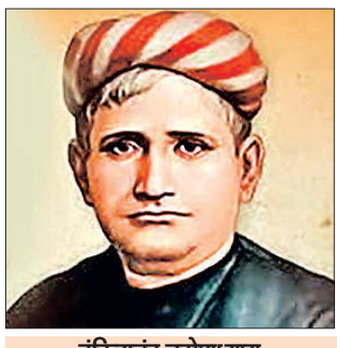

नौकरी के दौरान उन्होंने अपने राष्ट्रीय स्वाभिमान व स्वभाषा प्रेम से कभी समझौता नहीं किया. जब वे युवक ही थे, उनके एक मित्र ने उन्हें अंग्रेजी में पत्र भेजा तो उन्होंने पत्र पढ़ा ही नहीं. यह लिखकर लौटा दिया कि अंग्रेजी न तुम्हारी मातृभाषा है, न मेरी. उन्होंने अपने उपन्यासों में तो गोरे सत्ताधीशों पर तीखे व्यंग्य बाण चलाये ही, 1872 में 'बंग दर्शन नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित की, तब भी वही आलोचनात्मक रवैया बरकरार रखा.

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय
(26 जून, 1838-08 अप्रैल, 1894)

खुद्दारी तो उनके व्यक्तित्व में छुटपन से ही भरी थी. इसके चलते एक बार उन्होंने तय कर लिया कि अपने स्कूल की फीस और पुस्तकों की कीमत की अदायगी अपनी मेहनत की कमाई से ही भरेंगे, तो स्कूल टाइम के बाद एक माली के यहां सिंचाई के काम में उसका हाथ बंटाने लगे. स्कूल के प्रधानाध्यापक को जब पता चला तो उन्होंने पूछा कि यदि उन्हें पैसों की इतनी ही दिक्कत है तो वे फीस माफ करने की अर्जी क्यों नहीं देते? उनका उत्तर था, 'जब मैं अपनी मेहनत से पैसे जुटा सकता हूं, तो फीस माफ क्यों करवाऊं?'

वे बर्दवान (वर्धमान) में मजिस्ट्रेट थे तो उनके सामने एक ऐसा मामला आया जिसमें कलकत्ता (कोलकाता) में अपने बीमार बेटे के पास जा रहे एक गरीब को सिपाही द्वारा यह कहकर पकड़ लाया गया था कि उसने रास्ते में रात को जहां आश्रय लिया, वहां किसी का संदूक लेकर भागने की कोशिश की. जबकि सच्चाई इसके विपरीत थी, क्योंकि गरीब ने सिपाही को संदूक लेकर भागते देखा तो उसका पीछा कर लिया था. अपनी पोल खुलने से डरे सिपाही ने पहले तो उसे संदूक से जो कुछ निकले, उसमें से आधा देने का प्रस्ताव किया, फिर उसके राजी न होने पर उसे जकड़ लिया. अनंतर, शोर मचाकर ग्रामीणों को बुलाया और उनके सामने उसे ही चोर ठहरा दिया. बंकिम को इसका पता चला तो उन्होंने निरपराध गरीब को बचाने की जुगत शुरू की. मामले की सुनवाई के वक्त उसके साथ सिपाही को भी आदेश दिया कि वे तीन कोस की दूरी पर मार डाले गये एक व्यक्ति का बंधा हुआ शव अपने कंधों पर ढोकर कोर्ट तक ले आएं. हट्टे-कट्टे सिपाही को तो कोई समस्या नहीं हुई, परंतु निर्बल गरीब शव के बोझ से थक कर रोने लगा. सिपाही ने कहा कि अब रोते क्यों हो? जब कह रहा था कि संदूक का माल मिल-बांटकर हजम कर लिया जाए, तो तुम्हें ईमानदारी का भूत सवार था. अब वह तुम्हारे जेल की रोटी तोड़ने पर ही उतरेगा.' पर जैसे ही दोनों कोर्ट पहुंचे और शव को अपने कंधों से उतारा, बंकिम ने बिना देर किये उसके बंधन खुलवाये, फिर कहा कि वह खड़े होकर अपनी गवाही दे. दरअसल, उन्होंने सारा नाटक सच्चाई के पक्ष में सबूत जुटाने के लिए रचा था, जिसमें उनका एक विश्वासपात्र व्यक्ति शव की भूमिका निभा रहा था.

बंकिम के साथ नियति ने बड़ी नासइंसाफी की. उन्हें सिर्फ 55 वर्ष की उम्र दी और आठ अप्रैल, 1894 को कोलकाता में मौत को दबे पांव उनके पास भेजकर उन्हें हमसे छीन लिया.

आपके पत्र

बारिश नहीं होने से किसान चिंतित

आषाढ़ का महीना शुरू हो गया, पर बारिश का नामोनिशान नहीं दिख रहा है. इससे किसान चिंतित है, क्योंकि खेती पिछड़ रही है. अब तक धान का बिचड़ा भी नहीं डाला गया है. नदी, तालाब समेत सभी जलस्रोत सूख गये हैं. इससे पटवन भी संभव नहीं है. कुछ किसानों ने किसी तरह बिचड़ा डाला है, पर भीषण गर्मी में उसे बचाना मुश्किल है. पानी के अभाव में सब्जियों की खेती खराब हो गयी है. यदि बारिश नहीं हुई, तो महंगाई और बढ़ेगी. ऐसे ही आलू-प्याज के साथ हरी सब्जियों के दाम आसमान छू रहे हैं. लोगों का बजट बिगड़ गया है.

अभिलाषा कुमारी, बाढ़

परीक्षा पैटर्न में बदलाव की जरूरत

मौजूदा परीक्षा प्रणाली में छात्रों के वास्तविक क्षमता का आकलन नहीं हो पाता है. इसलिए इसमें सुधार की जरूरत है. आज की परीक्षाएं याददाश्त पर आधारित होती हैं, जिससे छात्रों पर अधिक दबाव रहता है. यह चिंता का विषय है कि एक ही परीक्षा उनके भविष्य को तय करता है. आधुनिक शिक्षा प्रणाली में छात्र-छात्राओं के संपूर्ण विकास पर ध्यान देना चाहिए. प्रश्नपत्रों में तर्कसंगत और व्यावहारिक प्रश्नों का समावेश जरूरी है, ताकि छात्रों की समस्या सुलझाने की क्षमता का परीक्षण हो सके. इससे वे तनावमुक्त भी रहेंगे.

अवनीश कुमार गुप्ता, पटना

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013, ■ मेल करें : patna @prabhatkhabar.in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है.

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। बुधवार, 26 जून 2024

बेहतर करने की चुनौती

NDA की तरफ से ओम बिरला के मुकाबले विपक्षी प्रत्याशी के तौर पर के सुरेश के सामने आ जाने के बाद यह लगभग तय हो चुका है कि लोकसभा अध्यक्ष के पद के लिए चुनाव होगा। 1952 और1976 के दो अपवादों को छोड़ दें तो लोकसभा अध्यक्ष का चयन आम राय से ही होता रहा है। हालांकि सदन में एनडीए की सदस्य संख्या को देखते हुए ओम बिरला का स्पीकर बनना तय माना जा रहा है।

ओम बिरला : दूसरा कार्यकाल

निरंतरता का संदेश | अपने इस लगातार तीसरे कार्यकाल में जिस तरह से पीएम नरेंद्र मोदी ने गृह, रक्षा, वित्त और विदेश जैसे सारे अहम मंत्रालयों में पुराने चेहरे बरकरार रखे उससे स्पष्ट है कि इस बार वह निरंतरता के संदेश पर खासा जोर दे रहे हैं। इस लिहाज से लोकसभा अध्यक्ष के पद के लिए ओम बिरला का चुना जाना चौंकाता नहीं है। जो बात थोड़ी हैरान करती है वह है इस पद के लिए चुनाव की नौबत लाया जाना। पिछली बार यानी 2019 में बिरला इस पद पर निर्विरोध चुने गए थे।

आम सहमति के प्रयास | इस बार भी ऐसा हो सकता था। खासकर इस तथ्य को देखते हुए कि बिरला के नाम पर विपक्षी खेमे की ओर से किसी तरह की आपत्ति नहीं आई। सरकार ने इस मसले पर विपक्ष से संपर्क भी किया। विपक्ष ने बिरला का समर्थन करने का इरादा जताया, पर उसका कहना था कि परंपरा के मुताबिक डेप्युटी स्पीकर का पद विपक्ष को मिलना चाहिए। सत्ता पक्ष की ओर से इस बात के लिए ना नहीं किया गया। इसके बावजूद अगर सहमति नहीं बन पाई तो इस पर निराशा ही जताई जा सकती है।

दोनों पक्षों का सहयोग | वैसे तो लोकतंत्र में चुनाव किसी भी पद के लिए हो, उसे बुरा मानने का कोई कारण नहीं है। मगर लोकसभा अध्यक्ष का पद ऐसा है जिसमें आम राय को हमेशा तवज्जो दी जाती रही है। वजह यह है कि सदन के सुचारू संचालन के लिए अध्यक्ष को दोनों पक्षों का सहयोग चाहिए होता है। ऐसे में अगर इस पद पर बैठे व्यक्ति का चयन दोनों पक्ष उसमें अपना विश्वास घोषित करते हुए करें तो पद की शोभा कई गुना बढ़ जाती है। बहरहाल, चुनाव में विरोध का मतलब अनिवार्य तौर पर विश्वास की कमी नहीं होता।

आगे की चुनौतियां | अगर 17वीं लोकसभा के अनुभव की रोशनी में देखें तो बतौर स्पीकर ओम बिरला पर अपने दूसरे कार्यकाल को बेहतर बनाने की चुनौती है। उनका पहला कार्यकाल सांसदों के निलंबन का रेकॉर्ड बनाते हुए समाप्त हुआ था। बेशक इसकी पूरी जिम्मेदारी किसी एक पक्ष पर नहीं डाली जा सकती, मगर इतना तो है ही कि इस बार सभी पक्षों से बेहतर समझदारी और परिपक्वता की अपेक्षा रहेगी।

ऑफबीट

रिश्ते का प्रॉक्सी सर्वर

सौरभ श्रीवास्तव

वट्सऐप पर बने फैमिली ग्रुप में अब तो हूं नहीं, लेकिन जब तक था एक अजीब चीज देखने को मिलती थी। परिवार में किसी बच्चे का जन्मदिन होने पर उसकी फोटो पोस्ट करके उसे बधाई दी जाती। बधाई का जवाब बच्चे की मां रिश्ते के हिसाब से देती थीं, क्योंकि परिवारवालों ने इतनी समझदारी तो बरती थी कि 18 साल से कम उम्र के किशोरों को फैमिली ग्रुप में नहीं जोड़ा था। जवाब कुछ इस तरह के होते- थैंक्यू बुआजी जबकि बधाई देने वाली महिला बच्चे की मां की ननद है या शुक्रिया ताऊ जी जबकि विश करने वाला शख्स मां का जेठ है। मुझे इस पर हंसी भी आती और खुजली भी मचती कि ऐसा क्यों है? जिस मेसेजिंग या सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर बच्चा नहीं है उसके लिए वहां कोई संदेश क्यों छोड़ा जाए?

मन नहीं माना तो एक रिश्तेदार से पूछ ही लिया कि वह ऐसा क्यों करती हैं। बोलीं- सब करते हैं इसलिए। थोड़ा पॉज लेने के बाद बोलीं- यदि मैं अपने बच्चे की फोटो न भी पोस्ट करूं तो कोई न कोई परिवारीजन कर ही देगा, फिर बधाइयों का जवाब तो देना ही पड़ता है। शुरू में तो बच्चे को बता देती थी कि फूफा जी का, चाचीजी का या अन्य किसी का मेसेज आया है। बच्चा, किशोर हुआ तो उसे इससे फर्क पड़ना ही बंद हो गया। अब उसे बताती तो नहीं पर उसकी ओर से रिप्लाई जरूर कर देती हूं।

वट्सऐप और सोशल मीडिया पर आपका अकाउंट निजी है, यह बात हम भारतीय लोग जानते तो हैं पर स्वीकार नहीं कर पाते। एक उम्र के बाद भारतीय मां-बाप के लिए कोई भी निजी चीज इतनी निजी नहीं होती कि उसके दायरे से बच्चों को बाहर रखा जाए। मां-बाप को लगता है कि बच्चे का जन्मदिन है तो उनके सोशल मीडिया सर्कल के सभी लोग भी उसे बधाई दें और लोग ऐसा करते भी हैं। सोशल मीडिया और तमाम मेसेजिंग ग्रुप से आपने बच्चे को बाहर तो रखा पर उसकी उपस्थिति वहां दर्ज तो हो ही रही है। बच्चे के चाचा-चाची, मामा-मामी, ताऊ-ताई आदि भी साइबर स्पेस में उसे बधाई देकर कर्तव्य पूरा कर लेते हैं। ऐसा न होता तो वे बच्चे को कम से कम फोन तो करते ही। बधाई देने के बाद कुछ इधर-उधर की बातें भी करते। इससे बच्चे से उनका एक संबंध विकसित होता। बच्चा भी उन्हें समझता और कुछ लोगों में दिलचस्पी भी लेता। उसका व्यक्तित्व भी विकसित होता। अच्छी बात है कि आपने बच्चे को सोशल मीडिया, मेसेजिंग ग्रुप से दूर रखा है पर ऐसा नहीं लगता कि सोशल मीडिया के कल्चर से भी उसे एक उम्र तक बचाए रखना चाहिए ताकि वह अपनी सामाजिकता असल दुनिया में प्रत्यक्ष तौर पर विकसित कर सके।

एकदा

पिता की ज़िम्मेदारी

बेंजामिन स्पॉक (Benjamin Spock) का कद छह फुट चार इंच था। वह अच्छे खिलाड़ी थे। उनके दोस्तों ने उन्हें ओलिंपिक रोइंग क्रू (US में बोट रेसिंग) में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। लगातार अभ्यास के दम पर उन्होंने 1924 में पेरिस गेम्स में स्वर्ण पदक भी प्राप्त कर लिया। हर तरफ उनके नाम की धूम मच गई। एक बार उन्हें दिव्यांग सेवा वाले समर कैंप में जाने का मौका मिला। वहां लाचार बच्चों को करीब से देखकर वह बहुत दुखी हुए और उन्होंने तय किया कि बच्चों का डॉक्टर बनकर इनका जीवन संवारेंगे। फिर क्या था?

Subrata Dhar

उन्होंने मेडिकल की पढ़ाई शुरू कर दी। 1929 में उन्हें कक्षा का सर्वश्रेष्ठ विद्यार्थी घोषित किया गया। कुछ ही समय बाद उनकी पहचान सर्वश्रेष्ठ शिशु रोग विशेषज्ञ के रूप में होने लगी। कई साल डॉक्टरी का अनुभव प्राप्त करने के बाद उन्होंने 'Baby and Child Care' नाम की एक किताब लिखी। बाजार में आते ही पुस्तक ने धूम मचा दी। बाद में यह 40 से अधिक भाषाओं में प्रकाशित हुई। अब तक इस पुस्तक की पांच करोड़ से अधिक प्रतियां बिक चुकी हैं। वह कहते थे, 'बच्चे पालना केवल माता का काम नहीं है, पिता का भी उसमें बराबर का योगदान होना चाहिए। पिता जब बच्चे का पालन-पोषण पूरे समर्पण के साथ करता है, तो बच्चे का मानसिक विकास अच्छी तरह होता है।' उन्होंने दिव्यांग शिशुओं के शारीरिक और मानसिक विकास पर खास ध्यान दिया। उन बच्चों के माता-पिता उन्हें ईश्वर का दूत मानते थे। आज भी उनकी किताब अनेक माता-पिता को राह दिखा रही है। वह कहते थे, पिता की जिम्मेदारी का अहसास मैंने बचपन से देखा है। यदि हर पिता अपने बच्चे की परवरिश में पूरा योगदान दे, तो वह बच्चा भविष्य में सदा सफल होगा।

संकलन : **रेनू सैनी**

विकीलीक्स के संस्थापक जूलियन असांज ने जो खुलासे किए, उसने दुनिया में खासी उथलपुथल मचाई

असांज के साहस ने दुनिया को क्या दिया

चंद्रभूषण

विकीलीक्स के संस्थापक-संपादक जूलियन असांज की रिहाई के साथ राजकाज में पारदर्शिता की मांग से जुड़ी एक लंबी लड़ाई का पटाक्षेप हो गया। अमेरिका सहित कई देशों के बहुत सारे सरकारी रहस्यों के पर्दाफाश में अहम भूमिका निभाने वाले इस ऑस्ट्रेलियाई हैकर को कुल बारह साल दुनिया से अलग-थलग रहकर बिताने पड़े।

तकनीकी आधार पर जमानत | ये रहस्य असांज ने जासूसी करके नहीं निकाले थे। उनका दोष सिर्फ ऊंचे सरकारी ओहदों पर बैठे लोगों की बातचीत और उनके ऑडियो-विडियो आदान-प्रदान को खुले में ला देने का था। यह रिहाई भी उन्हें खुद को अमेरिका के जासूसी कानून के उल्लंघन का दोषी मान लेने के बाद जमानत की शक्ल में हासिल हुई है। जमानत इस तकनीकी आधार पर दी गई है कि उनका अपराध उन्हें पांच साल से ज्यादा की सजा का हकदार नहीं बनाता, जो वे पहले ही भुगत चुके हैं।

गिरफ्तार करने की बेकरारी | जूलियन असांज ने सरकारी दस्तावेजों के खुलासे के लिए एक ग्लोबल प्लैटफॉर्म के रूप में 2006 में विकीलीक्स की स्थापना की। तब से लेकर 2012 में इक्वाडोर के दूतावास में एक किस्म की नजरबंदी में जाने के पहले तक उन्होंने जो किया, उस पर जाने से पहले हमें उस हड़बड़ी को याद करना चाहिए जो उस वक्त अमेरिका, ब्रिटेन और स्वीडन की ताकतवर 'लोकतांत्रिक' सरकारों में दिखाई पड़ रही थी। असांज को कहीं से भी किसी शर्त पर पकड़वा लेने की कोशिश में उनपर स्वीडन में यौन उत्पीड़न का एक मुकदमा दायर किया गया। इस मामले में सबसे विचित्र बात थी मुकदमा दायर करने वाली महिला का यह बयान कि यौन संसर्ग शुरू होने से पहले उन्होंने इसकी स्वीकृति दी थी लेकिन यौनक्रिया के बीच में ही स्वीकृति वापस ले ली थी, लिहाजा उत्पीड़न तो हुआ।

विकीलीक्स के खुलासों का असर
- हिलेरी की छवि खराब हुई, ट्रंप जीते
- सद्दाम के बाद इराक-ईरान करीबी बढ़ी
- अमेरिका ने ISIS को बढ़ावा दिया

कच्चा-चिट्ठा उजागर करने की सजा | गनीमत रही कि उस समय इक्वाडोर के दूतावास ने असांज को अपने यहां शरण दे दी। 2019 में ब्रिटेन की पुलिस उन्हें दूतावास से जेल ले जाने में सफल हुई, लेकिन इसके साथ ही अमेरिका ने ब्रिटेन पर असांज के प्रत्यावर्तन के लिए दबाव बनाया तो एक ब्रिटिश अदालत ने अपनी सरकार को ऐसा करने की इजाजत नहीं दी। इक्कीसवीं सदी का यह भी एक कमाल ही कहा जाएगा कि अपने हुनर का माहिर एक सामान्य व्यक्ति किसी चोरी-चकारी के लिए नहीं, अपनी समझ से एक नैतिक काम करने के लिए, जनता के पैसों पर पलने वाली सरकारों का कच्चा-चिट्ठा उजागर करने के लिए इतनी दूर तक चला आया और जानलेवा खतरों के बावजूद कान पकड़कर गिड़गिड़ाने का रास्ता भी नहीं अपनाया।

AI Image

बाइडन को गाली | ऐसे तो विकीलीक्स पर कई सरकारों के छोटे-बड़े रहस्य उजागर हुए लेकिन सबसे ज्यादा मिर्ची अमेरिका को लगी, क्योंकि सामने आए दस्तावेजों ने कुछेक बड़े अमेरिकी अफसरों और नेताओं की मिट्टी पलीद कर दी। अफगानिस्तान में तैनात एक अमेरिकी जनरल ने उस समय उपराष्ट्रपति रहे मौजूदा राष्ट्रपति जोसफ बाइडन को कहीं अचके में एक बड़ी गंदी गाली दी थी, जिसका जिक्र किसी और अफसर ने अपने ईमेल में किसी हमजोली को कर दिया था। नतीजा यह कि जनरल को तो जाना ही पड़ा, बाइडन को भी 'छवि सुधार परियोजना' चलानी पड़ गई।

भस्मासुर बना आइसिस | अमेरिका के लिए भारी शर्मिंदगी का बायस वह विडियो बना, जिसमें एक फौजी अपाची हेलिकॉप्टर ने इराक में गोलीबारी करके ग्यारह आम लोगों को मार गिराया था। इस खुलासे का नुकसान यह हुआ कि सद्दाम को मृत्युदंड दिए जाने के बाद इराक में बनी शिया हुकूमत अमेरिका के बुरी तरह खिलाफ हो गई और ईरान से उसकी नजदीकी बढ़ती गई। उसे काबू में रखने के लिए ओबामा सरकार ने ISIS नाम के कट्टरपंथी संगठन की पीठ ठोक दी। जल्द ही उसका फैलाव भस्मासुर की तरह होने लगा लेकिन अमेरिका से कुछ करते नहीं बन रहा था।

हिलेरी की हार | विकीलीक्स की एक बड़ी शिकार हिलेरी क्लिंटन भी बनीं, जिनकी उम्मीदवारी 2016 के अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव में बहुत गंभीर मानी जा रही थी। लेकिन अपने चुनाव अधिकारियों के साथ उनकी कुछ खतो-किताबत इतनी संवेदनशील निकली कि अमेरिकी डेमोक्रेट जनमत का उत्साह जाता रहा और हिलेरी चुनाव हार गईं।

राहुल गांधी की टिप्पणी | भारत में विकीलीक्स का कोई बड़ा धमाका तो नहीं हुआ लेकिन राहुल गांधी ने अमेरिकी राजदूत से देश में हिंदूवादी राजनीति को लेकर कुछ कहा- यह कि बहुसंख्यकवादी कट्टरपंथ यहां अल्पसंख्यक कट्टरपंथ की तुलना में कहीं ज्यादा खतरनाक है- जो लीक हो गया।

मैनिंग का योगदान | यहां विकीलीक्स की लाई उथल-पुथल के पीछे जूलियन असांज के अलावा जिस एक व्यक्ति की भूमिका खास तौर पर रेखांकित की जानी चाहिए, वे हैं अमेरिका की सैन्य गुप्तचर सेवा से जुड़ी चेल्सी मैनिंग, जो ब्रैडली एडवर्ड मैनिंग नाम का पुरुष हुआ करती थीं। बराक ओबामा ने बतौर अमेरिकी राष्ट्रपति अपने आखिरी दिन यही काम किया कि उनकी सजा माफ कर दी।

पारदर्शिता की इच्छा | जैसा ऊपर कहा जा चुका है, असांज और मैनिंग जैसे लोग पारदर्शी राजकाज की इच्छा के ही प्रतिनिधि हैं। सरकारों को उनपर गरजने-बरसने के बजाय जब-तब अपने गिरेबान में झांककर देख लेना चाहिए।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

गर्मी में कैसे होंगे शहर

जिस तरह हीटवेव से मौतें हो रही हैं, लगता है कि अब शहरों की प्लानिंग बदलनी होगी। सबसे बड़ा बदलाव होगा आर्किटेक्चर में। विशेषज्ञों और AI की मदद से हमने भविष्य के ऐसे शहर का खाका तैयार किया है, जहां गर्मी कम लगे :

ग्रीन लाइफस्टाइल: ग्रीन सिटी में ऐसी कोई चीज नहीं बिकेगी, जिसे जंगल काटकर या पर्यावरण को नुकसान पहुंचाकर बनाया गया है।

घरेलू AC को कहें No

जिस तरह से गर्मी में AC फेल हो रहे हैं या फट रहे हैं, गर्मी और बढ़ेगी तो यह दिक्कत और बड़ा रूप लेगी।

सेंट्रल कूलिंग सिस्टम

गर्मी से मुकाबले के लिए कूल सिटी में दो तरह के सेंट्रल कूलिंग सिस्टम मौजूद होंगे।

पहला कूलिंग सिस्टम मल्टीस्टोरी इमारतों का होगा। सभी फ्लैटों में सप्लाई।

दूसरा कूलिंग सिस्टम डिस्ट्रिक्ट एडमिनिस्ट्रेशन का। घरों में इसकी पाइपलाइन से होगी सस्ती सप्लाई।

शहरों में जगह-जगह कार्बन टावर। ऐसा चीन, अमेरिका में हो रहा है।

बेसमेंट: दुकानें, पार्क, वॉकिंग ट्रेक बहुमंजिला इमारतों के बेसमेंट में ही बनेंगे।

रेन वॉटर हार्वेस्टिंग

बहुमंजिला इमारतें हों या सामान्य घर, अगर उनके पास रेन वॉटर हार्वेस्टिंग का इंतजाम नहीं होगा तो अथॉरिटी से उनका नक्शा पास नहीं होगा। रेन वॉटर हार्वेस्टिंग सिस्टम बनाना सबके लिए अनिवार्य होगा।

कई प्रयोगों में सामने आया है कि रेन वॉटर हार्वेस्टिंग भूजल स्तर बढ़ाता है। इससे पानी की किल्लत खत्म होती है, साथ ही ऊर्जा की भी बचत होती है।

सोख्ता इमारतें

तकनीक की मदद से इमारतें ऐसे मटीरियल से बनी होंगी, जो बारिश का पानी सोखकर उसे खुद में स्टोर कर सकें। मिट्टी, कंक्रीट और कुछ अन्य सामग्री की मदद से ऐसे मटीरियल बन रहे हैं।

इमारतों में फसल

बहुमंजिला इमारतों की छतों पर बहुफसली खेती होगी। इससे वहां बचा पानी वहीं पर प्रयोग होगा और धरती में कार्बन की मात्रा कम बढ़ेगी।

ग्रीन एनर्जी: कोल एनर्जी पूरी तरह से समाप्त। सिर्फ सौर ऊर्जा या पवन ऊर्जा का उत्पादन और प्रयोग।

रिफ्लेक्टिंग कांच

इमारतों में बाहर की ओर किरणों को परावर्तित करने वाले कांच लगे होंगे। ये गर्मी को वहीं पर रोक देंगे।

वर्टिकल फॉरेस्ट

मल्टीस्टोरी बिल्डिंग्स में हर बालकनी में घनी पत्तियों वाले पौधे उगे होंगे।

वन क्षेत्र

2015 से 2020 के बीच भारत में 6,68,400 हेक्टेयर वन क्षेत्र काट दिया गया है। भारत में कम से कम 33% वन क्षेत्र होना चाहिए, जो अभी 19% के आसपास है।

ग्रीन सिटी में 33% हिस्सा वन आच्छादित होगा। पेड़ लगाने, RWH लगवाने और ग्रीन लाइफस्टाइल अपनाने वालों को इनकम टैक्स और हाउसिंग टैक्स रिबेट मिलेगी।

कंक्रीट की जगह ईंट

इमारतों का खांचा कंक्रीट का बनेगा, लेकिन उसमें सारी भरावन खोखली ईंटों की होगी। ऐसी ईंटें तापमान को बाहर ही रोक लेती हैं।

तालाबों की शृंखला

तालाबों का पानी अपने आसपास की जगहों को ठंडा करता है। इसका पानी वाष्पीकृत होकर बारिश में भी मदद करता है। कई प्रयोगों में सामने आया है कि जहां तालाबों को पुनर्जीवित किया गया, वहां तापमान घटा, भूजल स्तर और वन क्षेत्र बढ़ा।

कूल कनेक्टिविटी

रास्तों पर दोनों ओर घने वृक्ष लगे होंगे।

Evaporation टावर

गर्मी भगाने के लिए शहर में जगह-जगह होंगे evaporation टावर, जो पानी का छिड़काव करके आसपास का इलाका ठंडा करते रहेंगे।

बढ़ते गर्म दिन

- ओडिशा: 27 दिन
- राजस्थान: 23 दिन
- गंगीय प. बंगाल: 21 दिन
- हरियाणा: 20 दिन
- चंडीगढ़: 20 दिन
- दिल्ली: 20 दिन
- प. उत्तर प्रदेश: 20 दिन

जानलेवा गर्मी

41,789

हीट स्ट्रोक के मामले

गर्मी से मौतें

- दिल्ली: 53
- उत्तर प्रदेश: 37
- बिहार: 17
- राजस्थान: 16
- ओडिशा: 13

कंटेंट: राहुल पाण्डेय

Graphics & Images: AI

(आंकड़े 1 मार्च से 20 जून 2024 तक)

गर्मी से लड़ने के लिए बनने वाली ग्रीन सिटीज मौसम के अनुकूल मटीरियल्स से ही बनेगी, जिनमें ग्रीन शेडिंग होगी।- ***चंद्रभूषण, CEO, iForest***

कहीं कुछ भी बनाने की आदत छोड़नी होगी। वॉटरशेड पर खास ध्यान हो। ***-प्रो. एसएम अख्तर, जामिया मिल्लिया***

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

बिना शर्त सबको आनंद शुभ कर्म ही दे सकते हैं

स्वामी विवेकानंद

मनुष्य अनेक प्रकार की इच्छाओं से प्रेरित होकर कर्म करते हैं। यह बिलकुल सत्य है कि किसी तरह की इच्छा न हो तो कर्म कौन करे। लेकिन कर्म को करने के पीछे कुछ कंडिशंस होते हैं। कुछ लोग इसलिए काम करते हैं कि उससे उन्हें यश मिले। ऐसे लोग यश के अभिलाषी हैं। कुछ मनुष्य धन पाना चाहते हैं और उनके हर काम के पीछे का कारण धन होता है। कुछ लोग शक्ति अर्जित करना चाहते हैं। इसके लिए वे अभ्यास करते हैं, इसके लिए ही अपना समय व्यतीत करते हैं। कुछ लोगों की इच्छा स्वर्ग की होती है और वे इसी उद्देश्य से काम करते हैं।

कोई चाहता है, मृत्यु के बाद भी नाम अमर रह जाए और इसके लिए ऐसे लोग प्रयत्नशील रहते हैं। यानी अपना नाम यहां छोड़कर जाना चाहते हैं। जैसा कि चीन में होता है। वहां बिना मरे किसी को उपाधि नहीं मिलती। चीन में एक प्रथा है। वहां जब कोई मनुष्य बहुत ही साधु-कर्म करता है तो उसके मृत पिता या दादा को वह उपाधि दी जाती है। तो वहां पर मनुष्य अपने पूर्वजों के लिए कर्म करते हैं। किन्हीं मुसलमान संप्रदाय के अनुयायी अपने तमाम जीवन में मकबरा तैयार कराने में व्यस्त रहते हैं, ताकि मृत्यु के बाद उन्हें उस स्थान पर दफनाया जा सके।

मैं ऐसे संप्रदायों को जानता हूं जहां बच्चे के जन्म लेते ही उसके लिए मकबरे का इंतजाम शुरू कर दिया जाता है। उनके यहां मनुष्य का सबसे महत्वपूर्ण काम है, व्यवस्थित तरीके से दफनाया जाना। उनके यहां यह सोचा जाता है कि जिसका मकबरा जितना अधिक विशाल, भव्य और शोभायमान होता है, वह व्यक्ति उतना ही भाग्यशाली होता है।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो प्रायश्चित्त के लिए शुभ कर्म करते हैं। जब उन्हें अहसास होता है कि उन्होंने पाप कर्म किए हैं, तो बाद में एक मंदिर बनवाकर या पंडितों को रिश्वत के तौर पर दान-दक्षिणा देकर स्वर्ग के लिए परवाना पा लेना चाहते हैं। ऐसे लोग समझते हैं कि इस उदारता से उनकी कालिमा धुल जाएगी और पाक-साफ हो जाएंगे। कुछ ऐसे भी देवतुल्य व्यक्ति इस संसार में होते हैं जो कर्म के लिए कर्म करते हैं। ऐसे लोगों को न यश, न धन, न स्वर्ग की ही अभिलाषा होती है। वे कर्म करते हैं फल की चिंता के बिना।

ऐसे लोग इस उद्देश्य से कर्म करते हैं कि उसका परिणाम शुभ और कल्याणमय हो। वह शुभ और कल्याण सिर्फ उनके लिए नहीं बल्कि पूरे संसार के लिए हो। वे मनुष्य जाति के हित की बात करते हैं और ऐसे लोग उच्च विचारवाले होते हैं। परोपकारी सभी से प्यार करने वाले होते हैं। उनके लिए हर कोई एक समान होता है।

अब कर्मफल की बात करते हैं। इसलिए इच्छाओं के विषय पर लौटते हैं। हो सकता है, धन जल्द ही मिल जाए, पर यश की इच्छा रखते हुए जो कर्म करते हैं, शायद ही उन्हें तुरंत उसका फल मिलता हो। यश तो तब प्राप्त होते हैं जब हम वृद्ध हो जाते हैं और जीवन से विदा लेने का समय आ जाता है। यदि जीवन भर यश के लिए काम करूं तो अंत में जाकर कहीं थोड़ा से नाम मिले। इसी तरह किसी भौतिक पदार्थ की यदि आकांक्षा हो, तो वह भी मिल जाती है। लेकिन उसका क्रम वहीं रुक जाता है। मगर जब शुभ कर्म करते हैं तो दूसरों को आनंद मिलता ही है, स्वयं को भी उतना ही आनंद मिलता है।

साभार : पुस्तक 'मैं कौन हूं'

ज़रूरी है हमास को जवाबदेह ठहराना

गाय निर

7 अक्टूबर को गाजा पट्टी से इस्राइल पर हुए हमले में हमास आतंकवादियों ने जिन इस्राइली यहूदियों को अगवा कर लिया था, उन्हें बचाने की कार्रवाई बाकी सारे बंधकों के परिवारों के लिए उम्मीद की किरण है, जो 8 महीने से ज्यादा समय से गाजा पट्टी में कैद हैं। ये कार्रवाई हमास और गाजा पट्टी की आम आबादी के बीच के गहरे संबंध भी दिखाती है। बंधकों को गाजा पट्टी के बीचों बीच दो अलग-अलग घरों में आम लोगों द्वारा कैद करके रखा गया था।

आपसी मिलीभगत | बंधकों को मुक्त कराने के लिए सैकड़ों आतंकवादियों और हथियारबंद नागरिकों से भयंकर लड़ाई लड़ी गई, जिससे इस शहरी युद्ध की विषमता दिखाई देती है। यह भी हैरान करने वाला है कि तीन बंधकों को अल जजीरा के पत्रकार अब्दुल्ला अलजमाल के घर में बंद रखा गया था। यह कतर की सरकारी न्यूज एजेंसी और इस्लामी कट्टरपंथी आतंकवादी संगठन में मिलीभगत का खुलासा करता है।

हमास का साथ | गाजा की आम आबादी का एक भयानक पहलू है कि वह हमास का समर्थन करती है। 7 अक्टूबर से अब तक की घटनाएं दिखाती हैं कि गाजा के कई आम लोग हमास का साथ देते हैं। वे अपने बच्चों को हमास का कार्यकर्ता बनने के लिए तैयार करते हैं और यहूदियों की हत्या पर खुश होते हैं। बहुत से लोग अपने घरों में बंधकों और आतंकवादियों को छिपाने में हमास की मदद करते हैं। वे अपने घरों में हथियार रखते हैं और आतंकवादी सुरंगों तक पहुंच बनाते हैं।

नागरिकों की राय | एक हालिया सर्वेक्षण बताता है कि 71% गाजा के लोग मानते हैं कि 7 अक्टूबर को इस्राइल के खिलाफ हमला करने का हमास का फैसला सही था। ऐसा नहीं, गाजा का हर नागरिक इन कामों में शामिल है, लेकिन उन लोगों को पहचानना बहुत जरूरी है जो पूरी तरह से निर्दोष नहीं हैं। हमास कोई विदेशी संगठन नहीं है। यह मुस्लिम ब्रदरहुड की गाजा शाखा है।

हमास का नेटवर्क | हमास के नेता और उसके लड़ाके गाजा पट्टी के सामाजिक ताने-बाने में गहराई से रचे-बसे हैं। यह आतंकवादी संगठन न केवल सैन्य और

कॉमन रूम

राजनीतिक परिदृश्य को नियंत्रित करता है, बल्कि व्यापार, वाणिज्य, व्यक्तियों और कंपनियों से व्यवस्थित जबरन वसूली और लूटपाट, अंतरराष्ट्रीय मानवीय सहायता के इस्तेमाल सहित सामाजिक सेवाओं और शैक्षिक संस्थानों को भी नियंत्रित करता है।

विचारधारा की लड़ाई | लेकिन हमास का समर्थन और उसके हिंसक कार्यों में भागीदारी उन पर निर्भरता या उनके दबाव से ज्यादा है। इसमें विचारधारा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा भी शामिल है। गाजा में शिक्षा और प्रचार प्रणालियां युवाओं को इस्राइल के प्रति नफरत और हिंसा का पाठ पढ़ाती हैं। यह शिक्षा सिर्फ उनके समर्थन को बढ़ावा ही नहीं देती, बल्कि अक्सर आतंकवादी गतिविधियों में सक्रिय सहयोग की ओर ले जाती है।

हमास की हिमायत | एक चिंताजनक बात यह है कि UNRWA अपनी संस्थाओं, खास तौर पर अपने स्कूल नेटवर्क में इनके उकसावे को घुसने देती है। यहां टीचर और प्रिंसिपल तक अक्सर हमास के लड़ाके या समर्थक होते हैं, जो गाजा की आबादी के एक बड़े हिस्से को सिखाते हैं हमास के काम पूरी तरह से वैध क्यों हैं।

हल हो मुद्दा | यह हमास को ऐसे समर्थन का आधार तैयार करने में मदद करता है जो राजनीतिक निष्ठा से आगे बढ़कर उसकी हिंसक योजना में सक्रिय भागीदारी तक पहुंच जाता है। समूह का अर्थव्यवस्था, मानवीय सहायता और सामाजिक शिक्षा नेटवर्क पर पूरा कंट्रोल उसे नागरिकों की वफादारी दिलाता है। अंतरराष्ट्रीय समुदाय को इस मुद्दे को हल करने के लिए एक स्पष्ट रुख अपनाना होगा। हमास नेटवर्क के सदस्यों को जवाबदेह ठहराना जरूरी है।

(लेखक भारत में इस्राइली दूतावास के प्रवक्ता हैं)

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए, राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.

संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली ● बुधवार ● 26 जून ● 2024
www.rashtriyasahara.com

फिर हंगामे के आसार

शायद ही किसी को यह उम्मीद रही होगी कि इस बार की संसद सहज, सामान्य और सुव्यवस्थित तरीके से चलेगी। लेकिन यह अनुमान नहीं था कि पहले ही दिन दूध में खटाई पड़ जाएगी और संसद के भावी कार्यकाल का विद्रूप चेहरा शुरुआत में ही दिखाई देने लगेगा। प्रधानमंत्री जब अपने उद्बोधन में यह अपेक्षा कर रहे थे कि विपक्षी दल सकारात्मक रुख अपनाएं, सार्थक बहस करें, जिम्मेदार रहें बजाय इसके कि वे अनावश्यक नाटक, शोरगुल या हंगामा करें, तो उन्हें पूरा भरोसा रहा होगा कि विपक्ष वही करेगा जो उसने पिछले सत्र में किया था। उनका सहयोग का आह्वान स्वयं उन्हें ही अपूरणीय लग रहा होगा। विपक्ष ने पहले ही दिन प्रदर्शित कर दिया कि वह

संसद को शांति से नहीं चलने देगा, किसी भी तरह का सहयोग का तो प्रश्न ही उठता। पहले प्रोटेम स्पीकर के नाम को लेकर विवाद खड़ा किया गया और उसके बाद लोकसभाध्यक्ष के चुनाव को लेकर भी चुनौती खड़ी कर दी गई। आजादी के बाद यह दूसरा मौका है जब लोकसभाध्यक्ष का निर्वाचन चुनाव के जरिए होने जा रहा है। एनडीए के उम्मीदवार ओम बिरला के विरुद्ध विपक्ष के उम्मीदवार कांग्रेस के आठ बार के सांसद के. सुरेश होंगे। यह दीगर बात है कि ममता बनर्जी की पार्टी ने बिना उनसे पूछे के. सुरेश की उम्मीदवारी पर अपना ऐतराज दर्ज करा दिया है। प्रधानमंत्री ने भी शायद भावी स्थितियों को भांप लिया है, इसलिए उन्होंने आपातकाल के पचास वर्ष होने का स्मरण करके विपक्ष विशेषकर कांग्रेस पर प्रहार करने का मौका हाथ से जाने नहीं दिया। उधर, विपक्ष ने भी पेपर लीक घोटाले, रेल दुर्घटना, गर्मी के कारण हुई लोगों की मौतें आदि मुद्दों के साथ-साथ बेरोजगारी और महंगाई जैसे मुद्दों पर सरकार को घेरने का मन बना रखा है। इससे साफ संकेत मिलता है कि लोक सभा शांतिपूर्ण ढंग से नहीं चलेगी। विपक्ष जितना मजबूत हुआ है, सरकार पर विपक्ष का प्रहार भी उतना ही मजबूत होगा। नहीं लगता कि प्रधानमंत्री मोदी सहित सत्ता पक्ष का कोई भी नेता अपनी बात बिना हंगामा झेले शांतिपूर्ण ढंग से कह पाएगा। यह वह स्थिति है जो देश के सामान्य नागरिक को चिंतित करती है। लेकिन इसका कोई समाधान उसके पास नहीं है। आम आदमी चाहता है कि संसद में हंगामे की बजाय विचारपूर्ण बहस सुने। काश, आम आदमी की यह मंशा विपक्ष पहुंच पाती और संसद के व्यर्थ के हंगामों से थोड़ी सी राहत की सांसें ले पाती।

पिता की क्रूरता

राजधानी दिल्ली के कंझावला थाना क्षेत्र के पूठकलां गांव में दो बच्चियां पैदा होने से गुस्साए पिता द्वारा उन्हें मारकर दफनाए जाने का मामला प्रकाश में आने पर हर कोई सन्न है। बच्चियों की मां ने पुलिस में मामला दर्ज कराया तो पुलिस ने एसडीएम की अनुमति लेकर दफनाई गईं बच्चियों को श्मशान घाट से निकाल कर पोस्टमार्टम के लिए भेजा। मामला बीस दिन पहले का बताया जा रहा है। हरियाणा के रोहतक की रहने वाली पूजा की शादी दिल्ली देहात के पूठकलां गांव में हुई थी। उन्होंने रोहतक स्थित निजी अस्पताल में दो बच्चियों को जन्म दिया तो उनका पति नीरज सोलंकी अस्पताल पहुंचा और दोनों बच्चियों को लेकर रफूचक्कर हो गया। बाद में अपने गांव में दोनों मासूमों की हत्या करके दफना दिया। हैरत की बात यह कि

उसके कृत्य में उसके परिजन भी बराबर शरीक रहे। पुलिस को पोस्टमार्टम रिपोर्ट का इंतजार है। इस बीच आरोपी अपने परिजनों संग फरार हो गया है। कितना दुखद है कि एक तरफ प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' संकल्प दिलाते हैं, तो दूसरी तरफ बेटियों के प्रति इस कदर क्रूर चेहरा हमारे समाज में दिखलाई पड़ता है। वैसे तो समूचे देश में ही बेटों के प्रति लालसा एक समान है, लेकिन राजधानी से सटे हरियाणा और आसपास के इलाकों में लोग क्रूरता की हद पार करते रहे हैं। ऐसा भी हुआ जब हरियाणा में महिला-पुरुष अनुपात तक गड़बड़ा गया। बेटों के प्रति लालसा के तमाम उदाहरण हैं। हरियाणा की एक नामी अंतरराष्ट्रीय खिलाड़ी ने बताया था कि उनके जन्म के समय उनकी दादी इस कदर नाराज हुईं कि उन्हें ले जाकर कूड़ी पर डाल आईं। गनीमत रही कि आसपड़ोस की महिलाएं उन्हें वहां से उठा लाईं। उनकी दादी की खासी लानत-मलामत की। उन्हीं लड़की ने अपने खेल में विश्व में नंबर वन रैंकिंग हासिल की। बेटी को लेकर लोगों का माइंडसेट होता है कि उसे तो शादी के बाद दूसरे घर चले जाना है, और परिवार की रिवायतों को तो बेटा ही आगे बढ़ाएगा। हालांकि बेटे परिवार की मिट्टी खराब करते देखे गए हैं, लेकिन लोग हैं कि उनका विवेक नहीं जाग पा रहा। बेटी भी अच्छे से तरबियत मिलने पर घर-परिवार का नाम रोशन करती है। दुखद यह है कि सामंती सोच के लोग बेटियों की महिमा, मर्यादा और परिवार के प्रति उनके समर्पण भाव को नहीं देख पाते। घर में जन्मने वाली बेटी भी उतनी हकदार है, जितना आप बेटे को मान बैठे हैं।

चिंतन/डॉ. नरेन्द्र कुमार टोंक

कांग्रेस का भविष्य

वर्ष 2024 के लोक सभा चुनाव में विपक्ष ने एक बेहद झूठे विमर्श का प्रचार कर थोड़ी-बहुत सफलता अवश्य प्राप्त कर ली किन्तु नरेन्द्र मोदी को प्रधानमंत्री बनने से नहीं रोक पाया। चुनाव समाप्त हो गया और नई संसद का गठन भी हो गया, किन्तु कांग्रेस के नेतृत्व वाला विपक्ष अभी भी संविधान की प्रतियों को हाथ में लेकर संसद परिसर में संविधान बचाओ और लोकतंत्र बचाओ के नारे लगा कर देश को भ्रमित करने पर तुला है। नई संसद के पहले दिन इंडिया गठबंधन के घटक दलों के नवनिर्वाचित सांसदों के हाथों में संविधान की प्रतियां थीं, और वे जतलाने में जुटे थे कि हर हाल में संविधान को बचाना है, जैसे संविधान खतरे में पड़ गया हो। कैसी हास्यास्पद बात है कि जिनके पूर्वजों ने 25 जून, 1975 को अपनी सत्ता बचाने के लिए देश पर आपातकाल थोपा था, आज वही लोग निर्लज्जता के साथ गला फाड़-फाड़ कर संविधान और लोकतंत्र बचाने निकले हैं। यदि संविधान और लोकतंत्र को किसी सरकार ने अपनी कुर्सी तले रौंदा है, तो वो इन्हीं राहुल गांधी की दादी इन्दिरा गांधी थीं। पत्रकारों की कलम तोड़ दी गई थी, प्रेस का गला घोंट दिया गया था, संविधान प्रदत्त सभी मानव अधिकार छीन लिए गए थे। विरोधियों को बिना कारण बताए और बिना सूचित किए जेलों में ठूंस दिया गया था। विरोधियों के नाखून तक उखड़वा दिए गए थे।

मीसा जैसा कानून देश पर लाद दिया गया था जिसकी स्मृति में लालू प्रसाद यादव ने आपातकाल में जन्मी अपनी एक बेटी का नाम ही मीसा रख दिया था। आज वही मीसा राहुल के साथ हैं। आज उसी प्रधानमंत्री का पौत्र संविधान बचाने निकला है। यही कांग्रेस 2019 के चुनाव को अंतिम चुनाव कह कर मतदाता को बहका रही थी लेकिन चुनाव फिर हुआ। 2024 के चुनाव को भी कांग्रेस ने अन्तिम चुनाव कह कर मतदाता को भ्रमित कर 99 सीटें जीत लीं। पूरे विपक्ष ने मुंह भर कर प्रधानमंत्री और सनातन को गालियां दीं तो फिर लोकतंत्र खतरे में कैसे है? सच तो यह है कि न तो संविधान खतरे में है, और न ही लोकतंत्र। यदि खतरे में है, तो केवल कांग्रेस का भविष्य और उसकी सत्ता लोलुपता खतरे में हैं।

यू-टर्न की माया

राजनीति

नवल किशोर कुमार

सियासत होती ही ऐसी है कि कोई भी सीधी राह नहीं चलता। एक यदि आरएसएस को अपवाद मान लिया जाए तो चाहे वे समाजवादी रहे हों या वामपंथी या फिर कांग्रेस जैसे नरम दक्षिणपंथी ही क्यों न हो, सभी अपनी राह समय और परिस्थितियों के अनुसार बदलते रहे हैं। इनमें अंबेडकरवादी आंदोलन से उपजे राजनीतिक दल भी शामिल हैं। चूंकि वर्तमान में देश में दलित समुदायों को सबसे अधिक बहुजन समाज पार्टी प्रिय है, लिहाजा यह बेहद मौजूं विषय है कि मायावती अपनी राजनीति में किस तरह की करवटें बदल रही हैं।

हाल में उन्होंने अपने भतीजे आकाश आनंद को राष्ट्रीय समन्वयक बनाकर फिर से अपना उत्तराधिकारी घोषित किया है जबकि लोक सभा चुनाव के प्रारंभिक चरणों में उन्होंने आकाश आनंद को न केवल राष्ट्रीय समन्वयक, बल्कि अपने उत्तराधिकार की गद्दी से भी उतार दिया था। तब मायावती ने कहा था कि आकाश अभी अपरिपक्व हैं। दरअसल, इस बार के लोक सभा चुनाव के पहले बसपा को लेकर उसके कैडर में ऊहापोह की स्थिति रही। वजह यह कि मायावती ने अंतिम समय तक अपने पत्ते नहीं खोले कि वह इंडिया गठबंधन में शामिल होंगी या एनडीए गठबंधन में। अंतिम समय में उन्होंने अकेले ही चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। लेकिन जिस तरह से उन्होंने उत्तर प्रदेश, जहां लोक सभा की कुल 80 सीटें हैं, में अपने उम्मीदवारों, जिनमें अधिकांश मुसलमान थे, का चयन किया तो उनके कैडर मतदाताओं को भी लगने लगा कि मायावती खास रणनीति के तहत चुनाव लड़ रही हैं। हालांकि पहला मौका नहीं था जब मायावती ने दलित और अल्पसंख्यक मतदाताओं पर यकीन किया। इसके पहले भी वह इस रणनीति को आजमाती रही हैं। लेकिन तब होता यह था कि ओबीसी का एक हिस्सा उनके साथ खड़ा रहता था। इसके पीछे वजह यह होती थी कि पिछड़ा वर्ग के अनेकानेक नेता तब बसपा के हिस्सा थे। इनमें स्वामी प्रसाद मौर्य से लेकर बाबू सिंह कुशवाहा आदि नेता भी थे। इस कारण होता यह था कि दलित, अल्पसंख्यक और गैर-यादव पिछड़ा वर्ग के साथ होने की वजह से बसपा या कहिए कि मायावती की राजनीति चलती रहती थी। लेकिन धीरे-धीरे गैर-यादव पिछड़ा वर्ग बसपा से दूर होने लगा। यही वजह रही कि 2007 में उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव में अपने बूते सरकार बनाने वाली मायावती पिछली बार हुए विधानसभा चुनाव में केवल एक सीट और हाल में संपन्न लोक सभा चुनाव में एक सीट भी जीतने में नाकाम रहीं, लेकिन इस बार के चुनाव के पहले तमाम विपरीत परिस्थितियों के बावजूद बसपा के समर्थकों के मन में एक आस थी। यह आस आकाश आनंद के रूप में

थी। आस की वजह यह थी कि मायावती ने एक नौजवान को अपना उत्तराधिकारी बनाया था और उनके समर्थकों को लगने लगा था कि अब यह पार्टी फिर से जीवित हो सकेगी। इसी विश्वास और कामना के साथ आकाश आनंद ने जब पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अपनी पार्टी के लिए चुनावी अभियान की शुरुआत की तब उनके समर्थकों में जोश भर गया। बड़ी संख्या में लोग उनकी रैलियों में जुटने लगे।

एकबारगी लगने लगा कि बसपा भाजपा की 'बी' टीम नहीं है। इसकी वजह भी थी। और वजह यह थी कि आकाश आनंद ने केंद्र में सत्तासीन भाजपा को आड़े हाथों लेना शुरू किया। उन्होंने बेरोजगारी, महंगाई और देश में बढ़ रही नफरत के लिए भाजपा की आलोचना खुले मंच से की। आकाश आनंद के इस रुख ने देश भर के राजनीतिक विश्लेषकों का ध्यान अपनी ओर खींचा। बसपा के कैडर समर्थकों को भी लगने लगा कि यदि यही दिशा और संवेग कायम रहा तो जो गैर-यादव पिछड़ा वर्ग है और जो मुसलमान हैं, वे बसपा को अपना समर्थन देंगे। लेकिन इससे पहले कि आकाश आनंद की यह रणनीति विस्तार पाती, मायावती ने उन्हें उत्तराधिकारी की गद्दी से नीचे उतार दिया। उनके द्वारा अचानक लिए गए इस फैसले को उनके कैडर समर्थकों ने भी इसी रूप में माना कि शायद मायावती को आकाश आनंद द्वारा भाजपा सरकार की आलोचना पसंद नहीं है, और यह इसलिए कि वह भाजपा के दबाव में हैं। नतीजा यह हुआ कि चंद्रशेखर आजाद जैसे युवा दलित नेता ने पहली ही बार में नगीना लोक सभा का चुनाव जीत लिया और मायावती बुरी तरह हार गईं। मायावती के उपरोक्त कदम से सबसे अधिक निराश गैर-जाटव दलित, गैर-यादव पिछड़े और मुसलमान हुए, लेकिन लोक सभा चुनाव के बाद मायावती ने अपने फैसले को दुबारा क्यों पलटा, इस बारे में हालांकि उनकी ओर से कोई सफाई नहीं दी गई है, लेकिन सियासी गलियारे में सभी जानते हैं कि लोक सभा चुनाव में जीत मिलने के बाद चंद्रशेखर की पकड़ दलित मतदाताओं पर तेजी से बढ़ने लगी है।

हाल में चंद्रशेखर ने सार्वजनिक रूप से यह बयान भी दिया था कि यदि आकाश आनंद चाहें तो उनकी पार्टी की सदस्यता ग्रहण कर सकते हैं। माना जा रहा है कि चंद्रशेखर के इस सार्वजनिक आमंत्रण ने मायावती को अपना फैसला बदलने पर मजबूर कर दिया। उन्हें भय सताने लगा कि यदि आकाश चंद्रशेखर के साथ चले गए तब बसपा के कैडर समर्थकों का एक बड़ा हिस्सा उनके साथ हो जाएगा और बदली हुई परिस्थितियों के मद्देनजर यह नामुमकिन भी नहीं है। इसे ऐसे देखें कि अखिलेश यादव उत्तर प्रदेश में पीडीए यानी पिछड़ा, दलित और अल्पसंख्यक की राजनीति कर रहे हैं, और इस बार लोक सभा चुनाव में उन्होंने इसी फार्मूले के आधार पर भाजपा को 33 सीटों पर समेट दिया।

अब चूंकि उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव की बारी है तो अखिलेश अपने इसी फार्मूले को आजमाएंगे। उनका पूरा जोर गैर-यादव ओबीसी, दलितों और अल्पसंख्यकों को साधने पर होगा, जो पूर्व में एक तरह से बसपा की रणनीति हुआ करती थी। ऐसे में मायावती के पास खुद को और अपनी पार्टी को प्रासंगिक बनाए रखने के लिए पहल लेनी ही थी। इसलिए उन्होंने आकाश को फिर से जिम्मेदारी सौंपी है। अब देखना दिलचस्प होगा कि आकाश आनंद मायावती के उत्तराधिकारी के रूप में अपनी दूसरी पारी में कितना प्रभाव डाल पाते हैं, और यह भी कि मायावती अखिलेश के पीडए फार्मूले का काट ढूंढ़ती रहेंगी या फिर भाजपा के खिलाफ उठ खड़ी होंगी।

आकाश आनंद ने जब पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अपनी पार्टी के लिए चुनावी अभियान की शुरुआत की तब उनके समर्थकों में जोश भर गया। बड़ी संख्या में लोग उनकी रैलियों में जुटने लगे। एकबारगी लगने लगा कि बसपा भाजपा की 'बी' टीम नहीं है। इसकी वजह भी थी। और वजह यह थी कि आकाश आनंद ने केंद्र में सत्तासीन भाजपा को आड़े हाथों लेना शुरू किया। उन्होंने बेरोजगारी, महंगाई और देश में बढ़ रही नफरत के लिए भाजपा की आलोचना खुले मंच से की

भारत में आम की डेढ़ हजार से ज्यादा किस्में

- -विश्व भर में आम की करीब 14 हजार किस्में हैं। अकेले भारत में ही डेढ़ हजार से ज्यादा तरह के आम पैदा होते हैं
- रटौल, तोतापरी, केसर, हिमसागर, हापुस, लंगड़ा, दशहरी, चौसा, बादामी, नीलम-तमाम वैरायटी हैं, लेकिन खाने वाले ही बता सकते हैं कि इनमें से हरेक वैरायटी कितनी खास है। कहना यह कि-न कश्चित् आम्रवत् यानी आम जैसा कोई नहीं

(मीडिया इन्पुट्स)

माननीय प्रधानमंत्री ने कहा है कि 'आपातकाल हमें संविधान बचाने की याद दिलाता है। कतई सच। लेकिन मैं जोड़ना चाहूंगा कि संविधान ने ही लोगों को एक और आपातकाल से बचने को तत्पर किया। उन्होंने भाजपा की महत्वाकांक्षा पर नकेल कसने के लिए इस तरह वोट किया कि कोई मानव या दैव शासक संविधान के बुनियादी ढांचे से छेड़छाड़ न कर सके। भारत उदारवादी, लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष राज्यों का संघ बना रहेगा।

पी. चिदंबरम, राजनेता
@PChidambaram_IN

प्रदूषण | ललित गर्ग

ऐसी मौतों का जिम्मेदार कौन

कहते हैं कि जान है तो जहान है, लेकिन भारत में बढ़ते प्रदूषण के कारण जान और जहान, दोनों ही खतरे में हैं। देश की हवा में घुलते प्रदूषण का 'जहर' अनेक बार खतरनाक स्थिति में पहुंच जाना चिंता का बड़ा कारण है। प्रदूषण की अनेक बंदिशों एवं हिदायतों के बावजूद प्रदूषण नियंत्रण की बात खोखली साबित हो रही है। यह कैसा समाज है जहां व्यक्ति के लिए पर्यावरण, अपना स्वास्थ्य या दूसरों की सुविधा-असुविधा का कोई अर्थ नहीं है। जीवन-शैली ऐसी बन गई है कि आदमी जीने के लिए सब कुछ करने लगा पर खुद जीने का अर्थ ही भूल गया। गंभीर होती इस स्थिति को यूनिसेफ और अमेरिका के स्वतंत्र अनुसंधान संस्थान 'हेल्थ इफेक्ट्स इंस्टीट्यूट' की साझेदारी में जारी रिपोर्ट ने बयां किया है। रिपोर्ट के आंकड़े करने वाले हैं, जिनमें 2021 में वायु प्रदूषण से 21 लाख भारतीयों के मरने की बात कही गई है।

दुखद यह है कि मरने वालों में 1.69 लाख बच्चे हैं। निश्चय ही ये आंकड़े जहां व्यथित और चिंतित करने वाले हैं वहीं नीति-नियंताओं के लिए शर्म का विषय होना चाहिए। सरकार की नाकामियां ही हैं कि जिंदगी विषमताओं और विसंगतियों से घिरी है, कहीं से रोशनी की उम्मीद दिखाई नहीं दे रही है। जानलेवा वायु प्रदूषण न केवल भारत, बल्कि दुनिया के लिए गंभीर समस्या है। चीन में भी इसी कालखंड में 23 लाख लोग वायु प्रदूषण से मरे हैं। जहां तक पूरी दुनिया में इस वर्ष मरने वालों की संख्या की बात है तो यह करीब 81 लाख बताई जाती है। चिंता की बात यह है कि भारत और चीन में वायु प्रदूषण से मरने वालों की संख्या के मामले में यह आंकड़ा वैश्विक स्तर पर 54 फीसद है जो हमारे तंत्र की विफलता, गरीबी और प्रदूषण नियंत्रण में कोताही को दर्शाता है। इसमें आम आदमी की लापरवाही भी कम नहीं है। उसे पता ही नहीं होता कि किन प्रमुख कारणों से वह प्रदूषण फैला रहा है। प्रश्न है कि आम आदमी एवं उसकी जीवनशैली वायु प्रदूषण को इतना बेपरवाह होकर क्यों फैलाती है? क्यों आदमी मृत्यु से नहीं डर रहा? प्रदूषण जैसी समस्याएं नये-नये मुखौटे ओढ़ कर डराती हैं। विडम्बना तो यह है कि विभिन्न राज्य सरकारें विकट होती समस्या का हल निकालने की बजाय राजनीतिक आरोप-प्रत्यारोप लगाती रहती हैं। जानबूझकर प्रदूषण फैलाती हैं ताकि एक-दूसरे की छीछालेदर कर सकें। प्रदूषण के नाम पर कोरी राजनीति होना दुर्भाग्यपूर्ण है। दिल्ली सहित उत्तर

भारत के ज्यादातर इलाकों में प्रदूषण का बेहद खतरनाक स्थिति में बने रहना चिंता में डालता है।

दिल्ली, नोएडा, गाजियाबाद, फरीदाबाद, गुरुग्राम में प्रदूषण का बड़ा कारण पड़ोसी राज्यों से आने वाला पराली का धुआं होता है। पटाखों का धुआं भी समस्या है, इसके अलावा सड़कों पर लगातार बढ़ते निजी वाहन, गुणवत्ता के ईंधन का उपयोग न होना, निर्माण कार्य खुले में होना, उद्योगों की घातक गैसों व धुएं का नियमन न होने एवं बढ़ता धूम्रपान जैसे अनेक कारण वायु प्रदूषण बढ़ाने वाले हैं। आवासीय कॉलोनियों और व्यावसायिक संस्थानों का विज्ञानसम्मत ढंग से निर्माण न हो पाना भी प्रदूषण बढ़ाने की वजह है। यह कैसी शासन-व्यवस्था है? अदालतों की कैसी अवमानना का मामला है? यह सभ्यता की निचली सीढ़ी है, जहां तनाव-ठहराव की स्थितियों के बीच व्यक्ति, शासन-प्रशासन प्रदूषण नियंत्रण के दायित्वों से दूर होता जा रहा है।

यूनिसेफ की रिपोर्ट में वायु प्रदूषण से 1 लाख 69 हजार बच्चे, जिनकी औसत आयु पांच साल से कम बताई गई है, मौत के शिकार होते हैं। प्रदूषण का प्रभाव गर्भवती महिलाओं पर होने से बच्चे समय से पहले जन्म ले लेते हैं, इनका समुचित शारीरिक विकास ढंग से नहीं हो पाता। बच्चों का कम वजन का पैदा होना, अस्थमा तथा फेफड़ों की बीमारियां से पीड़ित होना जैसी शिकायतें आम हैं। चिंता की बात यह भी है कि गरीब मुल्कों नाइजीरिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश, इथोपिया से ज्यादा बच्चे हमारे देश में वायु प्रदूषण से मर रहे हैं। विडंबना यह है कि ग्लोबल वार्मिंग तथा जलवायु परिवर्तन के संकट ने वायु प्रदूषण से होने वाली मौतों की संख्या को बढ़ाया है। एक अरब चालीस करोड़ जनसंख्या वाले भारत के लिए संकट बड़ा है। दिल्ली सहित कई महानगरों में प्रदूषण जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गया है। हर कुछ समय बाद अलग-अलग वजहों से हवा की गुणवत्ता का स्तर 'बेहद खराब' की श्रेणी में दर्ज किया जाता है और सरकार की ओर से स्थिति में सुधार के लिए तमाम उपाय करने की घोषणा की जाती है। हो सकता है कि ऐसा होता भी हो, लेकिन सच यह है कि कुछ समय बाद प्रदूषण का स्तर गहराने के साथ सवाल खड़ा होता है कि आखिर, इसकी असली जड़ क्या है, और क्या सरकार की कोशिशें सही दिशा में हो पा रही हैं?

पिछले कई सालों से दुनिया के पहले बीस प्रदूषित शहरों में भारत के कई शहर दर्ज होते रहे हैं। जाहिर है, हम वायु प्रदूषण के दिनोंदिन गहराते संकट से निपट पाने में तो कामयाब हो नहीं पा रहे, बल्कि जानते-बूझते ऐसे काम करने में जरा भी नहीं हिचकिचा रहे हैं, जो हवा को और जहरीला बना रहे हैं। हम नैतिक, आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक एवं व्यक्तिगत, सभी क्षेत्रों में मनोबल के दिवालिएपन के कगार पर आ खड़े हुए हैं।

जीवन संघर्ष | सद्गुरु

अगर आप उसे खोजना चाहते हैं, जो शाश्वत है, जो सर्वव्याप्त और सर्वसमावेशी है, तब आपके

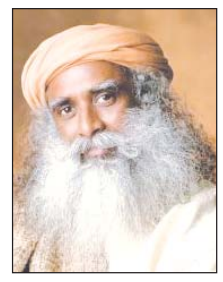

पास घूमने-फिरने, कुछ पैसे या जो भी कमाने के लिए उपलब्ध 'सामान्य' ऊर्जा काफी नहीं है। आपको बहुत अधिक की जरूरत है। अगर आप खुद को सौ फीसद अर्पित कर देते हैं, तो भी उस किस्म की ऊर्जा वाकई काफी नहीं है। सारी साधनाएं आपकी ऊर्जा को ऊंचा उठाने के लिए हैं क्योंकि जब आप असीमित को खोजते हैं, तो आपके पास कितनी भी अधिक ऊर्जा हो, वह अपर्याप्त लगती है, लेकिन इस सारी ऊर्जा को जीवन के एकमात्र लक्ष्य की ओर लगा देने से, थोड़ी संभावना बनती है कि आप उस लक्ष्य की ओर विकास करें। आप उस लक्ष्य को तुरंत हासिल कर लेते हैं या नहीं, बात वह नहीं है; आप विकास करने लगते हैं। लक्ष्य सुगम बन जाता है। जो भी व्यक्ति आध्यात्मिक मार्ग पर विकास करना चाहता है, उसके लिए एक बुनियादी जरूरत यह है कि जीवन के एकमात्र लक्ष्य की ओर-सर्वोच्च को प्राप्त करना और उससे कम किसी चीज पर संतुष्ट न होना-ऊर्जा का अविचलित प्रवाह हो। अगर कोई व्यक्ति ऐसा है जो खुद को बिना किसी रुकावट लगाए रखने में सक्षम है, तो वह धन्य है, लेकिन दुर्लभ ही ऐसे लोग आते हैं। अधिकतर लोग अपना जीवन सिर्फ झटकों में जीते हैं; कुछ पल की दौड़, फिर वे रुक जाते हैं, या शायद कुछ कदम पीछे की ओर भी ले लेते हैं, तब वे दोबारा दौड़ना शुरू करते हैं, या शायद पीछे की ओर दौड़ने लगते हैं। अधिकतर लोगों के लिए जीवन इस तरह बरबाद हो जाता है। कुछ ही दुर्लभ ऐसे होते हैं जो एक बार शुरू हो जाने पर, उनके लिए कोई रुकना नहीं होता; वे बस जारी रहते हैं। 'शुरू किया और रुक गए' वाले दूसरे लोगों के लिए, उन्हें हर समय चलाते रहने के लिए किसी व्यक्ति की जरूरत पड़ती है। उस 'किसी व्यक्ति' का काम थोड़े समभाव के साथ जरूरत के अनुसार 'गाजर और छड़ी' को इस्तेमाल करना है। कभी-कभी गाजर कारगर नहीं होती, तब हम छड़ी इस्तेमाल करते हैं। कभी-कभी छड़ी कारगर नहीं होती, तब हम गाजर इस्तेमाल करते हैं। यह उस तरह है।

रीडर्स मेल

असांजे की रिहाई

हर देश दावा करता है कि उसके यहां अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है, मगर असल में ऐसा है नहीं। सभी देश राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर कई जानकारियां जनता से छुपा कर रखते हैं, जो इन्हें जानने खासकर खोजी पत्रकारिता के रूप में उन पर लेख लिखने की हिम्मत करेगा तो उसे जूलियन असांजे जैसे निर्भीक खोजी पत्रकार, जो ब्रिटेन जैसे लोकतांत्रिक देश में पांच वर्षों तक जेल में रहे, की भांति जेल में रहना पड़ेगा। सोमवार 24 जून, असांजे के लिए तथा दुनिया भर के स्वतंत्र एवं निष्पक्ष पत्रकारिता करने वालों के लिए हर्ष का दिन रहा। आखिरकार, विकीलीक्स के संस्थापक जूलियन असांजे यूके में बेलमार्श जेल से बाहर आ गए। एक समझौते के तहत देश में उनकी कैद समाप्त हो गई और उन्हें ऑस्ट्रेलिया लौटने की अनुमति मिल गई। ब्रिटिश सरकार ने तो उन्हें 2022 में ही अमेरिका प्रत्यर्पित करने की अनुमति दे दी थी। मामला ब्रिटेन की अपीली अदालत में सुनवाई के लिए नहीं रुकता तो शायद 2022 में ही अमेरिका में असांजे को फांसी की सजा दे दी जाती। असांजे के सहारे दुनिया ने अमेरिका का वो काला चिट्ठा जाना जिसमें उसने इराक, अफगानिस्तान में युद्धापराध को अंजाम दिया था। असांजे की कई रिपोर्ट ने अमेरिका ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व में खलबली मचा दी थी। खोजी पत्रकारिता का अब तक का यह सबसे साहसी प्रयास था जिसने बता दिया कि निडर पत्रकारिता में जोखिम तो हैं मगर लोगों का प्यार भी भरपूर मिलता है।

जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

सराहनीय कदम

हमारे देश में पहले से बनाए गए कानून में काफी खामियां नजर आती हैं जिस पर समय-समय पर सरकार उसमें बदलाव करती रही है। केंद्रीय सिविल सेवा नियमावली, 1972 में बदलाव के अनुसार सरोगेसी यानी किराए की कोख के जरिए मां बनने वाली महिला को 6 दिन का मातृत्व अवकाश दिया जाएगा, उसी तरह जैसे प्रसूता को मिलता है। केंद्रीय सिविल सेवा अवकाश संशोधन नियम, 2024 तत्काल लागू होगा। पुरुष को भी 15 दिन का पितृत्व अवकाश दिया जाएगा। बच्चों की देखभाल करने के लिए 730 छुट्टियों का प्रावधान भी सरोगेसी मामले में लागू होगा। ऐसे कदम सराहनीय हैं।

मीना धानिया, सिरसपुर

गलत काम का गलत नतीजा

गलत काम का गलत नतीजा होता है। पेपर में छपे इन अपराधियों के चित्रों को ही लें। ये सभी प्रवेश परीक्षा में पेपर लीक मामले में दोषी हैं। आज कोई भी गड़बड़ी होने पर उसका खुलासा हो जाता है। पेपर लीक का केस नया नहीं है। व्यक्ति नौकरी की तैयारी करता है, परीक्षा पास करने के लिए मेहनत करता है, दूसरे शहर भटकता है। उसकी इस मेहनत को समझा जा सकता है। वहीं कुछ जालसाज परीक्षा में सेंधमारी करते हैं। हालांकि उनका पर्दाफाश हो जाता है और वे इसकी सजा भी भुगतते हैं। लेकिन वे ऐसा गलत काम करके अनेक लोगों के भविष्य से खिलवाड़ करते हैं। सोचें उन पर क्या बीतती होगी जो सुखद परिणाम की आस लगाए बैठे होते हैं। फिर पता चलता है कि परीक्षा रद्द हो गई। काश, ये तिकड़मी अपने दिमाग को रचनात्मक दिशा देते तो शायद ये समाज के आदर्श होते।

दिलीप कुमार गुप्ता, बरेली
letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा ● राष्ट्रीयता ● कर्तव्य ● समर्पण

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3,4, सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 705-706, सातवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित।
। समूह संपादक - डॉ. विजय राय। स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 23352368, 23352369, 23352371, 23352372, फैक्स - 23352370, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750

वर्ष-33, अंक 264 | आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026 | *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

https://t.me/Allnewspaperpdf

www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
बुधवार 26 जून, 2024

दैनिक जागरण

संवाद ही विवाद समाप्त कराने में सक्षम है

देरी के दुष्परिणाम

यह अच्छा है कि जहां नेशनल टेस्टिंग एजेंसी यानी एनटीए की ओर से रद एवं स्थगित की गई परीक्षाओं को फिर से आयोजित करने की तैयारी की जा रही है, वहीं इस एजेंसी की कार्यप्रणाली में सुधार के लिए गठित उच्चस्तरीय समिति परीक्षाओं को पारदर्शी बनाने के लिए छात्रों, अभिभावकों और शिक्षाविदों से विचार-विमर्श करने जा रही है, लेकिन और भी अच्छा होता कि यह सब बहुत पहले कर लिया जाता। यदि केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय तभी चेत जाता, जब पहली बार एनटीए की किसी परीक्षा को लेकर प्रश्न खड़े हुए थे तो संभवतः आज जो स्थिति बनी, वह नहीं बनती। केंद्र सरकार और विशेष रूप से केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय को यह आभास होना चाहिए कि एनटीए की कार्यप्रणाली में खामी के चलते न केवल मेडिकल कालेजों में प्रवेश की परीक्षा यानी नीट की विश्वसनीयता को लेकर गंभीर सवाल खड़े हुए, बल्कि ऐसे ही सवालों की आशंका के चलते कुछ और परीक्षाओं को रद अथवा स्थगित करना पड़ा। इसके चलते करीब 37 लाख छात्र प्रभावित हुए हैं। यह एक बहुत बड़ी संख्या है और आश्चर्य नहीं कि इन छात्रों और उनके अभिभावकों के मन में सरकार के प्रति असंतोष हो। जैसे केंद्र सरकार केंद्रीय स्तर की प्रतियोगी परीक्षाओं की विश्वसनीयता बनाए रखने को लेकर समय रहते नहीं सजग हुई, वैसी ही गलती कई राज्य सरकारों से भी हुई।

पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न राज्य सरकारों की ओर से आयोजित की गई प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र या तो लीक हो गए या उनके परिणामों को लेकर सवाल उठे। कुछ ऐसी भी प्रतियोगी परीक्षाएं रहीं, जो समय पर संपन्न तो हो गईं, लेकिन उनके परिणाम तय अवधि में घोषित नहीं किए गए। हैरानी नहीं कि इन सब कारणों से हाल के लोकसभा चुनावों में भाजपा के खिलाफ माहौल बना हो। वैसे तो पिछले कुछ वर्षों में शायद ही कोई ऐसी राज्य सरकार रही हो, जिसकी प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र लीक न हुए हों, लेकिन औरों से अलग होने का दावा करने वाली भाजपा की केंद्र एवं राज्य सरकारों से यही अपेक्षित था कि वे इन मामलों पर कहीं अधिक सजगता का परिचय देतीं। कोई नहीं जानता कि ऐसा क्यों नहीं किया गया? आखिर छात्रों के हितों की रक्षा और प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रति उनके भरोसे को बनाए रखने के लिए अब जो कदम उठाए जा रहे हैं, वे पहले क्यों नहीं उठाए जा सके? भाजपा नेतृत्व और उसकी सरकारों को यह आभास होना चाहिए कि समय पर सही कदम न उठाने के क्या दुष्परिणाम होते हैं? हो सकता है कि परीक्षाओं की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न स्तरों पर जो पहल की जा रही है, उसके सार्थक परिणाम सामने आएं, लेकिन प्रश्न यह है कि विभिन्न परीक्षाओं को रद एवं स्थगित करने अथवा उनके परिणाम घोषित करने में देरी के कारण लाखों छात्रों को जो परेशानी उठानी पड़ी, क्या उसकी भरपाई संभव है?

वित्त आयोग से आशाएं

हिमाचल प्रदेश में प्राकृतिक संसाधन तो हैं, लेकिन राज्य को उनका लाभ नहीं मिल पा रहा। अपने हक के लिए भी हिमाचल को लड़ाई लड़नी पड़ रही है। प्रदेश की हर सरकार राज्य के हितों के लिए आवाज उठाती रही है। प्रदेश में स्थापित कई परियोजनाओं पर अन्य राज्यों का अधिकार है। 16वें वित्त आयोग का दल प्रदेश के प्रवास पर है। सोमवार को वित्त आयोग के समक्ष मुख्यमंत्री सुखविंदर सिंह सुक्खू की अध्यक्षता में सरकार ने प्रस्तुति दी। इसमें राज्य से जुड़े कई मुद्दे उठाए गए। मुख्यमंत्री ने बताया कि हिमाचल प्रदेश सीमावर्ती राज्य है। यहां के सीमांत क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाएं व विकास आवश्यक है ताकि यहां से पलायन रोका जा सके। प्रदेश राष्ट्र के लिए भी महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। हरित आवरण को सुरक्षित रखने के लिए पेड़ कटान पर प्रतिबंध है, इससे राज्य को करोड़ों रुपये के राजस्व की हानि हो रही है। भाखड़ा एवं पौंग बांध के निर्माण के कारण राज्य की हजारों एकड़ जमीन जलमग्न हो गई, हजारों लोगों को पलायन करना पड़ा। इन बांधों से हिमाचल को कोई लाभ नहीं मिल रहा है। जोगेंद्रनगर स्थित शानन बिजली परियोजना पर पंजाब का अधिकार है। अब उसकी लीज अवधि भी समाप्त हो गई है। इसे भी हिमाचल को सौंपा जाना चाहिए। बैठक में यह भी तर्क दिया गया कि राज्य में सड़क निर्माण एवं अन्य कार्यों में अधिक खर्च आता है। आपदा से निपटने के लिए भी राज्य को अधिक खर्च करना पड़ता है। मैदानी राज्यों की अपेक्षा पहाड़ी क्षेत्र में निर्माण की लागत बढ़ जाती है, लेकिन केंद्र दोनों के लिए समान बजट उपलब्ध करवाता है। इससे हिमाचल जैसे पहाड़ी राज्य को नुकसान झेलना पड़ता है।

आशा है कि प्रदेश सरकार की ओर से उठाए मुद्दों पर 16वां वित्त आयोग गंभीरता से विचार करेगा

तानाशाही मानसिकता की उपज था आपातकाल

अमित शाह

यदि संविधान को नष्ट करने का कुत्सित प्रयास किसी ने किया है तो वह कांग्रेस ने किया है

भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में 25 जून, 1975 की तारीख एक काले अध्याय के रूप में दर्ज है। इस दिन कांग्रेस सरकार द्वारा आपातकाल की घोषणा कर लोकतंत्र को बंधक बनाने का अपराध किया गया था। इस घटना को हमें इसलिए सदैव स्मरण रखना चाहिए ताकि फिर इसकी पुनरावृत्ति न हो तथा लोकतंत्र सदैव मजबूत बना रहे। 1951-52 में देश के पहले आम चुनाव हुए और शासन की बागडोर चुनी हुई सरकार के हाथों में आई। स्वतंत्रता आंदोलन की कोख से निकली कांग्रेस को स्वाभाविक तौर पर शासन व्यवस्था के नेतृत्व का पहला अवसर मिला। यह वह समय था, जब विपक्ष की स्थिति लगभग शून्य थी। विपक्ष-शून्य शासन के इस दौर में जवाहरलाल नेहरू सरकार ने संविधान और लोकतंत्र को धता बताते हुए अनेक मनमानियां कीं। 1951-52 में नेहरू सरकार द्वारा पहला संविधान संशोधन रखा गया, जिसका उद्देश्य अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करना था।

पहले आम चुनाव के बाद के दो दशकों में विपक्ष की स्थिति काफी मजबूत हो गई थी। विपक्ष-शून्य शासन चलाने वाली कांग्रेस इसे स्वीकार नहीं कर पा रही थी। विपक्ष की बढ़ती शक्ति से बौखलाई कांग्रेस को जब अपनी सत्ता खिसकती हुई महसूस हुई, तो 1975 में इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगा दिया। आपातकाल की जड़ की तरफ देखें तो इसके पीछे लोकतंत्र विरोधी सोच नजर आता है। कुशासन और भ्रष्टाचार से उपजा जनांदोलन इंदिरा गांधी के लिए परेशानी का सबब था। जिन घटनाक्रमों से हाई कोर्ट के आदेश ने इंदिरा गांधी के चुनाव को रद किया, उसे वह स्वीकार नहीं कर पाईं। आपातकाल की जड़ें तानाशाही की मानसिकता में होती हैं। कांग्रेस ने 28 साल लगातार शासन करने के बाद अपनी डगमगाती सत्ता बचाने के लिए संविधान की मर्यादा को तार-तार करते हुए आपातकाल लगा दिया। 25 जून, 1975 की मध्यरात्रि के बाद पूरे देश को जेल में तब्दील कर दिया गया। जनता के मौलिक अधिकार खत्म कर दिए गए। लोकतंत्र की प्रहरी संसद को भंग कर दिया गया। सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस की नियुक्ति असंवैधानिक तरीके से करके न्यायपालिका को बंदी बना लिया गया, ताकि इंदिरा गांधी की संसद सदस्यता न खत्म हो। नौकरशाही को इंदिरा के व्यक्तिगत तंत्र के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। प्रजातंत्र के चौथे स्तंभ मीडिया पर बैन लगा दिया गया। मीडिया संस्थानों की बिजली काट दी गई और पत्रकारों को गिरफ्तार कर लिया गया। कांग्रेस के गुर्गे खबरों को स्कैन करके प्रकाशित होने देते थे। आपातकाल लगते ही लोकनायक जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटल बिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी और जार्ज फर्नांडिस समेत विपक्ष के सभी बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया और उन्हें यातनाएं दी गईं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ समेत अनेक सामाजिक-सांस्कृतिक संगठनों पर पाबंदी लगा दी गई। देश यह देखकर अचंभित रह गया कि कैसे इंदिरा गांधी ने निजी महत्वाकांक्षा के आगे संविधान को तिलांजलि दे दी। संविधान का आत्मा कही जाने वाली मूल प्रस्तावना में परिवर्तन का भीषण अपराध भी आपातकाल के काले दौर में कांग्रेस द्वारा किया गया।

अवधेश राजपूत

1977 के चुनाव में जनता ने आपातकाल की यातनाओं का जवाब देते हुए कांग्रेस को हार का मुंह दिखाया। इंदिरा गांधी भी चुनाव हार गईं। इसके बावजूद कांग्रेस ने लोकतंत्र को चुनौती देना बंद नहीं किया। आज अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का राग अलापने वाली कांग्रेस को राजीव गांधी सरकार द्वारा लाया गया 'मानहानि विधेयक' नहीं भूलना चाहिए। अभिव्यक्ति की आजादी को कुचलने की मंशा से लाए गए इस बिल को उन्हें वापस लेना पड़ा था। आज जब कांग्रेस संविधान बचाने का नारा लगा रही है, तब उसे अपने इतिहास को देखना चाहिए। संविधान को नष्ट करने का कुत्सित प्रयास यदि किसी ने किया है तो वह कांग्रेस ने। एक खास परिवार को सत्ता में बनाए रखने के लिए कांग्रेस ने कई बार संविधान की भावना को कुचला है। संविधान बचाने की बात करने वाले राहुल गांधी भूल जाते हैं कि उनकी दादी ने आपातकाल लगाया और पिता राजीव गांधी ने 23 जुलाई, 1985 को इस पर गर्व करते हुए लोकसभा में कहा था, 'इसमें कुछ भी गलत नहीं।' उन्होंने यह भी कहा था, 'अगर कोई प्रधानमंत्री यह महसूस करता है कि आपातकाल आवश्यक है और वह आपातकाल लागू नहीं करता तो वह प्रधानमंत्री बनने लायक नहीं है।' स्पष्ट है कांग्रेस ने केवल आपातकाल लगाया ही नहीं, बल्कि उस पर गर्व भी किया। तानाशाही पर गर्व यही दर्शाता है कि कांग्रेस को परिवार और सत्ता के अलावा और कुछ प्रिय नहीं है। कांग्रेस को लोकतंत्र और संविधान पर बोलने का कोई नैतिक अधिकार ही नहीं है। आज जब कांग्रेस संविधान की दुहाई देती है और उसके पीछे समाजवादी लोग तख्ती लहराते हैं, तो यही स्पष्ट होता है कि उनमें संविधान के प्रति कोई निष्ठा नहीं, सिर्फ सत्ता पाने की आतुरता है। ये लोग भूल जाते हैं कि समाजवादी परंपरा के ध्वजवाहक जयप्रकाश नारायण, राजनारायण, जार्ज फर्नांडिस, चौधरी चरण सिंह, मुलायम सिंह आदि को कांग्रेस ने जेल में ठूंसा था। बेहतर होता कि समाजवादी मित्र आपातकाल की बरसी पर अपने पूर्वजों का सम्मान करते और सियासी लोभ में कांग्रेस के पिछलग्गू न बनते।

सत्ता के लोभ और अहंकार में कांग्रेस ने अनेक ऐसे कार्य किए, जो लोकतंत्र की न्यूनतम मर्यादा को खंडित करने वाले हैं। अनुच्छेद-356 का इस्तेमाल कर दर्जनों सरकारों को अकारण बर्खास्त करना इनमें से एक है। जिस पार्टी के मूल में ही लोकतंत्र रचा-बसा न हो, वह देश को लोकतंत्र कैसे दे सकती है? कांग्रेस की संरचना ही वंशवाद की बुनियाद पर टिकी है। यही वंशवाद कांग्रेस की तानाशाही व्यवस्था के मूल में है, जिसकी अनेक उपजों में एक आपातकाल था।

देश में सशक्त लोकतंत्र को नेतृत्व वही पार्टी दे सकती है, जिसकी आंतरिक बनावट एवं कार्यशैली लोकतंत्र की बुनियाद पर आधारित हो। इन मानकों पर भाजपा शत-प्रतिशत खरी उतरती है। लोकतंत्र का अर्थ चुनाव और राजनीतिक व्यवस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका वृहद स्वरूप है, जिसमें सर्वसमावेशी विकास, सबको सुरक्षा, समान अवसर, समान अधिकार निहित हैं। लोकतंत्र की इसी भावना को मोदी सरकार पिछले 10 वर्षों से विभिन्न नीतियों एवं योजनाओं के माध्यम से चरितार्थ कर रही है।

(लेखक केंद्रीय गृहमंत्री हैं)
response@jagran.com

शत्रुता के भाव से भरी संसद

राजीव सचान

क्या इससे बड़ी विडंबना और कोई हो सकती है कि सत्तापक्ष-विपक्ष के बीच बैर भाव बढ़ता जाए?

लोकसभा चुनाव के नतीजे वाले दिन ही यह स्पष्ट हो गया था कि इस बार सत्तापक्ष-विपक्ष के बीच तनातनी पहले से अधिक दिखेगी। इसका कारण भाजपा का बहुमत से दूर रह जाना और कांग्रेस की सीटें लगभग दोगुनी हो जाना एवं उसके सहयोगी दलों का संख्याबल बढ़ जाना मात्र नहीं। इसका एक अन्य कारण भाजपा और कांग्रेस के बीच का बैर भाव है, जो 2014 के लोकसभा चुनावों के बाद से लगातार बढ़ता रहा है। क्या इस समय यह अपने चरम पर पहुंच गया है? ऐसा कुछ कहना इसलिए कठिन है, क्योंकि अभी तो नई लोकसभा की शुरुआत ही हो रही है। 2014 के बाद जैसे कांग्रेस ने नरेन्द्र मोदी को प्रधानमंत्री के रूप में स्वीकार करने से इन्कार किया, वैसे ही भाजपा ने कांग्रेस को प्रमुख विपक्षी दल की तरह देखने से इन्कार ही नहीं किया, बल्कि कांग्रेस मुक्त भारत का नारा भी दिया। 2019 में जब नरेन्द्र मोदी दोबारा चुनकर सत्ता में आ गए तो कांग्रेस ने जहां ऐसा प्रकट किया कि जनता ने फिर से गलती कर दी है, वहीं भाजपा ने यह जताना शुरू कर दिया कि मोदी की लोकप्रियता के चलते कांग्रेस खत्म ही होने वाली है। इस कारण भाजपा और कांग्रेस के बीच पक्ष और विपक्ष वाले संबंध कभी पनप ही नहीं सके और अब तो इसके आसार और भी कम लग रहे हैं। यद्यपि कांग्रेस को लोकसभा चुनाव में केवल 99 सीटें मिली हैं, लेकिन वह ऐसे व्यवहार कर रही है, जैसे उसने बहुमत हासिल कर भाजपा को सत्ता से बाहर कर दिया है और फिर किसी कारण सत्ता से बाहर रहना पसंद किया है।

कांग्रेस के हिसाब से लोकसभा चुनाव में भाजपा की नैतिक और राजनीतिक हार हुई है, लेकिन उसके पास इस सवाल का जवाब नहीं कि यदि ऐसा कुछ है तो फिर नरेन्द्र मोदी ने तीसरी बार प्रधानमंत्री पद की शपथ कैसे ले ली? कांग्रेस और विशेष रूप से राहुल गांधी प्रधानमंत्री मोदी के प्रति किस तरह विद्वेष से भरे हुए हैं, इसके प्रमाण उनकी ऐसी भाषा से पहले भी मिलते रहे हैं.. मोदी डरपोक है।.. आंख से आंख मिलाकर बात नहीं कर सकता।...अभी हाल में राहुल गांधी इससे खासे संतुष्ट दिखे कि वाराणसी यात्रा के दौरान प्रधानमंत्री के काफिले पर किसी ने चप्पल फेंक दी। इसे उन्होंने प्रधानमंत्री के घटते राजनीतिक कद के रूप में ही नहीं, बल्कि इस रूप में भी बयान किया कि लोगों में उनका डर कम होता जा रहा है। वह इस घटना को अपनी राजनीतिक जीत के रूप में मनाते दिखे। जब उनके इस बयान की आलोचना हुई तो उन्होंने कुछ घंटे बाद एक्स पर पोस्ट किया कि प्रेस कांफ्रेंस में यह महत्वपूर्ण बात कहनी रह गई थी कि मोदी और उनके काफिले पर चप्पल फेंका जाना बहुत ही निंदनीय और उनकी सुरक्षा में गंभीर चूक है।

नई लोकसभा का पहला दिन। एएनआइ

16वीं और 17 वीं लोकसभा की तरह 18वीं लोकसभा में सत्तापक्ष-विपक्ष के बीच एक दूसरे को नीचा दिखाने का काम और तेजी से होगा, यह उस दिन भी स्पष्ट हुआ, जब मोदी प्रधानमंत्री पद की शपथ ले रहे थे। विपक्ष ने इस समारोह का बहिष्कार करना पसंद किया। मल्लिकार्जुन खरगे अवश्य इस समारोह में गए, लेकिन राज्यसभा में नेता विपक्ष के रूप में। मोदी के तीसरी बार प्रधानमंत्री बनने पर चीन और पाकिस्तान तक ने तो बधाई दे दी, लेकिन कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों ने इसकी जरूरत नहीं समझी। पक्ष-विपक्ष के बीच का शत्रुभाव तब भी प्रकट हुआ, जब सत्तापक्ष ने नव निर्वाचित सांसदों को शपथ दिलाने के लिए लोकसभा के प्रोटेम स्पीकर के रूप में वरिष्ठ सांसद भर्तृहरि महताब की नियुक्ति की। कांग्रेस ने इस नियुक्ति पर यह कहकर विरोध जताया कि इस पद के लिए सबसे वरिष्ठ सांसद के. सुरेश की अनदेखी की गई। इस विरोध को निराधार नहीं कहा जा सकता, क्योंकि परंपरा यही है कि सबसे वरिष्ठ सांसद को प्रोटेम स्पीकर के तौर पर चुना जाता है। भाजपा आसानी से ऐसा कर सकती थी, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। हैरानी नहीं कि इसका कारण प्रोटेम स्पीकर के तौर पर विपक्षी सांसद पर भरोसा न करना रहा हो। प्रोटेम स्पीकर कोई महत्वपूर्ण पद नहीं। यह महज दो-तीन दिन उपयोगी साबित होने वाला एक अस्थायी पद है। इसके बाद भी कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों ने प्रोटेम स्पीकर के तौर पर भर्तृहरि महताब की नियुक्ति के विरोध में अन्य विपक्षी सांसदों को उनके पैनल में शामिल होने से मना कर दिया।

नव निर्वाचित सांसदों के शपथ ग्रहण के दौरान संसद में जो अमैत्रीपूर्ण माहौल दिखा, उसमें और अधिक वृद्धि ही होने के आसार हैं। इसका एक अन्य प्रमाण लोकसभा स्पीकर के चुनाव की नौबत आना है। यह नौबत इसीलिए आई, क्योंकि सत्तापक्ष डिप्टी स्पीकर का पद विपक्ष को देने को तैयार नहीं। सत्तापक्ष डिप्टी स्पीकर का पद विपक्ष को देकर उससे संबंध सुधार की पहल कर सकता था, लेकिन यदि वह ऐसा करता तो बहुत संभव है कि कांग्रेस यह प्रचारित करने लगती कि विपक्ष के संख्याबल से मोदी डर गए।

मोदी सरकार इस बार गठबंधन सरकार का नेतृत्व कर रही है। इसके पहले भी गठबंधन सरकारें बन चुकी हैं और उन्होंने महत्वपूर्ण फैसले भी किए हैं-वह चाहे नरसिंह राव सरकार रही हो अथवा वाजपेयी सरकार। ये दोनों सरकारें कई बड़े फैसले ले सकीं तो इसीलिए, क्योंकि तब पक्ष-विपक्ष के बीच आज जैसा बैर भाव नहीं था। तब पक्ष-विपक्ष को दलगत राजनीति से ऊपर उठना आता था। आज इसकी कल्पना करना कठिन है कि दोनों पक्ष दलगत हितों से ऊपर उठ सकेंगे, क्योंकि दोनों में एक-दूसरे के प्रति भरोसा नहीं और इससे भी खराब बात यह है कि दोनों के बीच शत्रुता का भाव बढ़ता जा रहा है। यह भारतीय लोकतंत्र के लिए हितकारी नहीं हो सकता।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)
response@jagran.com

https://t.me/AllNewsPaperPaid

ऊर्जा

बुद्धि और विवेक

जीवन से जुड़े विभिन्न उपक्रमों का अर्थ जानना-समझना बहुत आवश्यक होता है। जैसे कि प्रवृत्ति और निवृत्ति। ये हमारे जीवन की महत्वपूर्ण कड़ियां हैं। प्रवृत्ति का अर्थ है आगे बढ़ना और कुछ सृजन करना। जबकि निवृत्ति का तात्पर्य इसका उलट है। निवृत्ति से आशय समय पर लक्ष्य प्राप्ति के पश्चात वापस अपने मूल स्थान पर लौट आना है। इसी संदर्भ में कर्तव्य का अर्थ है जो कार्य हमें अवश्य करना ही चाहिए तथा अकर्तव्य का अर्थ है जिस दिशा में हमें कदापि नहीं जाना चाहिए। भय का वास्तविक तात्पर्य है कि जब हमें यह ज्ञात हो जाए कि किसके प्रति हमारा भय होना चाहिए और कहां भयभीत नहीं होना चाहिए। वस्तुतः, अभय का असंयम ही भय को जन्म देता है।

मुक्ति एवं बंधन का भी यही समीकरण है। यह जानना आवश्यक है कि हम किस बंधन से मुक्त हों और कौन से बंधनों को शिरोधार्य करें। धर्म, कर्तव्य, सेवा, लोक कल्याण, असहायों की सेवा, गऊ सेवा और नित्य जप आदि के बंधन ही मुक्ति के कारक होते हैं। यदि हम इस मार्ग से स्वयं को विमुख कर लेंगे तो यह स्थिति हितकारी नहीं होगी।

हमारी बुद्धि एवं विवेक हमें नाना प्रकार की दुविधाओं से बचाकर हमारा मार्गदर्शन करते हैं। इनसे हमें उचित-अनुचित का भेद होता है। ऐसा भेद कराने वाली बुद्धि ही सात्विक बुद्धि कही जाती है। जो बुद्धि कर्तव्य और अकर्तव्य के यथार्थ को भी नहीं जानती तो वह राजसी ही कही जाएगी। उसके माध्यम से आनंद की उपलब्धि संभव नहीं। इसी प्रकार, जो लोग हिंसा और प्रमाद को ही सर्वस्व जानकर उसे धर्म का पर्याय मानते हों तो उनकी बुद्धि निश्चित रूप से तामसी होती है। बुद्धि के ये सभी विभाग मूल रूप से काल, कर्म, स्वभाव और गुण के अधीन होते हैं। सत्संग के प्रभाव से इनके भेद जानकर व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप में अवस्थित हो सकता है। उसके उपरांत ही परम आनंद की प्राप्ति संभव है।

स्वामी मैथिलीशरण

मलबा मुक्त अंतरिक्ष का सपना

सुधीर कुमार

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने हाल में अंतरिक्ष को मलबे से मुक्त करने की अपनी महत्वाकांक्षी योजना को 2025 में शुरू करने और 2030 तक इसे हासिल करने की घोषणा की है। इसका उद्देश्य भारत द्वारा भविष्य में प्रक्षेपित किए जाने वाले अंतरिक्ष यानों को मिशन पूरा करने के उपरांत सफलतापूर्वक कक्षा से बाहर निकालना और उन्हें पृथ्वी के वायुमंडल में नष्ट करना है। यह अभियान अंतरिक्ष मलबे के प्रबंधन से संबंधित है, जिससे अंतरिक्ष की स्वच्छता बनी रहेगी। विगत 21 मार्च को इसरो द्वारा प्रक्षेपित एक्सपोसैट मिशन (पीएसएलवी-सी58) अंतरिक्ष की कक्षा में किसी भी तरह का मलबा फैलाए बिना ही पृथ्वी के वायुमंडल में लौट आया था। इस सफलता से अंतरिक्ष मलबे के प्रबंधन में नई प्रेरणा मिली। मलबा न फैलाने की इसरो की प्रतिबद्धता सराहनीय है, पर इसे एक वैश्विक अभियान बनाना जरूरी है। मलबा अंतरिक्ष-अभियानों के मार्ग में रुकावट पैदा करने और टकराव की स्थिति उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी है।

अंतरिक्ष मलबा अंतरिक्ष-अभियानों के मार्ग में रुकावट पैदा करने और टकराव की स्थिति उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी है

चार अक्टूबर, 1957 को सोवियत संघ ने पहला कृत्रिम उपग्रह स्पुतनिक-1 को अंतरिक्ष में प्रक्षेपित करके एक नए 'अंतरिक्ष युग' की शुरुआत की थी। इसके बाद से ही अंतरिक्ष मिशन के क्षेत्र में दुनियाभर में प्रतिस्पर्धा बढ़ने लगी, जिससे विभिन्न राष्ट्रों ने अंतरिक्ष अनुसंधान में प्रगति करने के लिए उत्सुकता जताई। यूरोपियन स्पेस एजेंसी के अनुसार, तब से लेकर अब तक तकरीबन 6,640 राकेट की सफलतापूर्वक लांचिंग की जा चुकी है। इनमें से लगभग 12,540 राकेट आज भी अंतरिक्ष में मौजूद है। अंतरिक्ष यानों के प्रक्षेपणों में वृद्धि के साथ अंतरिक्ष कचरे की समस्या गहराती जा रही है। अंतरिक्ष निगरानी नेटवर्क के 2021 के अनुमान के अनुसार अंतरिक्ष में उपस्थित मलबों में 36,500 वस्तुओं का आकार 10 सेमी से बड़ा, 10 लाख वस्तुओं का एक सेमी से 10 सेमी तथा 1.30 करोड़ वस्तुओं का आकार एक मिलीमीटर से एक सेंटीमीटर के बीच है। मलबे में राकेट लांचिंग से जुड़ी सामग्री, निष्क्रिय उपग्रह या उसके अंश, धातु इत्यादि शामिल हैं। अंतरिक्ष को मलबा-मुक्त बनाने के लिए संयुक्त राष्ट्र ने सभी कंपनियों से अपने मिशन के खत्म होने के 25 वर्ष के भीतर अपने उपग्रहों को कक्षा से हटाने को कहा है। दुर्भाग्य है कि अंतरिक्ष यातायात को विनियमित करने और वहां मलबा कम करने के लिए कोई मानक कानूनी ढांचा नहीं है। उपग्रहों को लांच करते समय अंतरिक्ष में इससे उत्पन्न होने वाले संभावित मलबे से बचने की नीति बनाने की दरकार है। मलबा मुक्त अंतरिक्ष का सपना सामूहिक वैश्विक सहभागिता से ही संभव है। बहरहाल इसरो ने इस दिशा में सकारात्मक पहल की है और दुनिया के सामने नजीर पेश किया है।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

मेलबाक्स

सामने आए आपातकाल का सच

'लोकतंत्र को कलंकित करने वाला अध्याय' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में ए. सूर्यप्रकाश ने उस वास्तविकता से परिचित कराया है, जिससे देश की करीब-करीब दो पीढ़ियां अनभिज्ञ रही हैं। भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में आपातकाल जैसी कलंकित घटना को घटित हुए करीब-करीब आधी सदी बीत चुकी है, किंतु उस दौर से जुड़े तमाम दस्तावेज और अहम जानकारियां अभी भी सार्वजनिक दायरे में नहीं हैं। संभव है कि इसके पीछे लंबे समय तक रहा कांग्रेसी शासनकाल भी एक वजह हो, क्योंकि ऐसी बातें सामने आने से पार्टी को असहज होना पड़ता, क्योंकि आपातकाल के मूल में इंदिरा गांधी की ही निर्णायक भूमिका थी। लेखक का यह तर्क भी उचित है कि एक समय देश के संविधान और लोकतांत्रिक मूल्यों को ताक पर रखने वाले एकाएक कैसे खुद को उसके रक्षक होने का दावा कर सकते हैं और उनका यह दावा कितना विश्वसनीय हो सकता है। मौजूदा सरकार की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह आपातकाल के उन अत्याचारों को सामने रखने का काम करे, जिन पर अभी तक पर्दा पड़ा हुआ है। यह इसलिए भी आवश्यक है, ताकि उन भूलों को न दोहराया जाए, जिन्होंने अतीत में हमारी दुर्गति की हो।

रवि वार्ष्णेय, बुलंदशहर

मनभेद राजनीति के लिए घातक

संविधान बचाने वाले नेता आपातकाल को इतिहास बताते हैं, लेकिन काला कालखंड कहने में शर्म आती है। समाजवादी पार्टी के पूर्व अध्यक्ष मुलायम सिंह यादव को आपातकाल में पीठ पर अनगिनत लाठियां खानी पड़ी थीं, लेकिन वर्तमान में सत्तालोलुपता में समाजवादी पार्टी ने कांग्रेस से ही हाथ मिलाया हुआ है। आरजेडी के सर्वेसर्वा एवं बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव की बेटी एवं वर्तमान सांसद मीसा भारती का नाम मीसा कैसे पड़ा? निश्चित ही विपक्षी दलों खासकर आरजेडी द्वारा भारतीय जनता को बताना चाहिए। लोकसभा चुनाव 2024 के लिए बना महागठबंधन आइएनडीआइए के नेतागण को सेक्युलर शब्द से बहुत मोहब्बत है, विपक्षी दलों द्वारा यकीनन हर भारतीय को बताना चाहिए कि सेक्युलर शब्द संविधान में कब, क्यों और किस राजनीतिक पार्टी के द्वारा जोड़ा गया। यहीं नहीं तामिलनाडु में जहरीली शराब से 57 दलित लोगों की मृत्यु हो गई, लेकिन आइएनडीआइए के किसी भी घटक दल ने डीएमके की भर्त्सना तक नहीं की। प्रदर्शन राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की प्रतिमा के समक्ष करना है जबकि यह सर्वविदित है कि गांधी जी मद्यपान के कट्टर विरोधी थे। भविष्य में विपक्षी दलों को संसद में परिपक्वता और धैर्यशीलता का परिचय देना चाहिए जिससे देश के विकास, बाह्य एवं आंतरिक सुरक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं, रोजगार सृजन के कार्य, बढ़ती मंहगाई पर अंकुश, विदेशी निवेश, जनकल्याणकारी योजनाओं को लागू किया जा सके। विपक्षी दलों द्वारा सत्तारूढ़ दल की अनुचित कार्यशैली एवं गैरजरूरी नीतियों की आलोचना करनी चाहिए, लेकिन राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर। मनभेद और राग-द्वेष की राजनीति देश के लिए घातक सिद्ध होगी।

दीपक गौतम, सोनीपत

आपातकाल लोकतंत्र पर धब्बा

आपातकाल भारतीय लोकतंत्र पर काला धब्बा है। एक सत्ताधारी प्रधानमंत्री अपने अधिकारों को किस तरह से निरंकुशता से प्रयोग कर सकता है, यह भारतीय जनमानस को आपातकाल के माध्यम से मालूम चला। आपातकाल के दौरान सत्ताधारी पक्ष को भारतीय जनमानस और विपक्षी दलों ने एक संदेश दिया कि भारत में लोकतंत्र सिर्फ शासन व्यवस्था नहीं है, बल्कि एक जीवन जीने की कला है। आपातकाल के दौरान जिस तरह से भारतीय जनमानस ने अपने अधिकारों को लेकर सजगता दिखाई और आपातकाल के विरोध को एक आंदोलन का रूप दे दिया यह भारत के लोकतंत्र के जीवंतता का अहसास कराता है। आपातकाल के दौरान जेपी के छात्र आंदोलन को कौन भूल सकता है जिसने सत्ता पक्ष की निरंकुशता की जड़ों को हिलाकर रख दिया।

विजय किशोर तिवारी, नई दिल्ली

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

संपादकीय जागरण

10 बुधवार, 26 जून, 2024 : आषाढ़ कृष्ण 5 वि. 2081

संवाद ही विवाद समाप्त कराने में सक्षम है

देरी के दुष्परिणाम

यह अच्छा है कि जहां नेशनल टेस्टिंग एजेंसी यानी एनटीए की ओर से रद एवं स्थगित की गई परीक्षाओं को फिर से आयोजित करने की तैयारी की जा रही है, वहीं इस एजेंसी की कार्यप्रणाली में सुधार के लिए गठित उच्चस्तरीय समिति परीक्षाओं को पारदर्शी बनाने के लिए छात्रों, अभिभावकों और शिक्षाविदों से विचार-विमर्श करने जा रही है, लेकिन और भी अच्छा होता कि यह सब बहुत पहले कर लिया जाता। यदि केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय तभी चेत जाता, जब पहली बार एनटीए की किसी परीक्षा को लेकर प्रश्न खड़े हुए थे तो संभवतः आज जो स्थिति बनी, वह नहीं बनती। केंद्र सरकार और विशेष रूप से केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय को यह आभास होना चाहिए कि एनटीए की कार्यप्रणाली में खामी के चलते न केवल मेडिकल कालेजों में प्रवेश की परीक्षा यानी नीट की विश्वसनीयता को लेकर गंभीर सवाल खड़े हुए, बल्कि ऐसे ही सवालों की आशंका के चलते कुछ और परीक्षाओं को रद अथवा स्थगित करना पड़ा। इसके चलते करीब 37 लाख छात्र प्रभावित हुए हैं। यह एक बहुत बड़ी संख्या है और आश्चर्य नहीं कि इन छात्रों और उनके अभिभावकों के मन में सरकार के प्रति असंतोष हो। जैसे केंद्र सरकार केंद्रीय स्तर की प्रतियोगी परीक्षाओं की विश्वसनीयता बनाए रखने को लेकर समय रहते नहीं सजग हुई, वैसी ही गलती कई राज्य सरकारों से भी हुई। पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न राज्य सरकारों की ओर से आयोजित की गई प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र या तो लीक हो गए या उनके परिणामों को लेकर सवाल उठे। कुछ ऐसी भी प्रतियोगी परीक्षाएं रहीं, जो समय पर संपन्न तो हो गईं, लेकिन उनके परिणाम तय अवधि में घोषित नहीं किए गए। हैरानी नहीं कि इन सब कारणों से हाल के लोकसभा चुनावों में भाजपा के खिलाफ माहौल बना हो। वैसे तो पिछले कुछ वर्षों में शायद ही कोई ऐसी राज्य सरकार रही हो, जिसकी प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र लीक न हुए हों, लेकिन औरों से अलग होने का दावा करने वाली भाजपा की केंद्र एवं राज्य सरकारों से यही अपेक्षित था कि वे इन मामलों पर कहीं अधिक सजगता का परिचय देतीं। कोई नहीं जानता कि ऐसा क्यों नहीं किया गया? आखिर छात्रों के हितों की रक्षा और प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रति उनके भरोसे को बनाए रखने के लिए अब जो कदम उठाए जा रहे हैं, वे पहले क्यों नहीं उठाए जा सके? भाजपा नेतृत्व और उसकी सरकारों को यह आभास होना चाहिए कि समय पर सही कदम न उठाने के क्या दुष्परिणाम होते हैं? हो सकता है कि परीक्षाओं की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न स्तरों पर जो पहल की जा रही है, उसके सार्थक परिणाम सामने आएं, लेकिन प्रश्न यह है कि विभिन्न परीक्षाओं को रद एवं स्थगित करने अथवा उनके परिणाम घोषित करने में देरी के कारण लाखों छात्रों को जो परेशानी उठानी पड़ी, क्या उसकी भरपाई संभव है?

ब्रिज मेंटेनेंस पालिसी बने

राज्य में लगातार पुलों का गिरना चिंता की बात है। ताश के पत्तों की तरह ढहते पुलों ने गुणवत्ता पर तो सवाल उठाए ही हैं, निर्माण में हो रहे भ्रष्टाचार और इनकी जांच करने वालों पर भी सवाल खड़े किए हैं। अररिया में पुल गिरने के बाद आधा दर्जन के करीब इंजीनियर निलंबित किए गए। इनपर आरोप है कि निर्माण में बरती जा रही अनियमितता की इन्होंने अनदेखी की। यहां अनदेखी लापरवाही का नतीजा थी या ठेकेदार से मिलीभगत कर जान बूझकर आंखें मूंद ली गईं, जांच टीम की रिपोर्ट से ही यह स्पष्ट होगा। अक्सर ऐसे मामलों में ठेकेदार को काली सूची में डालकर और इंजीनियरों को निलंबित कर मामले को निपटा दिया जाता है, लेकिन अब वक्त है और कड़ा फैसला लेने का। गड़बड़ करने वाले ठेकेदारों और इंजीनियरों से निर्माण में लगी पाई-पाई की वसूली सख्ती से होनी चाहिए। यह सुनिश्चित करना चाहिए कि ऐसे ठेकेदारों को भविष्य में कभी कोई काम आवंटित न हो। शातिर ठेकेदार एक कंपनी को काली सूची में डालने के बाद किसी दूसरी कंपनी के नाम से काम करने लगते हैं। इस बात की गुंजाइश किसी सूरत में न रहे, इसे सुनिश्चित करना होगा। इसके साथ ही यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पुलों के निर्माण का जायजा लेने मुख्यालय की टीम भी मौके पर जाए। कोई पुल गिरे तो कार्रवाई की तलवार इनपर भी चलनी चाहिए। राज्य में ऐसे तीन सौ से अधिक पुल हैं, जिनपर लंबे समय से रख-रखाव पर कोई खर्च नहीं हुआ। तत्काल ध्यान देते हुए ब्रिज मेंटेनेंस पालिसी तैयार की जानी चाहिए, ताकि फिर से कोई हादसा न हो। ढहते पुलों की तस्वीरें और वीडियो जब सामने आते हैं तो इससे बिहार की छवि धूमिल होती है।

> चिंता की बात है कि बड़े पुलों के रख-रखाव को लेकर किसी की जवाबदेही तय नहीं।

तानाशाही मानसिकता की उपज था आपातकाल

अमित शाह

यदि संविधान को नष्ट करने का कुत्सित प्रयास किसी ने किया है तो वह कांग्रेस ने किया है

अवधेश राजपूत

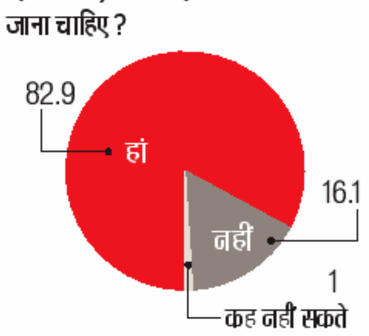

भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में 25 जून, 1975 की तारीख एक काले अध्याय के रूप में दर्ज है। इस दिन कांग्रेस सरकार द्वारा आपातकाल की घोषणा कर लोकतंत्र को बंधक बनाने का अपराध किया गया था। इस घटना को हमें इसलिए सदैव स्मरण रखना चाहिए ताकि फिर इसकी पुनरावृत्ति न हो तथा लोकतंत्र सदैव मजबूत बना रहे। 1951-52 में देश के पहले आम चुनाव हुए और शासन की बागडोर चुनी हुई सरकार के हाथों में आई। स्वतंत्रता आंदोलन की कोख से निकली कांग्रेस को स्वाभाविक तौर पर शासन व्यवस्था के नेतृत्व का पहला अवसर मिला। यह वह समय था, जब विपक्ष की स्थिति लगभग शून्य थी। विपक्ष-शून्य शासन के इस दौर में जवाहरलाल नेहरू सरकार ने संविधान और लोकतंत्र को धता बताते हुए अनेक मनमानियां कीं। 1951-52 में नेहरू सरकार द्वारा पहला संविधान संशोधन रखा गया, जिसका उद्देश्य अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करना था।

पहले आम चुनाव के बाद के दो दशकों में विपक्ष की स्थिति काफी मजबूत हो गई थी। विपक्ष-शून्य शासन चलाने वाली कांग्रेस इसे स्वीकार नहीं कर पा रही थी। विपक्ष की बढ़ती शक्ति से बौखलाई कांग्रेस को जब अपनी सत्ता खिसकती हुई महसूस हुई, तो 1975 में इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगा दिया। आपातकाल की जड़ की तरफ देखें तो इसके पीछे लोकतंत्र विरोधी सोच नजर आता है। कुशासन और भ्रष्टाचार से उपजा जनांदोलन इंदिरा गांधी के लिए परेशानी का सबब था। जिन घटनाक्रमों से हाई कोर्ट के आदेश ने इंदिरा गांधी के चुनाव को रद किया, उसे वह स्वीकार नहीं कर पाईं। आपातकाल की जड़ें तानाशाही की मानसिकता में होती हैं। इसे विडंबना ही कहेंगे कि कांग्रेस ने 28 साल लगातार शासन करने के बाद अपनी डगमगाती सत्ता बचाने के लिए संविधान की मर्यादा को तार-तार करते हुए आपातकाल लगा दिया। 25 जून, 1975 की मध्यरात्रि के बाद पूरे देश को जेल में तब्दील कर दिया गया। जनता के मौलिक अधिकार खत्म कर दिए गए। लोकतंत्र की प्रहरी संसद को भंग कर दिया गया। सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस की नियुक्ति असंवैधानिक तरीके से करके न्यायपालिका को बंदी बना लिया गया, ताकि इंदिरा गांधी की संसद सदस्यता न खत्म हो। नौकरशाही को इंदिरा के व्यक्तिगत तंत्र के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। प्रजातंत्र के चौथे स्तंभ मीडिया पर बैन लगा दिया गया। मीडिया संस्थानों की बिजली काट दी गई और पत्रकारों को गिरफ्तार कर लिया गया। कांग्रेस के गुर्गे खबरों को स्कैन करके प्रकाशित होने देते थे। आपातकाल लगते ही लोकनायक जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटल बिहारी वाजपेयी, लालकृष्ण आडवाणी और जार्ज फर्नांडिस समेत विपक्ष के सभी बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया और उन्हें यातनाएं दी गईं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ समेत अनेक सामाजिक-सांस्कृतिक संगठनों पर पाबंदी लगा दी गई। देश यह देखकर अचंभित रह गया कि कैसे इंदिरा गांधी ने निजी महत्वाकांक्षा के आगे संविधान को तिलांजलि दे दी। संविधान का आत्मा कही जाने वाली मूल प्रस्तावना में परिवर्तन का भीषण अपराध भी आपातकाल के काले दौर में कांग्रेस द्वारा किया गया।

1977 के चुनाव में जनता ने आपातकाल की यातनाओं का जवाब देते हुए कांग्रेस को हार का मुंह दिखाया। इंदिरा गांधी भी चुनाव हार गईं। इसके बावजूद कांग्रेस ने लोकतंत्र को चुनौती देना बंद नहीं किया। आज अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का राग अलापने वाली कांग्रेस को राजीव गांधी सरकार द्वारा लाया गया 'मानहानि विधेयक' नहीं भूलना चाहिए। अभिव्यक्ति की आजादी को कुचलने की मंशा से लाए गए इस बिल को उन्हें वापस लेना पड़ा था। आज जब कांग्रेस संविधान बचाने का नारा लगा रही है, तब उसे अपने इतिहास को देखना चाहिए। संविधान को नष्ट करने का कुत्सित प्रयास यदि किसी ने किया है तो वह कांग्रेस ने। एक खास परिवार को सत्ता में बनाए रखने के लिए कांग्रेस ने कई बार संविधान की भावना को कुचला है। संविधान बचाने की बात करने वाले राहुल गांधी भूल जाते हैं कि उनकी दादी ने आपातकाल लगाया और पिता राजीव गांधी ने 23 जुलाई, 1985 को इस पर गर्व करते हुए लोकसभा में कहा था, 'इसमें कुछ भी गलत नहीं।' उन्होंने यह भी कहा था, 'अगर कोई प्रधानमंत्री यह महसूस करता है कि आपातकाल आवश्यक है और वह आपातकाल लागू नहीं करता तो वह प्रधानमंत्री बनने लायक नहीं है।' स्पष्ट है कांग्रेस ने केवल आपातकाल लगाया ही नहीं, बल्कि उस पर गर्व भी किया। तानाशाही पर गर्व यही दर्शाता है कि कांग्रेस को परिवार और सत्ता के अलावा और कुछ प्रिय नहीं है। कांग्रेस को लोकतंत्र और संविधान पर बोलने का कोई नैतिक अधिकार ही नहीं है। आज जब कांग्रेस संविधान की दुहाई देती है और उसके पीछे समाजवादी लोग तख्ती लहराते हैं, तो यही स्पष्ट होता है कि उनमें संविधान के प्रति कोई निष्ठा नहीं, सिर्फ सत्ता पाने की आतुरता है। ये लोग भूल जाते हैं कि समाजवादी परंपरा के ध्वजवाहक जयप्रकाश नारायण, राजनारायण, जार्ज फर्नांडिस, चौधरी चरण सिंह, मुलायम सिंह आदि को कांग्रेस ने जेल में ठूंसा था। बेहतर होता कि समाजवादी मित्र आपातकाल की बरसी पर अपने पूर्वजों का सम्मान करते और सियासी लोभ में कांग्रेस के पिछलग्गू न बनते।

सत्ता के लोभ और अहंकार में कांग्रेस ने अनेक ऐसे कार्य किए, जो लोकतंत्र की न्यूनतम मर्यादा को खंडित करने वाले हैं। सत्ता के लोभ में अनुच्छेद-356 का इस्तेमाल करके लोकतांत्रिक तरीके से चुनी दर्जनों सरकारों को अकारण बर्खास्त करना इनमें से एक है। जिस पार्टी के मूल में ही लोकतंत्र रचा-बसा न हो, वह देश को लोकतंत्र कैसे दे सकती है? कांग्रेस की संरचना ही वंशवाद की बुनियाद पर टिकी है। यही वंशवाद कांग्रेस की तानाशाही व्यवस्था के मूल में है, जिसकी अनेक उपजों में एक आपातकाल था।

देश में सशक्त लोकतंत्र को नेतृत्व वही पार्टी दे सकती है, जिसकी आंतरिक बनावट एवं कार्यशैली लोकतंत्र की बुनियाद पर आधारित हो। इन मानकों पर भाजपा शत-प्रतिशत खरी उतरती है। लोकतंत्र का अर्थ चुनाव और राजनीतिक व्यवस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका वृहद स्वरूप है, जिसमें सर्वसमावेशी विकास, सबको सुरक्षा, समान अवसर, समान अधिकार निहित हैं। लोकतंत्र की इसी भावना को मोदी सरकार पिछले 10 वर्षों से विभिन्न नीतियों एवं योजनाओं के माध्यम से चरितार्थ कर रही है।

(लेखक केंद्रीय गृहमंत्री हैं)

response@jagran.com

शत्रुता के भाव से भरी संसद

राजीव सचान

> क्या इससे बड़ी विडंबना और कोई हो सकती है कि सत्तापक्ष-विपक्ष के बीच बैर भाव बढ़ता जाए?

लोकसभा चुनाव के नतीजे वाले दिन ही यह स्पष्ट हो गया था कि इस बार सत्तापक्ष-विपक्ष के बीच तनातनी पहले से अधिक दिखेगी। इसका कारण भाजपा का बहुमत से दूर रह जाना और कांग्रेस की सीटें लगभग दोगुनी हो जाना एवं उसके सहयोगी दलों का संख्याबल बढ़ जाना मात्र नहीं। इसका एक अन्य कारण भाजपा और कांग्रेस के बीच का बैर भाव है, जो 2014 के लोकसभा चुनावों के बाद से लगातार बढ़ता रहा है। क्या इस समय यह अपने चरम पर पहुंच गया है? ऐसा कुछ कहना इसलिए कठिन है, क्योंकि अभी तो नई लोकसभा की शुरुआत ही हो रही है। 2014 के बाद जैसे कांग्रेस ने नरेन्द्र मोदी को प्रधानमंत्री के रूप में स्वीकार करने से इन्कार किया, वैसे ही भाजपा ने कांग्रेस को प्रमुख विपक्षी दल की तरह देखने से इन्कार ही नहीं किया, बल्कि कांग्रेस मुक्त भारत का नारा भी दिया। 2019 में जब नरेन्द्र मोदी दोबारा चुनकर सत्ता में आ गए तो कांग्रेस ने जहां ऐसा प्रकट किया कि जनता ने फिर से गलती कर दी है, वहीं भाजपा ने यह जताना शुरू कर दिया कि मोदी की लोकप्रियता के चलते कांग्रेस खत्म ही होने वाली है। इस कारण भाजपा और कांग्रेस के बीच पक्ष और विपक्ष वाले संबंध कभी पनप ही नहीं सके और अब तो इसके आसार और भी कम लग रहे हैं। यद्यपि कांग्रेस को लोकसभा चुनाव में केवल 99 सीटें मिली हैं, लेकिन वह ऐसे व्यवहार कर रही है, जैसे उसने बहुमत हासिल कर भाजपा को सत्ता से बाहर कर दिया है और फिर किसी कारण सत्ता से बाहर रहना पसंद किया है।

कांग्रेस के हिसाब से लोकसभा चुनाव में भाजपा की नैतिक और राजनीतिक हार हुई है, लेकिन उसके पास इस सवाल का जवाब नहीं कि यदि ऐसा कुछ है तो फिर नरेन्द्र मोदी ने तीसरी बार प्रधानमंत्री पद की शपथ कैसे ले ली? कांग्रेस और विशेष रूप से राहुल गांधी प्रधानमंत्री मोदी के प्रति किस तरह विद्वेष से भरे हुए हैं, इसके प्रमाण उनकी ऐसी भाषा से पहले भी मिलते रहे हैं.. मोदी डरपोक है।.. आंख से आंख मिलाकर बात नहीं कर सकता।... अभी हाल में राहुल गांधी इससे खासे संतुष्ट दिखे कि वाराणसी यात्रा के दौरान प्रधानमंत्री के काफिले पर किसी ने चप्पल फेंक दी। इसे उन्होंने प्रधानमंत्री के घटते राजनीतिक कद के रूप में ही नहीं, बल्कि इस रूप में भी बयान किया कि लोगों में उनका डर कम होता जा रहा है। वह इस घटना को अपनी राजनीतिक जीत के रूप में मनाते दिखे। जब उनके इस बयान की आलोचना हुई तो उन्होंने कुछ घंटे बाद एक्स पर पोस्ट किया कि प्रेस कांफ्रेंस में यह महत्वपूर्ण बात कहनी रह गई थी कि मोदी और उनके काफिले पर चप्पल फेंका जाना बहुत ही निंदनीय और उनकी सुरक्षा में गंभीर चूक है।

नई लोकसभा का पहला दिन ● एएनआइ

16वीं और 17 वीं लोकसभा की तरह 18वीं लोकसभा में सत्तापक्ष-विपक्ष के बीच एक दूसरे को नीचा दिखाने का काम और तेजी से होगा, यह उस दिन भी स्पष्ट हुआ, जब मोदी प्रधानमंत्री पद की शपथ ले रहे थे। विपक्ष ने इस समारोह का बहिष्कार करना पसंद किया। मल्लिकार्जुन खरगे अवश्य इस समारोह में गए, लेकिन राज्यसभा में नेता विपक्ष के रूप में। मोदी के तीसरी बार प्रधानमंत्री बनने पर चीन और पाकिस्तान तक ने तो बधाई दे दी, लेकिन कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों ने इसकी जरूरत नहीं समझी। पक्ष-विपक्ष के बीच का शत्रुभाव तब भी प्रकट हुआ, जब सत्तापक्ष ने नव निर्वाचित सांसदों को शपथ दिलाने के लिए लोकसभा के प्रोटेम स्पीकर के रूप में वरिष्ठ सांसद भर्तृहरि महताब की नियुक्ति की। कांग्रेस ने इस नियुक्ति पर यह कहकर विरोध जताया कि इस पद के लिए सबसे वरिष्ठ सांसद के. सुरेश की अनदेखी की गई। इस विरोध को निराधार नहीं कहा जा सकता, क्योंकि परंपरा यही है कि सबसे वरिष्ठ सांसद को प्रोटेम स्पीकर के तौर पर चुना जाता है। भाजपा आसानी से ऐसा कर सकती थी, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। हैरानी नहीं कि इसका कारण प्रोटेम स्पीकर के तौर पर विपक्षी सांसद पर भरोसा न करना रहा हो। प्रोटेम स्पीकर कोई महत्वपूर्ण पद नहीं। यह महज दो-तीन दिन उपयोगी साबित होने वाला एक अस्थायी पद है। इसके बाद भी कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों ने प्रोटेम स्पीकर के तौर पर भर्तृहरि महताब की नियुक्ति के विरोध में अन्य विपक्षी सांसदों को उनके पैनल में शामिल होने से मना कर दिया।

नव निर्वाचित सांसदों के शपथ ग्रहण के दौरान संसद में जो अमैत्रीपूर्ण माहौल दिखा, उसमें और अधिक वृद्धि ही होने के आसार हैं। इसका एक अन्य प्रमाण लोकसभा स्पीकर के चुनाव की नौबत आना है। यह नौबत इसीलिए आई, क्योंकि सत्तापक्ष डिप्टी स्पीकर का पद विपक्ष को देने को तैयार नहीं। सत्तापक्ष डिप्टी स्पीकर का पद विपक्ष को देकर उससे संबंध सुधार की पहल कर सकता था, लेकिन यदि वह ऐसा करता तो बहुत संभव है कि कांग्रेस यह प्रचारित करने लगती कि विपक्ष के संख्याबल से मोदी डर गए।

मोदी सरकार इस बार गठबंधन सरकार का नेतृत्व कर रही है। इसके पहले भी गठबंधन सरकारें बन चुकी हैं और उन्होंने महत्वपूर्ण फैसले भी किए हैं-वह चाहे नरसिंह राव सरकार रही हो अथवा वाजपेयी सरकार। ये दोनों सरकारें कई बड़े फैसले ले सकीं तो इसीलिए, क्योंकि तब पक्ष-विपक्ष के बीच आज जैसा बैर भाव नहीं था। तब पक्ष-विपक्ष को दलगत राजनीति से ऊपर उठना आता था। आज इसकी कल्पना करना कठिन है कि दोनों पक्ष दलगत हितों से ऊपर उठ सकेंगे, क्योंकि दोनों में एक-दूसरे के प्रति भरोसा नहीं और इससे भी खराब बात यह है कि दोनों के बीच शत्रुता का भाव बढ़ता जा रहा है। यह भारतीय लोकतंत्र के लिए हितकारी नहीं हो सकता।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

बुद्धि और विवेक

जीवन से जुड़े विभिन्न उपक्रमों का अर्थ जानना-समझना बहुत आवश्यक होता है। जैसे कि प्रवृत्ति और निवृत्ति। ये हमारे जीवन की महत्वपूर्ण कड़ियां हैं। प्रवृत्ति का अर्थ है आगे बढ़ना और कुछ सृजन करना। जबकि निवृत्ति का तात्पर्य इसका उलट है। निवृत्ति से आशय समय पर लक्ष्य प्राप्ति के पश्चात वापस अपने मूल स्थान पर लौट आना है। इसी संदर्भ में कर्तव्य का अर्थ है जो कार्य हमें अवश्य करना ही चाहिए तथा अकर्तव्य का अर्थ है जिस दिशा में हमें कदापि नहीं जाना चाहिए। भय का वास्तविक तात्पर्य है कि जब हमें यह ज्ञात हो जाए कि किसके प्रति हमारा भय होना चाहिए और कहां भयभीत नहीं होना चाहिए। वस्तुतः, अभय का असंयम ही भय को जन्म देता है।

मुक्ति एवं बंधन का भी यही समीकरण है। यह जानना आवश्यक है कि हम किस बंधन से मुक्त हों और कौन से बंधनों को शिरोधार्य करें। धर्म, कर्तव्य, सेवा, लोक कल्याण, असहायों की सेवा, गऊ सेवा और नित्य जप आदि के बंधन ही मुक्ति के कारक होते हैं। यदि हम इस मार्ग से स्वयं को विमुख कर लेंगे तो यह स्थिति हितकारी नहीं होगी।

हमारी बुद्धि एवं विवेक हमें नाना प्रकार की दुविधाओं से बचाकर हमारा मार्गदर्शन करते हैं। इनसे हमें उचित-अनुचित का भेद होता है। ऐसा भेद कराने वाली बुद्धि ही सात्विक बुद्धि कही जाती है। जो बुद्धि कर्तव्य और अकर्तव्य के यथार्थ को भी नहीं जानती तो वह राजसी ही कही जाएगी। उसके माध्यम से आनंद की उपलब्धि संभव नहीं। इसी प्रकार, जो लोग हिंसा और प्रमाद को ही सर्वस्व जानकर उसे धर्म का पर्याय मानते हों तो उनकी बुद्धि निश्चित रूप से तामसी होती है। बुद्धि के ये सभी विभाग मूल रूप से काल, कर्म, स्वभाव और गुण के अधीन होते हैं। सत्संग के प्रभाव से इनके भेद जानकर व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप में अवस्थित हो सकता है। उसके उपरांत ही परम आनंद की प्राप्ति संभव है और ऐसी उपलब्धि विवेक की शक्ति से ही अर्जित होती है।

स्वामी मैथिलीशरण

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

सामने आए आपातकाल का सच

'लोकतंत्र को कलंकित करने वाला अध्याय' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में ए. सूर्यप्रकाश ने उस वास्तविकता से परिचित कराया है, जिससे देश की करीब-करीब दो पीढ़ियां अनभिज्ञ रही हैं। भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में आपातकाल जैसी कलंकित घटना को घटित हुए करीब-करीब आधी सदी बीत चुकी है, किंतु उस दौर से जुड़े तमाम दस्तावेज और अहम जानकारियां अभी भी सार्वजनिक दायरे में नहीं हैं। संभव है कि इसके पीछे लंबे समय तक रहा कांग्रेसी शासनकाल भी एक वजह हो, क्योंकि ऐसी बातें सामने आने से पार्टी को असहज होना पड़ता, क्योंकि आपातकाल के मूल में इंदिरा गांधी की ही निर्णायक भूमिका थी। लेखक का यह तर्क भी उचित है कि एक समय देश के संविधान और लोकतांत्रिक मूल्यों को ताक पर रखने वाले एकाएक कैसे खुद को उसके रक्षक होने का दावा कर सकते हैं और उनका यह दावा कितना विश्वसनीय हो सकता है। मौजूदा सरकार की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह आपातकाल के उन अत्याचारों को सामने रखने का काम करे, जिन पर अभी तक पर्दा पड़ा हुआ है। यह इसलिए भी आवश्यक है, ताकि उन भूलों को न दोहराया जाए, जिन्होंने अतीत में हमारी दुर्गति की हो।

रवि वार्ष्णेय, बुलंदशहर

दूर हो जलस्रोतों के मार्ग के अवरोध

शहरीकरण की अंधी दौड़ में अधिकतर प्राकृतिक जलाशय अस्तित्व खो चुके हैं, अब शेष बचे हुए जलाशयों को जलवायु परिवर्तन का दंश झेलना पड़ रहा है। केंद्रीय जल आयोग की रिपोर्ट के अनुसार देश के डेढ़ सौ प्रमुख जलाशयों का जलस्तर घटकर मात्र इक्कीस प्रतिशत रह गई है। बेंगलुरु को तालाबों का शहर कहा जाता था, लेकिन वहां के अधिकांश तालाब अतिक्रमण का शिकार हो चुके हैं, उनका स्थान गगनचुंबी भवनों ने ले लिया है। आज बेंगलुरु जल संकट से जूझ रहा है। वर्षापात में कमी व पहाड़ों पर कम बर्फबारी के कारण जलाशयों में पानी नहीं भर रहा है। जलाशयों में बरसात का पानी ऊंचे स्थानों से आता है, लेकिन आज ऊंचे स्थानों पर भव्य भवन बनाए जा रहे है, जिससे जलस्रोत बाधित हो रहे हैं। गर्मी का मौसम लंबा खिंचता जा रहा है, बरसात का मौसम छोटा होता जा रहा है। जल संकट की समस्या को दूर करने के लिए हमें जलस्रोतों के मार्ग के अवरोधों को दूर करना होगा, समय पर गाद की सफाई करनी होगी।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गया

उलटफेर कर रहे अफगानी

आस्ट्रेलिया जैसी शक्तिशाली टीम के लिए यह बेहद दयनीय स्थिति थी कि सुपर एट में अफगानिस्तान से हारने के बाद उसका आगे का भविष्य बांग्लादेश और अफगानिस्तान के बीच खेले गए सुपर एट के आखिरी मैच के परिणाम पर था। अफगानिस्तान ने आक्रामक गेंदबाजी कर बांग्लादेश को हराया और आस्ट्रेलिया को टी-20 विश्व कप से बाहर का रास्ता दिखा दिया। इस टूर्नामेंट में श्रीलंका, पाकिस्तान, न्यूजीलैंड और वेस्टइंडीज की टीम भी बाहर हो गई। अफगानिस्तान सेमीफाइल में पहुंच गया है। वह आगे भी उलटफेर कर दे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी।

मुकेश वर्मा, न्यू पाटलिपुत्र कालोनी, पटना

स्वागत योग्य निर्णय

संविधान निर्माताओं ने आरक्षण का प्रविधान मात्र 10 वर्षों के लिए इसलिए किया था कि इस अवधि में समाज के शोषित/वंचित वर्ग की कमजोरियों को दूर करके उन्हें अन्य वर्गों से प्रतिस्पर्धा करने योग्य बना दिया जाएगा। उनका यह मानना इस आधार पर रहा होगा कि जो परिवार आरक्षण का लाभ ले लेंगे, वे स्वतः ही आगे आरक्षण का लाभ नहीं लेना चाहेंगे, परंतु ऐसा नहीं हुआ। पीढ़ी दर पीढ़ी वह परिवार आरक्षण का लाभ उठा रहा है। आइएएस का बेटा अभी तक एससी, एसटी और पिछड़ा है। इस बीच एक उम्मीद की किरण प्रस्फुटित हुई है। महाराष्ट्र के ओबीसी समाज के 15 चिकित्सकों ने स्वयं ही आगे आकर आरक्षण का लाभ लेने से मना किया है। इतना ही नहीं इन्होंने अपने ओबीसी संबंधी दस्तावेज मुख्यमंत्री को लौटाने का निर्णय भी लिया है। कहा, भविष्य में उन्हें या उनके परिवार को आरक्षण का लाभ नहीं चाहिए, क्योंकि अब वह सक्षम हो गए हैं। उन्होंने यह भी घोषणा की है कि 26 जून को साहू जी महाराज की जयंती की तिथि से पूरे राज्य में प्रमाण पत्र लौटाने का आंदोलन प्रारंभ किया जाएगा। संगठन के सभी सदस्यों ने शपथ पत्र देकर ओबीसी प्रमाण पत्र लौटाकर आरक्षण छोड़ने का मन बना लिया है। क्या ओबीसी समाज की तरह एससी/एसटी समाज के सक्षम लोग भी आरक्षण का लाभ छोड़ने की हिम्मत दिखा सकते हैं? यदि इसी तरह दीप से दीप प्रज्वलित हो तो गरीबी के अंधकार से मुक्ति पाई जा सकती है।

धर्मेन्द्र नाथ रस्तोगी, दुर्गादेवी मंदिर मार्ग, चौक, पटना

पोस्ट

मोदी सरकार को आपातकाल के काले दौर से जुड़े सभी गोपनीय दस्तावेज सार्वजनिक कर देने चाहिए। इतने वर्ष बीत जाने के बाद देश को उस दौर का सच जानना ही चाहिए।
अमिताभ अग्निहोत्री @Aamitabh2

अगर कांग्रेस लोकसभा स्पीकर के लिए चुनाव ही चाहती है तो इसका भी एक सकारात्मक पहलू होगा। उसे पहले दिन से पता रहेगा कि राजग के पास कितना बहुमत है और आइएनडीआइए के पास कितना समर्थन।
अखिलेश मिश्रा @amishra77

भारत फलस्तीन को अलग देश की मान्यता दे चुका है। ऐसे में भारतीय संविधान के पालन की सांसद वाली शपथ लेते हुए असदुद्दीन ओवैसी द्वारा 'जय फलस्तीन' कहना न सिर्फ संविधान का उल्लंघन है, बल्कि ऐसा कृत्य है जो आज तक नहीं हुआ। यह शब्द संसदीय कार्यवाही से हटाया जाए।
दिलीप मंडल @Profdilipmandal

रोहित शर्मा की सबसे खास बात बेधड़क और दमदार शाट लगाना ही नहीं, बल्कि उससे ज्यादा सराहना उनके उस रवैये की होनी चाहिए, जिसमें वह निजी रिकार्ड को कोई महत्व नहीं देते और आगे बढ़कर नेतृत्व करते हैं।
संजय मांजरेकर @sanjaymanjrekar

जनपथ

बदला खुद अस्सी दफा संविधान का रूप,
अब चलनी भी बोलती जैसे बोले सूप।
जैसे बोले सूप हाथ में लेकर प्रतियां,
बना रहे हैं लोग आजकल झूठी बतियां।
वे संसद में आय रहे गुण अपने बतला,
बदल गए कुछ लोग सदन फिर भी ना बदला!

– ओमप्रकाश तिवारी

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या पेट्रोलियम उत्पादों को जीएसटी के दायरे में लाया जाना चाहिए?

आज का सवाल

क्या लोकसभा अध्यक्ष पद के लिए विपक्ष के उम्मीदवार उतारने से सत्तापक्ष-विपक्ष में टकराव बढ़ेगा?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प. बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073

E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 25 अंक 75

****

टकराव से शुरुआत

लोकसभा अध्यक्ष पद को लेकर सरकार व विपक्ष के बीच टकराव की स्थिति अठारहवीं लोकसभा की सुखद शुरुआत नहीं कही जा सकती। सत्तारूढ़ राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) की ओर से पूर्व लोकसभा अध्यक्ष ओम बिरला और इंडियन नेशनल डेवलपमेंटल इनक्लूसिव अलायन्स (इंडिया) की तरफ से के सुरेश के नामांकन दाखिल करने के साथ ही सर्वसम्मति से लोकसभा अध्यक्ष चुने जाने की एक स्वस्थ परंपरा के आगे सवाल खड़ा हो गया है। 'इंडिया' ब्लॉक को शायद यह उम्मीद थी, बल्कि शिव सेना जैसा उसका घटक दल तो खुलकर बोल भी रहा था कि यदि टीडीपी के किसी सांसद का नाम सत्तारूढ़ खेमे की ओर से इस पद के लिए प्रस्तावित किया जाता है, तो वे उसका समर्थन कर सकते हैं, पर जिस तरह पिछली सरकार के अहम चेहरों को नई सरकार में उनकी पुरानी भूमिका सौंपी गई, उसे देखते हुए यह लगने लगा था कि ओम बिरला का नाम ही फिर लोकसभाध्यक्ष पद के लिए आगे किया जाएगा। ऐसा ही हुआ। बिरला राजस्थान से तीसरी बार भाजपा के टिकट पर लोकसभा पहुंचे हैं, तो उनके सामने खड़े के सुरेश आठवीं बार कांग्रेस सदस्य के रूप में केरल से चुनकर आए हैं।

इसमें कोई दोराय नहीं कि अठारहवीं लोकसभा के अंकगणित ने विपक्ष को भरपूर हौसला दिया है। पिछले दो सदनों में तो आधिकारिक रूप से कोई नेता प्रतिपक्ष ही नहीं था। यहां तक कि पिछली लोकसभा बिना उपाध्यक्ष पद के खत्म हो गई। लगभग हर सत्र में विपक्ष इस पद पर नियुक्ति की मांग करता रहा, पर उसकी मांगें अनसुनी कर दी गईं। मगर इस बार विपक्ष के तेवर से साफ लगता है कि वह सत्ता पक्ष के आगे चुनौती पेश करता रहेगा। मगर इस दांव-पेच में अच्छी लोकतांत्रिक परंपराओं की अवहेलना नहीं होनी चाहिए। सत्ता पक्ष और विपक्ष को यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत का संसदीय लोकतंत्र तभी सुर्खरू होगा, जब पिछले साढ़े सात दशकों में हमने जो स्वस्थ परंपराएं विकसित की हैं, उनको और मजबूती दी जाए, बल्कि हमारी संसद अपने कृत्यों से व्यापक भारतीय समाज को सामंजस्य व समावेशिता का पाठ पढ़ाए।

भारत का संसदीय लोकतंत्र तभी सुर्खरू होगा, जब पिछले साढ़े सात दशकों में हमने जो स्वस्थ परंपराएं विकसित की हैं, उनको और मजबूती दी जाए।

निस्संदेह, लोकसभाध्यक्ष या विधानसभाध्यक्ष का पद काफी अहम होता है और इस मौकापरस्त दौर में कोई भी सत्तारूढ़ पार्टी, खासकर जिसके पास अपने तईं सदन में बहुमत न हो, कभी नहीं चाहेगी कि किसी अन्य दल का सदस्य इस पद पर आरूढ़ हो जाए। हाल के वर्षों में विभिन्न विधानसभाध्यक्षों की भूमिका जिस कदर संदिग्ध दिखी और बार-बार उनके फैसले जिस तरह शीर्ष अदालत में पहुंचे, ऐसे में स्वाभाविक है कि भाजपा कोई भी जोखिम नहीं मोल लेना चाहती। मगर किसी भी सत्तारूढ़ दल की ऐसी मजबूरी अपने आप में हमारी वर्तमान राजनीति पर एक कटु टिप्पणी है, क्योंकि हमारे पास कई अच्छी मिसालें हैं। हम याद कर सकते हैं कि चौथी लोकसभा के अध्यक्ष पद पर निर्वाचित होते ही नीलम संजीव रेड्डी ने किस तरह कांग्रेस पार्टी से इस्तीफा दे दिया था या मनमोहन सिंह सरकार के पहले कार्यकाल में लोकसभा अध्यक्ष सोमनाथ चटर्जी ने अपनी पार्टी के सियासी रुख के विपरीत अपना सांविधानिक दायित्व निभाया था। पहले भी जीएमसी बालयोगी, मनोहर जोशी जैसे लोकसभाध्यक्ष सबसे बड़ी पार्टी के नुमाइंदे नहीं थे। इस आम चुनाव ने भारतीय राजनीति के कई समीकरणों को बदला है। इसलिए चुनौती अब दोनों पक्षों के आगे है कि वे जनता की नजरों में अपने-अपने कदमों का औचित्य किस तरह साबित करेंगे।

लोकतंत्र पर हमारी आस्था अब भी अटल

संजय कुमार | प्रोफेसर, सीएसडीएस

ईवीएम की विश्वसनीयता, बढ़ते दलबदल, चुनावों में विचारधारा का घटता महत्व जैसी तमाम चिंताओं के बावजूद चुनाव से भारतीयों के मोहभंग के संकेत नहीं मिलते।

इस बार के आम चुनाव में 66.2 फीसदी लोगों ने अपने मताधिकार का इस्तेमाल किया। यह आंकड़ा तस्दीक करता है कि भारतीय मतदाता देश की लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में न सिर्फ निरंतर रुचि ले रहे हैं, बल्कि उनका इनमें गहरा जुड़ाव है और वे इनमें अपनी भागीदारी भी अनवरत सुनिश्चित कर रहे हैं। इसने चुनाव से भारतीय मतदाताओं के मोहभंग के बारे में शुरुआती दौर में आनन-फानन में लगाए गए अनुमानों को खारिज कर दिया है। वास्तव में, इस साल पिछले आम चुनाव (वर्ष 2019) से महज एक प्रतिशत कम मतदान हुआ, लेकिन यह मतदाताओं की भागीदारी के लिहाज से अब तक का तीसरा सबसे बड़ा चुनाव भी साबित हुआ है। मतदान प्रतिशत मतदाताओं की चुनाव में भागीदारी का सबसे मजबूत संकेतक होता है और साल 2024 का चुनाव विशेषकर महिला मतदाताओं की बढ़ती भागीदारी का संकेत दे रहा है। बेशक, एक लंबी चुनाव अवधि और मतदान-कार्यक्रम को लेकर कुछ मुद्दे जरूर उभर आए थे, पर मतदाताओं ने गर्मी का मजबूती से सामना किया, अपने जरूरी कामों को किनारे रखा और चुनाव में उल्लास के साथ भाग लिया।

मतदाताओं का यह उत्साह चुनाव खत्म होने के बाद भी बना रहा। इसका स्पष्ट संकेत था 1 जून की शाम एग्जिट पोल को लेकर चली चर्चा। हालांकि, असल नतीजा एग्जिट पोल के बिल्कुल उलट आया, नतीजतन, जनादेश और एग्जिट पोल की विफलता पर भी खूब बहस छिड़ी। इसे भी चुनाव और चुनाव प्रक्रिया में भारतीयों की गहन भागीदारी का ही संकेत माना जाना चाहिए। ईवीएम की विश्वसनीयता, बढ़ते दलबदल, चुनाव में विचारधारा की घटती भूमिका, निर्वाचित प्रतिनिधियों की गुणवत्ता जैसी तमाम चिंताओं के बावजूद चुनाव व चुनाव-प्रक्रिया से भारतीयों के होते मोहभंग का कोई संकेत हमें नहीं दिखता, मामूली भी नहीं। लोकनीति-सीएसडीएस का सर्वेक्षण बताता है कि 17 फीसदी भारतीय ईवीएम को भरोसमंद नहीं मानते, जबकि अन्य 43 फीसदी का इस पर विश्वास बना हुआ है। करीब 30 फीसदी भारतीयों ने ईवीएम पर डिगते विश्वास का उल्लेख किया।

यह सही है कि इस चुनाव में भाजपा सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी और उसने सहयोगी दलों के साथ सरकार बनाई है, पर भारतीयों में विचारों में विविधता भी खूब दिखी है, जिसका ख्याल सरकार को रखना चाहिए। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अन्य तमाम नेताओं की तुलना में खासा लोकप्रिय हैं और राहुल गांधी की 27 फीसदी की तुलना में उनकी लोकप्रियता का प्रतिशत 41 है, फिर भी लोकनीति-सीएसडीएस सर्वेक्षण में 28 प्रतिशत भारतीयों ने बताया कि प्रधानमंत्री का तेज अब मंद पड़ने लगा है और अन्य 33 फीसदी मानते हैं कि दूसरे दलों के दागी नेताओं को शामिल करने से भाजपा की छवि को नुकसान पहुंचा है।

यह सर्वेक्षण पिछले कुछ वर्षों में बढ़ी प्रतिशोध की राजनीति पर आम लोगों में बढ़ती चिंता को भी जाहिर करता है। सर्वेक्षण में 44 फीसदी लोगों ने माना कि सियासी वजहों से विरोधी दल के नेताओं को गिरफ्तार किया गया है, जबकि 23 फीसदी की राय इससे अलग थी। सर्वेक्षण में 67 फीसदी भारतीयों ने यह भी कहा कि नागरिकों को चुने हुए अपने नेताओं से सवाल पूछने का अधिकार होना चाहिए, जबकि 20 प्रतिशत इससे सहमत नहीं दिखे। यहां यह ध्यान रखना भी महत्वपूर्ण है कि 58 फीसदी भारतीय मुल्क के विकास के लिए सरकार को बदलना जरूरी मानते हैं, जबकि 32 फीसदी लोग सत्तारूढ़ पार्टी की सरकार को ही तरक्की के लिए बेहतर मानते हैं। यहां अदालतों के महत्व पर भी गौर करना चाहिए, क्योंकि इस सर्वेक्षण में 58 फीसदी लोगों ने माना कि सरकार की शक्तियों की जांच के लिए अदालतें अहम हैं, जबकि 27 फीसदी लोग इसे जरूरी नहीं मानते। सर्वेक्षण में 66 फीसदी भारतीयों ने माना कि सरकार के फैसलों का विरोध करने की जरूरी ताकत उनके पास होनी चाहिए, जबकि 19 फीसदी लोग इस सोच के खिलाफ थे।

वर्ष 2024 का जनादेश यह भी संकेत कर रहा है कि राष्ट्रीय गौरव, राष्ट्रीय पहचान, राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े मुद्दे निस्संदेह काफी अहम हैं, लेकिन बेरोजगारी, महंगाई जैसे लोगों के रोजमर्रा से जुड़े मुद्दे भी समान रूप से अहमियत रखते हैं, जिनको राजनीतिक दल बहुत लंबे समय तक नजरंदाज नहीं कर सकते। सर्वेक्षण बताता है कि मोदी सरकार से मोहभंग के दो बड़े मुद्दे रहे, बेरोजगारी व महंगाई और ज्यादातर नाराज लोग नहीं चाहते थे कि यह सरकार फिर से चुनी जाए। फिर भी, भाजपा सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी, लेकिन उसे उत्तर प्रदेश में बड़ा झटका लगा, जहां राम मंदिर का उद्घाटन काफी धूमधाम से किया गया था। यह संकेत है कि हिंदुत्व के मुद्दे पर बहुत अधिक निर्भरता और रोजी-रोटी के मसलों की अनदेखी पार्टी पर भारी पड़ी। 2024 का जनादेश संकेत है कि पहचान की राजनीति की एक सीमा होती है, चाहे वह जाति से जुड़ी हो अथवा धर्म से।

किसी जीवंत लोकतंत्र में स्थिर सरकार के साथ-साथ एक मजबूत विपक्ष का होना भी जरूरी है। 2024 का जनादेश एक आदर्श लोकतंत्र का असल स्वाद दे रहा है। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) के पास लोकसभा में 293 सीटें हैं और वह बहुमत में है। वहीं, विपक्षी 'इंडिया' ब्लॉक के पास 195 का आंकड़ा है, जिसमें तृणमूल कांग्रेस और वामपंथी दल शामिल नहीं हैं। सत्तारूढ़ गठबंधन में भाजपा 240 सीटों के साथ सबसे ऊपर है, जबकि विपक्ष में कांग्रेस के पास सर्वाधिक 99 सीटें हैं।

जाहिर है, निचले सदन में ये आंकड़े शासन से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर लोगों के विचारों को प्रतिबिंबित करते हैं। सैद्धांतिक रूप में देखें, तो लोकतंत्र के लिहाज से यह एक अच्छी सरकार हो सकती है, हालांकि सिद्धांत और व्यवहार में अंतर से भी हम बखूबी वाकिफ हैं। लोकसभा अध्यक्ष और उपाध्यक्ष पद के निर्वाचन पर सत्तारूढ़ गठबंधन और विपक्ष के बीच चल रही खींचतान में इसकी झलक देखी जा सकती है। हालांकि, ऐसे कई अन्य मुद्दे भी हैं, जो सत्तारूढ़ दल और विरोधी पार्टियों के बीच विवाद के कारण बन सकते हैं। फिर भी, कामना यही की जा सकती है कि भारत के लोगों द्वारा व्यक्त किए गए जनादेश को गंभीरता से लिया जाएगा और सत्तारूढ़ दल व विपक्ष, दोनों अगले पांच वर्षों तक मिलकर काम करेंगे और मुद्दों को उलझाने के बजाय सुलझाने का प्रयास करेंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

महज दस घंटे से बढ़ते-बढ़ते पच्चीस घंटे की ओर दिन

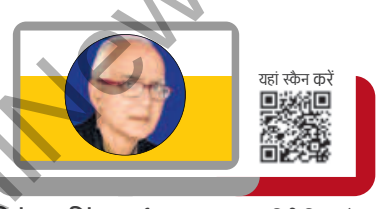

निरंकार सिंह | पूर्व सहायक संपादक, हिंदी विश्वकोश

हमारी पृथ्वी का एक दिन 24 घंटे का होता है, पर क्या हमेशा दिन की समय-सीमा यही थी और आगे भी यही रहेगी? अब ऐसा नहीं कहा जा सकता है। भूवैज्ञानिकों का दावा है कि आने वाले समय में दिन की अवधि 24 घंटे से ज्यादा हो सकती है, क्योंकि यह पिछले हजारों साल से बढ़ रही है। जब चंद्रमा का निर्माण हुआ था, तब हमारी पृथ्वी का दिन 10 घंटे का था और आज यह 24 घंटे का है। अनुमान है कि यह समय के साथ बढ़ता रहेगा। दिन का समय हमेशा बदलता रहा है। अब यह धीरे-धीरे लंबा होता जाएगा। ऐसा समय भी भविष्य में आ सकता है कि जब दिन का समय 25 घंटे का हो जाएगा।

भूवैज्ञानिकों ने दावा किया है कि एक दिन में 25 घंटे हो सकते हैं। ऐसा होने की उम्मीद ज्यादा है। यह दावा टेक्निकल यूनिवर्सिटी ऑफ म्यूनिख ने किया है। दिलचस्प बात है कि हमेशा से ऐसा नहीं था, कभी एक दिन में 24 घंटे से कम हुआ करते थे, अब वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि एक दिन में 25 घंटे हो सकते हैं। ऐसा होने की उम्मीद ज्यादा है। इसकी वजह धरती के घूमने से जुड़ी है। पृथ्वी के घूमने से होने वाला उतार-चढ़ाव खगोल विज्ञान के लिए बेहद महत्वपूर्ण होता है। इससे कई दिलचस्प जानकारियां मिलती हैं। अब एक दिन में घंटे बढ़ने की बात इसी में हुए बदलाव से सामने आई है। टेक्निकल यूनिवर्सिटी ऑफ म्यूनिख खगोल विज्ञान के क्षेत्र में रिसर्च कर रही है। यह संस्थान पृथ्वी के बारे में डाटा हासिल करने के लिए एक खास तरह के उपकरण का इस्तेमाल कर रहा है। इसे रिंग लेजर कहते हैं। इसका काम पृथ्वी के घूमने के पैटर्न और गति को मापना है। यह इतने सटीक तरह से काम करता है कि पृथ्वी की गति में होने वाले छोटे-बड़े बदलाव को भी आसानी से पकड़ लेता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि ठोस और द्रव जैसी चीजें पृथ्वी के रोटेशन या घूमने के गति पर असर डालती हैं। ये बदलाव वैज्ञानिकों को नई जानकारियां देने के साथ मौसम में जुड़े बदलाव, जैसे अल नीनो असर को समझने में मदद करते हैं।

रिपोर्ट कहती है कि लेजर रिंग एक ऐसा गायरोस्कोप है, जो धरती के 20 फिट नीचे एक खास तरह के दबाव वाले हिस्से में है। यहां से निकलने वाला लेजर धरती के घूर्णन, यानी घूमने की गति में होने वाले बदलाव को तुरंत पकड़ लेता है। यहीं से घंटों के बढ़ने की संभावना पर वैज्ञानिकों ने अपनी मुहर लगाई है।

आज भले ही 24 घंटे का एक दिन होता है, मगर डायनासोर के दौर में 23 घंटे ही होते थे और चांद धरती के थोड़ा पास हुआ करता था।

खगोल वैज्ञानिक दावा करते हैं कि आज भले ही 24 घंटे का एक दिन है, लेकिन डायनासोर के दौर में एक दिन में 23 घंटे होते थे। *एबीसी* की रिपोर्ट में दावा किया गया था कि उस युग में चांद धरती के थोड़ा पास हुआ करता था। इस रिपोर्ट के अनुसार, यह बदलाव ऐसा नहीं है कि सब कुछ एक ही दिन में हो जाएगा। यह धीरे-धीरे होगा।

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि करीब 20 करोड़ साल बाद एक दिन 25 घंटे का हो जाएगा। कभी पृथ्वी पर ऐसा भी दौर था, जब दिन की लंबाई केवल 19 घंटे थी। धरती के बनने के समय पृथ्वी अपनी धुरी पर 10 घंटे से भी कम समय में घूमती थी, यानी एक दिन महज 10 घंटा का था। अब हर 24 घंटे में एक बार पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्कर पूरा करती है, जो एक दिन को दिखाता है। पृथ्वी का घूमना वास्तव में इस ग्रह की उत्पत्ति की कहानी का प्रमाण है। कोई ग्रह कितनी तेजी से घूमता है, यह इस बात से निर्धारित होता है कि इसका निर्माण कैसे हुआ। जब प्रोटो प्लेनेटरी डिस्क में सूर्य की परिक्रमा करने वाली धूल, चट्टानें और गैस अंतरिक्ष में एक साथ आते हैं, तब ग्रह-निर्माण होता है।

हमारी पृथ्वी के दिन की लंबाई हमें सुसंगत और एक समान लग सकती है, पर ऐसा नहीं है। बहुत धीरे-धीरे इसमें बदलाव आ रहा है। एक शताब्दी में दिन का समय 1.7 मिली सेकंड बढ़ रहा है। वास्तव में, एक साथ अनेक खगोलीय घटनाएं चल रही हैं। एक तथ्य यह भी है कि चंद्रमा धीरे-धीरे पृथ्वी से दूर होता जा रहा है। कहा जाता है कि परिवर्तन सृष्टि का नियम है और हमें हर हाल में तालमेल बिठाकर चलने के लिए तैयार रहना चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

दुख का मूल अहंकार

तुम मेरे पास आते हो और पूछते हो कि दुख कैसे मिटे? तुम बिना अहंकार को छोड़े ही दुखों को छोड़ना चाहते हो। मगर यह संभव नहीं है और यदि मैं कहता हूं, 'अपना अहंकार छोड़ो', तो मैं तुम्हारी आंखों में हमेशा देखता हूं कि जैसे तुम यह सोच रहे हो कि मैं विषय बदल रहा हूं। तुम सोचते हो कि तुम तो यह पूछने आए हो, दुखों से किस तरह छुटकारा पाया जाए और मैं किसी अन्य चीज के बारे में बात कर रहा हूं। मैं कह रहा हूं, 'अहंकार को छोड़ो।' वास्तव में, यह लगता ऐसा ही है, जैसे मानो यह कोई अन्य चीज है।

मुल्ला नसरुद्दीन चांदनी रात में एक सुंदर स्त्री के साथ बैठा हुआ था और महान चीजों के बारे में बात कर रहा था। बात करते हुए वह बहुत अधिक रोमांटिक होता जा रहा था। लेकिन स्त्री बहुत अधिक यथार्थ की जमीन से जुड़ी हुई और व्यावहारिक थी। जब मुल्ला वास्तव में प्रेम की ऊंची पेंगें भरने लगा, तो उस स्त्री ने उससे पूछा- 'मुल्ला! तुम्हारा प्यार करना तो ठीक है, पर क्या तुम मुझसे विवाह करोगे?' मुल्ला ने जवाब दिया, 'सुनो! विषय को बदलो मत!'

मैंने कई बार तुम्हारी आंखों में यही चीज देखी है। तुम एक समस्या लेकर आते हो और मैं किसी अन्य चीज के बारे में बात करना शुरू कर देता हूं। यह कुछ दूसरी चीज केवल परिधि पर दिखाई देती है, मैंने देखा कि असली कारण ही वही है। तुम दुखों को तो छोड़ना चाहते हो, लेकिन अहंकार को नहीं छोड़ना चाहते और दुख छोड़े नहीं जा सकते। दुख तो अहंकार की छाया हैं। केवल अहंकार ही गिराया जा सकता है।

याद रखो, अहंकार के गिरते ही दुख स्वतः मिट जाते हैं। उसकी कीमत चुकाना बहुत अधिक लगता है। तुम कहते हो, 'मैं इस पर विचार करूंगा।' तुम्हारी दुखों को छोड़ने में वास्तव में कोई रुचि है ही नहीं। यदि वास्तव में तुम्हारी दिलचस्पी है, तो केवल इस तथ्य को समझ लेने भर से तुम तुरंत अहंकार को छोड़ दोगे।

सिग्मंड फ्रायड ने कहा है, मनुष्य का स्वभाव ही दुखी रहने का है। मैं इस पर विश्वास नहीं करता, लेकिन लगभग निन्यानबे प्रतिशत लोगों के बारे में वह ठीक कहता है। मैं इससे इनकार नहीं कर सकता। फ्रायड अनुभव करता है कि इस बारे में मनुष्य के लिए कोई भी आशा नहीं है, बुनियादी रूप से मनुष्य दुखी है। उसके दुखों का रूपांतरण नहीं किया जा सकता। वह प्रसन्न और सुखी नहीं बनाया जा सकता। मनुष्य असंभव की मांग करता है। वह अहंकारी भी बने रहना चाहता है और साथ ही साथ प्रसन्न भी। यह ऐसा ही है कि खिली धूप भी चाहिए और चांदनी रात की शीतलता भी।

ओशो

तुम दुखों को तो छोड़ना चाहते हो, पर अहंकार को नहीं छोड़ना चाहते। दुख तो अहंकार की छाया हैं। केवल अहंकार ही गिराया जा सकता है। अहंकार के गिरते ही दुख स्वतः मिट जाते हैं।

दलाई लामा | बौद्ध धर्मगुरु

हम इंसान इस धरती को तबाह कर सकते हैं और इसकी रक्षा भी कर सकते हैं। हमें अपने आपको समझाने की जरूरत है कि अपनी जीवनशैली किस तरह बदलनी है। हमें अलग तरीके से प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने की जरूरत है।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले 26 जून, 1949

हिन्देशिया का भविष्य

गत दिसम्बर में डच साम्राज्यवादियों ने जिस बेशर्मी तथा निरंकुशता के साथ युद्ध-विराम समझौते को भंग कर जोगजाकार्टा पर अधिकार तथा हिन्देशियाई जनतंत्र के नेताओं को गिरफ्तार किया था, उसकी निन्दा समस्त विश्व में हुई थी। डचों के इस पाशविक आक्रमण से संसार के समस्त प्रजातन्त्र-प्रेमी क्षेत्रों में चिंता तथा रोष की लहर व्याप्त हो गई। भारत, जिसने सदैव लोकतंत्र के पक्ष में आवाज बुलन्द की है और जो अपनी स्वाभाविक स्थिति के कारण एशिया की स्वतंत्रता तथा उन्नति के लिए एशियाई देशों का सबसे बड़ा मित्र तथा किसी हद तक पथ-प्रदर्शक बना हुआ है, ने दिल्ली में एक सम्मेलन बुलाया। उसमें भाग लेने वाले एशियाई देशों ने एक स्वर से जिस प्रकार हिन्देशिया की स्वतंत्रता तथा जनतंत्रीय सरकार की पुनर्स्थापना पर जोर दिया, उसकी प्रतिक्रिया यूरोप में ही नहीं अमरीका में भी हुई। संयुक्त राष्ट्र संघ के रुख को भी कड़ा तथा अपने प्रतिकूल देखकर डचों को समझौते की दिशा में कोई न कोई संकेत करना पड़ा। लेकिन शोषक तथा सत्तालोलुप साम्राज्यवादियों के शस्त्रागार में विभिन्न प्रकार के शस्त्रों की कमी नहीं। एक ओर डच अधिकारी समझौता और सद्भावना की दुहाई देते रहे और दूसरी ओर उनका दमन-चक्र अनवरत गति से घूमता रहा। जनतंत्रीय सरकार की पुनर्स्थापना तो दूर की बात, उन्होंने हिन्देशिया के नेताओं तक को मुक्त नहीं किया। इस संबंध में संयुक्त राष्ट्र संघ के आदेशों तक की उन्होंने नितान्त अवहेलना की।

लेकिन दमन जनता की स्वातंत्र्य भावना को नहीं कुचल सकता।... जब सारे राष्ट्र में विद्रोह की आग भड़क उठे, तब सेना और वह भी विदेशी आक्रान्ता सेना, क्या कर सकती है? हिन्देशियाई छापामारों में आधुनिक शस्त्रास्त्रों से सज्जित तथा सैनिक विज्ञान में दीक्षित डच सेना को नाकों चने चबवा दिये। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त कमीशन ने ११ अप्रैल को अपनी रिपोर्ट में कहा था कि डच सैनिक हिन्देशियाई छापामारों की कार्रवाइयों से हैरान व परेशान हैं। इस उग्र स्थिति को देखकर तथा चीन के दानवाकार साम्यवाद को भयावह रूप से दक्षिण-पूर्वी एशिया में पग बढ़ाते देखकर डचों की अक्ल कुछ ठिकाने आई और डच प्रतिनिधिमंडल के प्रधान डा. रोपन तथा हिन्देशिया की जनतंत्रीय सरकार के प्रधान प्रतिनिधि डा. मुहम्मद रोम के बीच बातचीत प्रारंभ हुई।

लोकतंत्र पर धब्बा की तरह आपातकाल

आपातकाल के 49 साल पूरे जरूर हो गए हैं, किंतु उसकी दर्द भरी कहानियां आज भी जेहन में बरकरार हैं। शायद वह पहला अवसर था, जब नागरिकों को अपने लोकतांत्रिक अधिकारों को छोड़कर, अपना मुंह बंद करके, अखबारों को अपने विचारों पर ताला लगाकर और लोकतंत्र की आवाज को जेल में दबाकर करीब 21 महीने (25 जून, 1975 से लेकर 21 मार्च, 1977 तक) कठिनाइयों में गुजारने पड़े। मीसाबंदियों की हालत तो और खराब हुई। इन सबसे लोग काफी सकते में रहे। उन दिनों कतिपय सत्तासीन बेशक लाभ में रहे होंगे, किंतु पूरा देश आपातकाल की गिरफ्त में अपना मुंह बंद किए हुए था। स्पष्ट है, आपातकाल के वे काले दिन लोकतंत्र पर धब्बे की तरह हैं। ईश्वर करे, भारतवासियों को फिर कभी वैसे दुर्दिन न देखने को मिलें। हमारा देश सही मायने में स्वतंत्र रहे और यहां लोकतांत्रिक संस्थाएं अनवरत मजबूत होती रहें। इसकी वजह यह भी है कि हम दुनिया में तानाशाही/कट्टरपंथी देशों के कुचक्रीय शासन को देख रहे हैं, जहां इंसान स्वच्छंद वातावरण में नहीं जी पा रहा है और न ही अपने विचारों को खुलकर रख पा रहा है। हमारा लोकतंत्र सदा स्वच्छंद विचारों वाला और लोगों की बातों को सत्ता तक पहुंचाने वाला तो बना ही रहे, साथ ही सत्ता भी जनता के विचारों का सदा आदर करती रहे, जैसा कि यह करती आ रही है। यही एक बेहतर लोकतंत्र की पहचान है। इस पहचान को स्थायी बनाए रखने के लिए सत्ता और विपक्ष, दोनों को एक-दूसरे के विचारों का आदर करना चाहिए और लोकतंत्रीय व्यवस्था को मजबूत बनाए रखने में अपना पूरा सहयोग देते रहना चाहिए, ताकि जनता को एक बेहतर शासन मिल सके।

शकुंतला महेश नेनावा, टिप्पणीकार

वे काले दिन

49 वर्ष पहले कांग्रेस ने अपनी तानाशाही मानसिकता का परिचय देते हुए सत्ता के स्वार्थ के लिए देश पर आपातकाल थोप दिया था। ऐसा करके उसने विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र और संविधान की हत्या कर दी। एक परिवार के विरोध में उठने वाले हर स्वर को दबाने के लिए उसने विरोधी नेताओं, भारतीय मीडिया संस्थानों और नागरिकों के सभी मौलिक अधिकारों को छीनकर देश की लोकतांत्रिक जड़ों पर कुठाराघात किया। कांग्रेस के लोकतंत्र-विरोधी इस चरित्र और आपातकाल जैसे काले अध्याय को देश कभी नहीं भूल सकेगा। इसके खिलाफ खड़े होकर लोकतांत्रिक मूल्यों को पुनर्स्थापित करने के लिए संघर्ष करने वाले सभी महान आत्माओं के त्याग को नमन!

संजय सिंह, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

आपातकाल

इंदिरा की कमियां भी याद और महानताएं भी

25 जून, 1975 वह दिन था, जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देश में आपातकाल लागू कर अपने उन तमाम राजनीतिक विरोधियों को भारतीय जेलों में डाल दिया था, जो उनकी सत्ता का विरोध कर रहे थे। इनमें जयप्रकाश जी तो थे ही, दूसरे-तीसरे पायदान के तमाम विरोधी राजनेता भी थे। उन दिनों आबादी को नियंत्रित करने के मकसद से जबरन नसबंदी का काम सबसे खतरनाक था, जिसमें नृशंस नौकरशाही ने आंखें मूंदकर काम किया। परिणाम यह कि जब डेढ़-दो साल बाद चुनाव हुए, तो इंदिरा गांधी सत्ता से बेदखल कर दी गईं। तब उन्हें एहसास हुआ कि जनमत और जन-बल क्या हुआ करता है? उसमें न्याय, अन्याय, विवेक किस कोटि का रहता है? इसीलिए, जब जनता सरकार असफल हुई और चुनाव फिर आए, तो समर्थन मांगने निकलीं इंदिरा जी ने चुनावी मंचों से जनता से अपनी गलतियों के लिए माफी मांगी और भारत के लोगों ने उन्हें भारी बहुमत देकर फिर से सत्ता सौंप दी। यह तब की बात है, जब कवि दुष्यंत कुमार की गजलें आबोहवा में थीं और लोगों को याद दिलाती चल रही थीं कि *कैसे आकाश में सूराख नहीं हो सकता, एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारो।*

सोमवार को संसद सत्र की शुरुआत के समय लगातार तीसरी बार प्रधानमंत्री बने नरेंद्र मोदी ने हमें इसी इमरजेंसी की याद फिर दिलाई। दिलाई क्या, हमारी यादों को कुरेदने की पहल और कोशिश की। उन्हें शायद एहसास न हो कि हम भारत के लोग अपनी गरीबी, भुखमरी और पिछड़ापन भले भूल जाएं, पर अपने साथ किए गए किसी भी न्याय या अन्याय को कभी नहीं भूलते। इसीलिए, हमें इंदिरा गांधी की चूकें भी याद हैं और उनकी महानताएं भी। हम आज भी महसूस करते हैं कि वह देश के लिए कुर्बान हो गईं, अन्यथा अपने उन अंगरक्षकों को हटा सकती थीं, जिनकी गोलियों से वेधी गईं। हम अपने आज के सत्ताधारियों को कैसे बताएं कि हमें उन सालों की भी याद है, जिनमें बगैर किसी घोषित आपातकाल के ऐसे-ऐसे कारनामे दिखाए गए कि देश के आम आदमी का जीवन ही संकटग्रस्त हो उठा। इन वर्षों में साहस के साथ सच बोलने और करने वाले तमाम ऐसे निरपराधों को जेलों में डाल दिया गया, जिन्हें अंततः भारतीय न्यायालयों ने मुक्ति दिलाई। तालाबंदी, जनता द्वारा चुनी गई सरकारों को किसी न किसी तरह से गिराना, स्वतंत्र पत्रकारिता पर हमले करवाना आदि न जाने कितने ऐसे काम रहे, जिनको यह देश कभी भी शायद ही भूलना चाहे। आपातकाल तो थोड़े दिनों का था, लेकिन अघोषित आपातकाल तो निरंतर चलता रहा है।

विजय बहादुर सिंह, साहित्यकार

https://t.me/AllNewsPaperPdf

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का 75
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

एक अच्छा इन्सान कैसा हो, इस पर बहस में समय बर्बाद करने के बजाय वैसा बनने की कोशिश होनी चाहिए। -मार्कस ऑरेलिअस

देश में गेहूं की किल्लत न होने के बावजूद अगर सरकार ने उसके भंडारण पर कड़ी सीमा लगाई है, तो यह दर्शाता है कि जमाखोरी रोकने व गेहूं के दाम नियंत्रित करने को लेकर सरकार किस तरह से एहतियात बरत रही है। लेकिन फसलों की बर्बादी रोकने के लिए सरकारी भंडारण क्षमता का बढ़ना भी उतना ही जरूरी है।

ताकि रोटी महंगी न हो

सरकार ने, लगातार यह दोहराने के बावजूद कि देश में गेहूं की कोई किल्लत नहीं है, चना, काबुली चना और अरहर पर भंडारण-सीमा लगाने के करीब हफ्ते भर बाद अब अगर गेहूं के भंडारण पर भी सीमा लगाई है, तो यह एहतियाती कदम जमाखोरी रोकने और गेहूं के दाम नियंत्रित करने के लिहाज से बेहद महत्वपूर्ण है। उल्लेखनीय है कि पिछले वर्ष के 82 लाख टन की तुलना में इस वर्ष गेहूं का शुरुआती स्टॉक करीब सात लाख टन कम यानी 75 लाख टन रहा। लेकिन यह भी है कि अब तक 266 लाख टन गेहूं की खरीद हो चुकी है, जो पिछले वर्ष की तुलना में चार लाख टन ज्यादा है। जाहिर है कि देश में गेहूं की कमी नहीं है। लेकिन प्रतियोगी परीक्षाओं में गड़बड़ियों के मामलों से पहले ही जूझ रही सरकार अब आम आदमी की रोटी से जुड़े मसले में कोई कोताही बरतना नहीं चाहती। केंद्र सरकार की अधिसूचना के अनुसार, अब थोक व्यापारी तीन हजार टन और प्रत्येक खुदरा कारोबारी करीब दस टन गेहूं, तो वहीं आटा मिलें वर्तमान वित्तीय वर्ष के बाकी महीनों में अपनी स्थापित मासिक क्षमता के सत्तर फीसदी तक भंडारण कर सकती हैं। इतना ही नहीं, तय सीमा से ज्यादा भंडार रखने वालों को तीस दिन के भीतर निर्धारित दायरे में लाना होगा, तो सभी संस्थाओं को अपने स्टॉक की स्थिति नियमित अंतराल पर सरकारी वेबसाइट पर अपडेट भी करनी होगी। ध्यान देने वाली बात है कि पिछले ही हफ्ते अरहर की भंडारण सीमा तय करने का असर इसके दामों में कुछ गिरावट के रूप में दिखने भी लगा है। लेकिन हर साल किसानों की फसलों को बर्बाद होने से रोकने के लिए सरकारी भंडारण क्षमता का बढ़ना भी उतना ही जरूरी है। दरअसल चीन, अमेरिका, रूस आदि दुनिया के जितने बड़े उत्पादक देश हैं, वहां भंडारण क्षमता कुल उत्पादन क्षमता से कहीं ज्यादा है, जबकि भारत में फिलहाल कुल कृषि उपज के महज 47 फीसदी के भंडारण की सुविधा है। ऐसे में, करीब पांच महीने पहले प्रधानमंत्री मोदी द्वारा सहकारी क्षेत्र में विश्व की जो सबसे बड़ी अनाज भंडारण योजना लागू की गई, जिसके तहत अगले पांच वर्षों में देश की भंडारण क्षमता 700 टन बढ़ाई जाएगी, जो किसानों के लिए बेहद फायदेमंद हो सकती है। केंद्रीय बैंक की मौद्रिक नीति समिति के सदस्य बेशक अब महंगाई के बजाय वृद्धि पर ध्यान देने की वकालत कर रहे हों, लेकिन सरकार का यह कहना कि वह कीमतों पर अंकुश लगाने के लिए कोई भी विकल्प अपनाने को तैयार है, आम आदमी की महंगाई से पहले से ढीली जेब को आश्वस्त करने वाला है।

अस्तित्व के जंगल में सभी अकेले हैं

पिछले हफ्ते एक वीडियो वायरल हुआ, जिसमें एक युवती को उसके कथित पूर्व प्रेमी ने मार डाला व लोग वीडियो बनाते रहे। लोगों की यह निष्क्रियता दर्शाती है कि घर से निकलने के बाद आप बिल्कुल अकेले होते हैं। 'कोई दूसरा हस्तक्षेप करेगा' की व्यक्तिगत सोच सामूहिक निष्क्रियता की ओर ले जाती है।

इस हफ्ते की शुरुआत में मेरी एक अंशकालिक सहयोगी ने एक युवक की कहानी सुनाई, जिसकी मात्र दस रुपये के लिए कई लोगों की मौजूदगी में बेरहमी से हत्या कर दी गई। हुआ यों कि वह युवक गोलगप्पे का ठेला लगाता था, वहीं उससे कुछ कदम की दूरी पर एक सब्जी बेचने वाला था, जिसने इससे दस रुपये का एक प्लेट गोलगप्पा उधार लिया था। बाद में उसने पैसे देने से इन्कार कर दिया, तो दोनों के बीच इस बात पर कहा-सुनी हो गई और बात इतनी बढ़ गई कि उस व्यक्ति ने एक बोतल उठाकर गोलगप्पे वाले का गला काट दिया।

यह अपराध जितना चौंकाने वाला है, उससे भी ज्यादा चौंकाने वाली बात है कि यह घटना एक व्यस्त और चहल-पहल भरे बाजार में लोगों की नजरों के सामने हुई। मेरी घरेलू सहायिका ने बताया कि लोग सिर्फ देख रहे थे और घटना का वीडियो बना रहे थे। कोई भी न तो उसे बचाने आया और न ही बीच-बचाव करने आया। इसका नतीजा यह हुआ कि दो मासूम बच्चों के बीस वर्षीय पिता ने खून से लथपथ जमीन पर गिरकर दम तोड़ दिया। दुर्भाग्य से यह सार्वजनिक उदासीनता का अकेला मामला नहीं है, बल्कि देश भर के कई शहरों और कस्बों में ऐसा होता है।

अद्वैता काला
पत्रकार, फिल्म कथा लेखक एवं चर्चित उपन्यासकार

पिछले हफ्ते न्यूज चैनलों पर एक वीडियो वायरल हुआ था, जिसमें सुबह-सुबह एक युवती को एक ऐसे व्यक्ति ने मार डाला, जिसे उसका पूर्व प्रेमी बताया जा रहा था। यह मामला प्रेम प्रसंग में आई कड़वाहट का लग रहा था। पीठ पर बैग लटकाए हुए उस लड़के ने युवती पर लगातार हमला किया, जबकि वहां खड़े अन्य लोग, खासकर उससे काफी बड़े लोग यह सब देख रहे थे। यह कोई ऐसा मामला नहीं था, जिसमें कोई खतरनाक अपराधी बंदूक या किसी घातक हथियार से लोगों को डरा रहा हो, बल्कि यह एक छोटे कद का लड़का था, जो युवती पर हमला कर रहा था।

ऐसी हिंसा के सामने लोगों की यह निष्क्रियता क्या बताती है? पिछले वर्ष एक अन्य लड़के को पत्थर से एक लड़की के सिर को कुचलते हुए

देखा गया था, जबकि आसपास खड़े कई लोग मूकदर्शक बने हुए थे। शहर भर में लगे सीसीटीवी कैमरे इन भयावह घटनाओं को कैद करने का बहुत अच्छा काम कर रहे हैं, लेकिन वे यह भी दिखाते हैं कि लोगों की नैतिकता कितनी गिर चुकी है। इन सभी मामलों में और अन्य मामलों में भी तथ्य यह है कि असहाय और असुरक्षित पीड़ित को क्रूरता का सामना करना पड़ता है और लोग हस्तक्षेप नहीं करते हैं। यह हमें न केवल हैरान करता है, बल्कि यह भी बताता है कि एक बार घर से निकलने के बाद आप बिल्कुल अकेले होते हैं।

दूसरी तरफ ऐसे भी उदाहरण हैं, जब भले लोगों ने मामले में हस्तक्षेप किया और उन्हें उसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी। कुछ साल पहले मुंबई में रुबेन और कीनन नामक दो लड़कों को तब अपनी जान गंवानी पड़ी, जब वे अपने समूह की दो लड़कियों को छेड़खानी करने वालों से बचा रहे थे। उस समय भी काफी सारे लोग अपराधियों को उन्हें पीटते और चाकू घोंपते देख रहे थे, लेकिन किसी ने बीच-बचाव नहीं किया। कीनन तो वहीं मर गया, लेकिन रुबेन 11 दिनों तक अस्पताल में जिंदगी की जंग लड़ता रहा। एक बार फिर यह घटना राष्ट्रीय समाचार बनी।

ऐसी घटनाओं पर बाद में आक्रोश जताना और नैतिक रूप से निंदा करना एक नियमित अभ्यास हो गया है, लेकिन वास्तव में कुछ नहीं बदलता है। कीनन और रुबेन की घटना 2011 में हुई थी और अब 2024 में भी हम इन स्थितियों से जूझ रहे हैं। ऐसा लगता है कि ये घटनाएं बहुत दूर नहीं, बल्कि हमारे पड़ोस में हो रही हैं, जैसा कि मेरी घरेलू सहायिका ने बताया। बहुत संभव है कि हममें से कोई भी ऐसी किसी घटना में फंस जाए और बहुत कम मदद मिले।

समाज के लोगों के बीच एक अघोषित अनुबंध होता है कि हम एक-दूसरे का ख्याल रखेंगे और खतरों का सामना करते हुए एक-दूसरे के प्रति दयालुता दिखाएंगे। यह एक मानवीय अनुबंध है, जो उन मानवीय मूल्यों और अनुभवों पर आधारित होते हैं, जिन्हें एक समाज के रूप में हम साझा करते हैं। हालांकि अक्सर इस अनुबंध का उल्लंघन होता है। यह बेहद आम है और निर्मम तरीके से होता है, जैसे ट्रैफिक में एंबुलेंस को रास्ता देने या जानलेवा खतरे में पड़े किसी व्यक्ति की मदद करने से इन्कार करना।

इस तरह की निष्क्रियता का क्या मतलब है? यह एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है, जिसे 'बाईस्टैंडर प्रभाव' कहा जाता है, जो कुछ हद तक इसके बारे में खुलासा करता है। वर्ष 1964 में किट्टी जेनोविस नामक एक महिला बारटेंडर की न्यूयॉर्क में बलात्कार करने के बाद हत्या कर दी गई। मीडिया में छपे एक लेख में दावा किया गया कि 38 लोगों ने कुछ अप्रिय घटना सुनी या देखी, लेकिन किसी ने भी पुलिस को नहीं बुलाया। इससे व्यापक स्तर पर लोगों में दहशत फैली और एक अध्ययन शुरू हुआ, जिसे 'बाईस्टैंडर प्रभाव' के नाम से जाना जाता है। पाया गया कि जब किसी सार्वजनिक स्थल पर कोई अपराध होता है, तो वहां मौजूद लोगों में जिम्मेदारी की भावना बिखर जाती है। हर कोई मानता है कि कोई दूसरा आगे बढ़कर हस्तक्षेप करेगा, हर व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत भागीदारी से जुड़े जोखिम का हिसाब लगा रहा होता है। यह व्यक्तिगत सोच सामूहिक निष्क्रियता की ओर ले जाती है।

इसके अलावा, पुलिस और व्यवस्था की जटिल प्रक्रिया के कारण लोग तुरंत मुंह फेर लेते हैं, उन्हें यह भय रहता है कि अगले कुछ वर्षों तक वे नौकरशाही के चक्कर में फंस जाएंगे। इन सामाजिक और कानूनी पचड़ों के कारण लोग उदासीन होकर मूकदर्शक बन जाते हैं। फिर स्वार्थ का भी एक अनिवार्य कारण होता है, जो आत्मरक्षा का सुझाव देता है। हमारे हाईटेक, इंटरनेट द्वारा संचालित समाजों में दूसरे लोगों से अलग-थलग रहने की प्रवृत्ति तेजी से सामान्य होती जा रही है। इंटरनेट और एआई की सहायता से सोचने वाली मशीनों पर हमारी बढ़ती निर्भरता ने समुदाय के प्रति हमारी भावना में कमी लाई है। यह अन्य मनुष्यों तक हमारी पहुंच को सीमित करता है।

समाज के अन्य लोगों के साथ घटते संवाद के कारण धीरे-धीरे मानवीय सहानुभूति भी दम तोड़ देती है। अस्तित्व के जंगल में हम सभी सबसे ऊंची दहाड़ वाले शेर बनना चाहते हैं और अपने अकेले रास्ते पर चलना चाहते हैं, लेकिन इस बात की संभावना ज्यादा है कि हिरणों का झुंड ज्यादा खुश रहता हो, जो संकेतों से एक-दूसरे को सचेत करता है और सह-यात्री के रूप में जीवन बिताता है। edit@amarujala.com

जीवन धारा

विलियम एटकिंसन

जो व्यक्ति दृढ़ निश्चय की सकारात्मक मानसिक धारणा बनाए रखता है, उसे किसी दूसरे के मस्तिष्क से आने वाली निराशा और असफलता जैसे नकारात्मक विचारों से बहुत ज्यादा फर्क नहीं पड़ता है।

जैसे विचार रखेंगे वैसे ही लोग मिलेंगे

यदि कोई इन्सान प्रेम से भरा हो, तो उसे अपने आसपास सिर्फ प्रेम ही नजर आता है। घृणा से भरे हुए व्यक्ति को घृणा ही मिलती है। यदि कोई व्यक्ति झगड़े के बारे में सोचता है, तो उसका झगड़ा होकर ही रहता है। अतएव व्यक्ति वही पाता है, जिसकी वह कामना करता है। यदि कोई व्यक्ति सुबह उठकर चिड़चिड़ा होता है, तो नाश्ते से पहले पूरे परिवार को वह उसी भाव से भर देगा। किसी तुनकमिजाज महिला को दिन भर तुनकमिजाजी ही मिलेगी। विचारों का आकर्षण एक गंभीर मुद्दा है। जब आप इस पर सोचना बंद कर देंगे, तो आपको यह एहसास होगा कि इन्सान जिस परिवेश के लिए दूसरों को दोष देता है, वास्तव में उसके लिए वह खुद जिम्मेदार है। जिस प्रकार पानी में पत्थर फेंकने पर उसमें लहरें उठती हैं, उसी प्रकार विचार भी लहरें उत्पन्न करता है, जो मस्तिष्क के महासागर में फैल जाती हैं। हालांकि दोनों में एक अंतर है-पानी की लहरें एक सतह पर हर दिशा में प्रेषित होती हैं और विचार की लहरें एक केंद्र से हर दिशा में प्रेषित होती हैं, जैसे कि सूर्य की किरणें हर दिशा में फैल जाती हैं। जिस प्रकार हम धरती पर वायु के एक विशाल समुद्र से घिरे हुए हैं, उसी प्रकार हम मन के विशाल समुद्र से भी घिरे हुए हैं।

इन विचार-तरंगों की कुछ और खूबियां भी हैं, जो इसे जल-तरंगों से अलग करती हैं। इनके अंदर प्रजनन क्षमता होती है। जैसे वायलिन का एक सुर कांच में कंपन पैदा कर सकता है। एक गीत हमारे मस्तिष्क में उसे ग्रहण करने वाले कंपन को जाग्रत कर देता है। कई अनायास विचार, जो हमारे दिमाग में आते हैं, असल में वे किसी और के उत्तरात्मक दृढ़ विचार या प्रतिबिंब होते हैं; परंतु जब तक हमारा मस्तिष्क उसको स्वीकार करने के लिए अनुकूल नहीं होगा, तब तक उनका कोई प्रभाव नहीं होगा। जब हम कोई बड़ा विचार सोच रहे होते हैं, तो हमारा मस्तिष्क उस विचार के स्वरूप का एक विशेष राग तैयार करता है और जब एक बार यह राग स्थापित हो गया, तो हम उसी तरह की दूसरी विचार-तरंगों को ग्रहण करने में सक्षम हो जाएंगे। दूसरी तरफ, जब हम इसके विपरीत कोई छोटी सोच रखेंगे, तो हमें उसी प्रकार के लोगों के तुच्छ विचारों की गूंज सुनाई देगी। जो व्यक्ति आत्मविश्वास के साथ साहस और दृढ़ निश्चय की सकारात्मक मानसिक धारणा बनाए रखता है, उसे किसी दूसरे के मस्तिष्क से आने वाली निराशा और असफलता जैसे नकारात्मक विचारों से बहुत ज्यादा फर्क नहीं पड़ता है, भले ही वे नकारात्मक विचार उस दूसरे व्यक्ति में कितने भी प्रबल हों। उसी तरह से जब ये नकारात्मक विचार किसी निराशावादी व्यक्ति तक पहुंचते हैं, तो वे उसकी निराशा को और भी बढ़ा देते हैं। ये उस आग में घी डालने का काम करते हैं, जो उस व्यक्ति की क्षमता को कमजोर कर रही है या यदि आपको यह पसंद आए, तो उसके अंदर की ऊर्जा को खत्म करते हैं।

विचारों का प्रभाव

सूत्र

जिस व्यक्ति के मस्तिष्क में हर समय असफलता का भाव रहता है, वह वैसे ही असफल व्यक्तियों के संपर्क में आएगा। जिस व्यक्ति को हर जगह बुराई नजर आती है, तो वह हर जगह बुराई ढूंढने के लिए तत्पर रहेगा और ऐसे व्यक्तियों के संपर्क में आएगा, जो उसकी इस धारणा को और मजबूत करेंगे; और जो व्यक्ति हर जगह अच्छाई देखेगा, वह अपने जैसे विचार वाले व्यक्तियों को अपनी ओर आकर्षित करेगा। हम वही देखते हैं, जो हम देखना चाहते हैं।

दूसरा पहलू

काम के बल पर मैंने अपने लिए जगह बनाई व पदोन्नति हासिल की। चाहे लक्ष्य कितने भी अवास्तविक क्यों न हों, मैंने उन्हें पूरा किया।

जिंदगी में 'शानदार कर्मचारी' होना काफी नहीं

मेरे मैनेजर की ओर से सुबह 4:56 बजे से ही मैसेज का सिलसिला शुरू हो गया था। मैसेज आया-'आप जैसे ही आएं, मुझसे मिलें।' मैं समझ गई कि कुछ गड़बड़ हुई है। वह सोमवार की सुबह थी। मैंने नई नौकरी जॉइन की थी और मैसेज पढ़कर कार में बैठी रह गई। मेरा शरीर जम गया और नजरें फोन की स्क्रीन पर टिक गईं। मैं 45 साल की हूं, और दशकों तक लगातार पेशेवर सीढ़ी चढ़ने के बाद मुझे एक हाई-प्रोफाइल नौकरी मिल गई। मुझे देश भर में व्याख्यान के लिए बुलाया जाता है। बाहरी दुनिया के लिए मेरी सफलता बेमिसाल थी, पर मैं अंदर से उलझी हुई थी। पांच साल पहले मैं और मेरे पति लॉस एंजिलिस चले गए। मैंने वहां कोई दोस्त नहीं बनाया। काम की वजह से बच्चे के नए प्री-स्कूल में पैरेंट मीटिंग में भी शामिल नहीं हो पाई। दोस्त बनाने के बजाय सारी ऊर्जा अपने कॅरिअर में लगा दी। हालांकि मैंने वेन ओट्स का गढ़ा *'वर्कहोलिज्म'* शब्द सुना था, लेकिन उसे अब तक खुद से नहीं जोड़ा था। नई नौकरी में आने के कुछ महीनों बाद कई स्वास्थ्य समस्याओं में घिर गई। डॉक्टर ने कहा, यह काम के तनाव के कारण हुआ।

जेनिफर रोमोलिनी

मैंने 'वर्कहोलिज्म' शब्द सुना था, लेकिन उसे अब तक खुद से नहीं जोड़ा था। नई नौकरी में आने के कुछ महीनों बाद मैं कई स्वास्थ्य समस्याओं में घिर गई।

मैं दो प्यार करने वाले इतालवी-अमेरिकी किशोरों की अनियोजित संतान के रूप में बड़ी हुई थी। मुझे अक्सर 'लाइन से बाहर' होने पर थप्पड़ मारे जाते थे, और अधिक मेहनती होने के लिए डांटा जाता था। हालांकि उन्होंने वही किया, जो उन्हें मेरे लिए सबसे अच्छा लगा : उन्होंने मुझे कठोर बनने, भावनाओं में न डूबने के लिए प्रेरित किया। अपनी योग्यता साबित करने के लिए मैंने 13 साल की उम्र में काम करना शुरू कर दिया था और तब से लगातार काम कर रही हूं। मैंने खुद को साबित करने और कड़ी मेहनत करके अपनी आजीविका कमाने में सुरक्षा पाई। काम के बल पर मैंने अपने लिए जगह बनाई और पदोन्नति हासिल की। चाहे लक्ष्य कितने भी अवास्तविक क्यों न हों, मैंने उन्हें पूरा किया।

सुबह जब मेरे मैनेजर ने बड़े-बड़े अक्षरों में संदेश भेजकर मेरी आलोचना की, तो मैं थक चुकी थी। मैंने मैनेजर के संदेश का कोई जवाब नहीं दिया। उस दिन के बाद से हमारी कोई मुलाकात नहीं हुई और बस संकट खत्म हो गया।

उस सुबह जब मेरे मैनेजर ने संदेश भेजकर मेरी आलोचना की, तो मैं थक चुकी थी। मैंने उन्हें कोई जवाब नहीं दिया। फिर हमारी कोई मुलाकात नहीं हुई और बस संकट खत्म हो गया। मैं खुद को साबित करने की तुलना में खुद को समझने में अधिक रुचि रखने लगी। घंटों काम करना बंद करके मैंने कुछ दिन की छुट्टी भी ली। नतीजतन मुझे कुछ महीनों के भीतर नौकरी से निकाल दिया गया। पर अब मैंने अपने कॅरिअर के साथ रिश्ते को सही आकार देना सीख लिया है। काम से अलग संतुष्ट जीवन जीना सबसे बड़ी सफलता है।

©The New York Times 2024

आंकड़े

लोकसभा अध्यक्ष

अब तक 17 लोग लोकसभा के अध्यक्ष रहे हैं। अगर ओम बिरला लगातार दूसरी बार अध्यक्ष बनते हैं, तो वह ऐसे पहले भाजपाई होंगे।

बलराम जाखड़	9 वर्ष 329 दिन
जी एस ढिल्लों	6 वर्ष 110 दिन
एमए अयंगर	6 साल 22 दिन
ओम बिरला	5 साल 6 दिन
सुमित्रा महाजन	5 साल 4 दिन

नीलम संजीव रेड्डी पहले कांग्रेस व दूसरी बार जनता पार्टी की तरफ से अध्यक्ष रहे। स्रोत : sansad.in

एक बार ऋषियों की परिषद में यह चर्चा चली कि कौन-से भगवान बड़े हैं। इसका निर्णय करने के लिए महर्षि भृगु को जिम्मेदारी दी गई।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश में कौन बड़ा?

अंतर्यात्रा
संकलित

एक बार सरस्वती नदी के तट पर ऋषियों की परिषद बैठी थी। उसमें चर्चा चली कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश में से कौन बड़ा है? समाधान न होने पर महर्षि भृगु को चुना गया कि अब ये ही निर्णय करेंगे?

इसके बाद महर्षि भृगु अपने पिता ब्रह्मा की सभा में गए। उन्होंने वहां ब्रह्मा को नमस्कार तक नहीं किया। इससे ब्रह्मा को क्रोध आया, पर उन्होंने पुत्र समझकर छोड़ दिया। इसके बाद भृगु कैलाश पर पहुंचे। भगवान शिव ने भृगु को आता हुआ देखकर आलिंगन करना चाहा, लेकिन भृगु ने मना कर दिया कि तुम उन्मार्गगामी हो। भगवान शंकर को क्रोध आया और त्रिशूल लेकर उन्हें मारने के लिए दौड़े। माता पार्वती ने प्रार्थना कर रुद्रदेव को शांत किया।

अंत में महर्षि भृगु बैकुंठ में सीधे भगवान विष्णु के शयन कक्ष में पहुंचे। भगवान निद्रा में थे। उन्होंने विष्णु की छाती में पैर मारा। भगवान शय्या से उठ गए और महर्षि को नमस्कार कर बोले कि आपके आने का समाचार न जानने के कारण आपके स्वागत से वंचित रहा। कहां तो आपके कोमल चरण और कहां मेरी वज्रकर्कश छाती। आपको बड़ा कष्ट हुआ होगा। क्षमा कीजिए। विष्णु बोले-ब्राह्मण देवता आज आपने मुझ पर बड़ी कृपा की। आपके चरणों की यह धूल सदैव मेरे हृदय पर रहेगी।

इसके बाद महर्षि भृगु ऋषियों की परिषद में पहुंचे और अपना अनुभव सुनाया। इसके बाद ऋषियों ने कहा कि सात्विकता के प्रेमियों को भगवान विष्णु का ही भजन करना चाहिए।

अमर उजाला
पुराने पन्नों से — 01 फरवरी, 1953

रूस के लोह आवरण में भारी दरार पड़ी

रूस के लोह आवरण में भारी दरार पड़ी
उसी के अफसर विदेशी भेदिये!

मास्को रेडियो ने यह बात स्वीकार की कि रूस और उसके गणराज्यों में आंग्ल अमेरिकी गुट के जासूस कार्रवाइयां कर रहे हैं, जिसके फलस्वरूप देश की सुरक्षा को खतरा पैदा हो गया है। भेदिये गुप्त भेदों को शत्रुओं को भेज रहे हैं।

अफगानिस्तान में महिलाओं की दुर्दशा

अफगानिस्तान में तालिबान को तीन साल होने को आए, लेकिन महिलाओं पर ज्यादती में कोई कमी नहीं दिखती।

कुलदीप तलवार | पड़ोस

अफगानिस्तान में तालिबान को तीसरा साल हो गया है। 15 अगस्त, 2021 को उन्होंने दूसरी बार सत्ता पर कब्जा किया था। उम्मीद की जा रही थी कि महिलाओं के प्रति उनके रवैये में तब्दीली आएगी। उनको शिक्षा पाने की इजाजत भी मिल जाएगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। भारत समेत ऐसे बहुत से देश हैं, जो महिलाओं को शक्तिशाली बनाने में लगे हुए हैं। लोकसभा और विधानसभाओं में महिलाओं की भागीदारी है, जबकि दूसरी तरफ अफगानिस्तान में महिलाओं को कोड़े मारे जाते हैं।

हाल ही में तालिबान द्वारा 14 महिलाओं और 60 से ज्यादा लोगों को दंड के तौर पर सार्वजनिक तौर पर कोड़े मारे गए, जिसकी सारी दुनिया में निंदा हो रही है। उल्लेखनीय है कि तालिबान के 1990 के दशक के शासन में भी यही होता था। संयुक्त राष्ट्र की संस्था यूएनएचसीआर ने कहा कि नवंबर, 2022 से अप्रैल, 2023 के बीच अफगानिस्तान में ऐसी शारीरिक सजा

के 41 से ज्यादा मामले सामने आए हैं, जिनमें 58 महिलाएं और 274 मर्द और बच्चों को अलग-अलग अपराधों के लिए कोड़े मारे गए। नाबालिग और कमसिन बच्चियों को जबरन शादी करने के लिए मजबूर किया जाता है। लड़कियों में खुदकुशी करने की प्रवृत्ति काफी बढ़ रही है। तालिबान ने सत्ता संभालते वक्त वादा किया था कि उन्हें मंत्रिमंडल में शामिल किया जाएगा। लेकिन वे घर से बाहर अकेले नहीं निकल सकतीं और न ही नौकरी कर सकती हैं।

अफगानी महिलाएं घर में भी सुरक्षित नहीं हैं। तालिबान ने अफगानी महिलाओं को उनके अधिकारों की रक्षा करने के लिए विश्वास दिलाया था, लेकिन वहां हो कुछ और ही रहा है। पश्चिमी देशों ने अफगानिस्तान को दी जाने वाली मदद पर रोक लगा दी है।

अमेरिका और दूसरे पश्चिमी देश ऐसे शासन की मदद नहीं करना चाहते, जिसने लड़कियों की शिक्षा पर रोक लगा रखी है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था यूएन वूमेन ने बताया है कि अफगानिस्तान में महिलाओं की स्थिति अत्यधिक चिंताजनक है। उसने वहां महिलाओं का दमन रोकने के लिए वैश्विक कार्रवाई की मांग की है। और कहा है कि अफगानिस्तान में महिलाओं की हालात में सुधार के लिए जरूरी कदम उठाने आवश्यक हैं। तालिबान ने तीन वर्षों के शासन में सुधार का कोई कदम नहीं उठाया। तालिबान ने सत्ता पर कब्जा करके 70 से ज्यादा ऐसे आधिकारिक फरमान जारी किए हैं। और वे अभी तक कायम हैं, जिसका महिलाओं और लड़कियों के जीवन पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। इस समय 11 लाख लड़कियां स्कूल नहीं जा रहीं और एक लाख से ज्यादा महिलाएं यूनिवर्सिटी में पढ़ाई नहीं कर पा रही हैं।

महिलाएं निर्णय लेने का अधिकार हासिल करना चाहती हैं। वे न केवल अपने घरों में, बल्कि सरकार व अन्य स्थानों पर भी अधिकार चाहती हैं, लेकिन उनकी ये मांगें पूरी नहीं हो रही हैं। इसलिए उनका दर्जा व परिस्थितियां खराब होती जा रही हैं।

विश्व बैंक ने हाल ही में 190 देशों का सर्वे किया है। इसमें अफगानिस्तान में महिलाओं को करीब 90 फीसदी प्रतिबंधों का सामना करना पड़ा है, जिसमें शिक्षा, रोजगार, मुक्ति आंदोलन इत्यादि शामिल हैं। आईएसआईएस सैलानियों पर हमले कर रहा है। इसमें महिलाएं ही ज्यादा प्रभावित होती हैं। चंद दिनों पहले ही आईएसआईएस ने ऐसे हमलों की जिम्मेदारी कबूल की है। अफगानिस्तान में बराबर हजारा बिरादरी शिया नागरिकों पर जुल्म ढा रही है। जब भी शिया बिरादरी के लोग मस्जिद में नमाज पढ़ने जाते हैं, उनको गोलियों का निशाना बनाया जाता है।

पिछले बीस साल में भारत ने अफगानिस्तान में सबसे ज्यादा विकास कार्य किया है। वह अब भी उसे मानवीय सहायता देने की कोशिश करता रहा है। भारत चाहता है कि अलग-अलग देशों की ओर से दी जा रही मदद का दुरुपयोग न हो और अफगानिस्तान आतंक का अड्डा न बने। इसलिए जरूरी है कि अफगानिस्तान सबसे पहले अपनी जनता का भरोसा जीते। वह जब अपनी आवाम का भरोसा हासिल कर लेगा, तब उसका बदला हुआ रवैया सामने आ सकेगा। फिलहाल कोई भी देश उसे मान्यता नहीं दे रहा है। वहां महिलाओं को जो कोड़ों की सजा दी जा रही है, उसे तुरंत बंद करना होगा और शिक्षा के दरवाजे खोलने होंगे। अफगानिस्तानी महिलाओं के सुरक्षा के लिए विश्व समुदाय को भी ठोस कदम उठाने की जरूरत है।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

चिंतन

संसद व संविधान की मर्यादा की रक्षा करें विपक्षी सांसद

18 वीं लोकसभा के पहले संसद सत्र के दो दिन में सांसदों के शपथग्रहण के दौरान विपक्षी सांसदों की सियासी नौटंकी खूब देखने को मिली। जहां इंडिया ब्लॉक के कई सांसदों ने संविधान की कॉपी हाथ में लेकर शपथग्रहण किया तो, एआईएमआईएम के मुखिया व सांसद असदुद्दीन ओवैसी ने शपथ लेने से पूर्व 'बिस्मिल्लाह' बोला, वहीं शपथ के बाद 'जय भीम, जय मीम, जय तेलंगाना, जय फिलिस्तीन' बोला। कांग्रेस ने ही सत्ता में रहते हुए देश पर आपातकाल थोपा, जिसमें संविधान की धज्जियां उड़ीं, वहीं कांग्रेस शासन के दौरान ही संविधान के अनुच्छेद 356 का संबसे अधिक दुरुपयोग हुआ, कांग्रेस शासन के दौरान ही प्रायोजित तौर पर सिख दंगे हुए, जो संविधान का सीधा उल्लंघन था, इसलिए कांग्रेस सांसद राहुल गांधी का संविधान की प्रति हाथ में रख कर शपथ लेना सियासी नौटंकी से अधिक कुछ नहीं है। राहुल गांधी वही शख्स हैं, जिन्होंने अपनी ही सरकार के ऑर्डिनेंस को फाड़ दिया था, देश ने यह भी देखा है, इसलिए संविधान का सम्मान करने की जरूरत सबसे अधिक कांग्रेस व राहुल को है। चुनाव प्रचार के दौरान अपनी बात रखने व भाजपा पर राजनीतिक हमले के लिए संविधान का जिक्र करना समझ में आता है, लेकिन जिस संविधान के प्रावधान के तहत सरकार का गठन हुआ है, जनता ने राजग को बहुमत दिया है, कांग्रेस को भी विपक्ष में रहने का जनादेश दिया है, उस स्थिति का सम्मान नहीं करते हुए, संसद में संविधान की कॉपी लेकर शपथ लेना जहां जनादेश का अस्वीकरण है, वहीं यह निरा सियासी ड्रामा है। इसी के साथ भारतीय संसद में भारत के संविधान के प्रति निष्ठा की शपथ लेने के बाद ओवैसी का फिलिस्तीन का जयगान करना संसदीय मर्यादा का उल्लंघन है। भारत के इजराइल व फिलिस्तीन दोनों के साथ अच्छे संबंध हैं, इजराइल व हमास के बीच जारी जंग को फिलिस्तीन से जोड़ना तथ्यों की अनदेखी करना है। फिलिस्तीन की सरकार वेस्ट बैंक में है, गाजापट्टी फिलिस्तान का हिस्सा जरूर है, पर उस पर आतंकी गुट हमास का कब्जा है। फिलिस्तीन की सरकार खुद हमास से संघर्ष कर रही है। हमास को आतंकी गुट हूती व हिज्बुल्लाह से मदद मिलती है। हूती लाल व अरब सागर में भारत के जहाज पर हमला करता रहता है। भारत नीतिगत रूप से आतंकवाद के खिलाफ है। पहले हमास ने ही इजराइल पर आतंकी हमला किया, जिसकी भारत ने उसी वक्त निंदा की। आज इजराइल हमास के खिलाफ जंग लड़ रहा है, न कि फिलिस्तीन सरकार के खिलाफ। एक तो यह थोपा गया युद्ध है, दूसरा इजराइल को अपनी आत्मरक्षा का अधिकार है। यह छिपा नहीं है कि अधिकांश मुस्लिम देश बिना कारण इजराइल के दुश्मन बने हुए हैं। अभी हमास की मदद में ईरान व कतर आ गए, आखिर एक राष्ट्र किसी आतंकी गुट का साथ कैसे दे सकता है? इजराइल व हमास के बीच की जंग को इजराइल व फिलिस्तीन में युद्ध बताना हमास के आतंकी हरकत को ढांपना है। ये सभी बातें ओवैसी को पता है, वे अंतरराष्ट्रीय मसलों के अच्छे विद्वान हैं, इसके बावजूद केवल भाजपा के प्रति विरोध जताने के लिए अपनी ही संसद की मर्यादा को गिराना करना उन्हें शोभा नहीं देता। संसद को ओवैसी पर कानून सम्मत कार्रवाई करनी चाहिए, ताकि भविष्य के लिए नजीर बने। धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र की संसद में धार्मिक व जातिगत नारे भी नहीं लगने चाहिए, संसद को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए। सभी सांसद अपनी संसद व संविधान की मर्यादा की रक्षा करें, न कि संसदीय गरिमा को हीन करें।

विश्लेषण

प्रमोद भार्गव

तीस्ता : चीन को भारत का करारा जवाब

चीन बांग्लादेश की तीस्ता नदी के कायाकल्प के बहाने नदी के जल प्रबंधन का दायित्व हथियाने के प्रयास में लगा था, लेकिन बांग्लादेश की पीएम शेख हसीना और भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के बीच हुई द्विपक्षीय वार्ता से चीन की कोशिशों पर विराम लग गया है। दोनों देशों के शीर्ष नेताओं के बीच हुई बैठक में यह सहमति बनी है कि तीस्ता नदी जल प्रबंधन पर निर्णायक वार्ता के लिए जल्दी ही भारत का एक तकनीकी दल ढाका का दौरा करेगा, जो नदी में जमी गाद को साफ करने के साथ नदी के पुराने स्वरूप को लौटाने के लिए रोडमैप तैयार करेगा। दोनों देशों ने गंगा जल बंटवारे समझौते को नए सिरे से अमल में लाने और एक समग्र कारोबारी समझौते पर भी बातचीत का फैसला लिया है। बैठक में दस महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए हैं। ये घोषणाएं दोनों प्रधानमंत्रियों ने संयुक्त पत्रकार वार्ता के दौरान कही हैं।

चीन बांग्लादेश की तीस्ता नदी के कायाकल्प के बहाने नदी के जल प्रबंधन का दायित्व हथियाने के प्रयास में लगा था, लेकिन बांग्लादेश की पीएम शेख हसीना और भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के बीच हुई द्विपक्षीय वार्ता से चीन की कोशिशों पर विराम लग गया है। दोनों देशों के शीर्ष नेताओं के बीच हुई बैठक में यह सहमति बनी है कि तीस्ता नदी जल प्रबंधन पर निर्णायक वार्ता के लिए जल्दी ही भारत का एक तकनीकी दल ढाका का दौरा करेगा, जो नदी में जमी गाद को साफ करने के साथ नदी के पुराने स्वरूप को लौटाने के लिए रोडमैप तैयार करेगा। गंगा जल बंटवारे समझौते को नए सिरे से अमल में लाने के समझौते पर भी बातचीत का फैसला लिया है।

चीन का हस्तक्षेप भारत और बांग्लादेश में से बहने वाली नदी तीस्ता पर दिखाई नहीं देता था, किंतु कुछ समय पहले इस नदी पर एक विशाल जलाशय बनाने के बहाने चीन ने बांग्लादेश की जमीन पर बहने वाली तीस्ता नदी पर विकास कार्यों में सहयोग बढ़ाने की इच्छा जताई थी। यह जानकारी बांग्लादेश के विदेश मंत्रालय ने दी थी, किंतु भारत द्वारा आपत्ति उठाए जाने पर बांग्लादेश ने जवाब दिया था कि 'चीनी राजदूत याओ वेन ने बीजिंग से ढाका को तीस्ता जलभराव क्षेत्र के विकास हेतु कई प्रस्ताव दिए हैं। इनमें तीस्ता नदी में वृहद स्तर पर सफाई करने, जलाशय और तटबंध बनाने के प्रस्ताव शामिल हैं।' दरअसल तीस्ता नदी भारतीय राज्य सिक्किम व पश्चिम बंगाल से होते हुए बांग्लादेश में प्रवेश करती है। इसे सिलिगुड़ी गलियारा या चिकन नेक कहा जाता है। पश्चिम बंगाल में स्थित 28 किमी की भूमि का यह संकीर्ण क्षेत्र है। यह भारत के पूर्वोत्तर राज्यों को शेष भारत से जोड़ता है। भूटान का साम्राज्य इस गलियारे के उत्तरी क्षेत्र में स्थित है। यह भारत के लिए अत्यंत संवेदनशील क्षेत्र है। अतः भारत इस क्षेत्र में किसी भी बहाने चीन का हस्तक्षेप नहीं चाहता। इस परियोजना पर करीब 8 हजार 300 करोड़ रुपये खर्च होने की संभावना है। चीन ने इस कार्य को शत-प्रतिशत अपनी पूंजी से पूरा करने की इच्छा शेख हासीना को जताई थी। चीन को इस काम का ठेका मिलने का मतलब, इस क्षेत्र में दखल के साथ नदी के जल प्रवाह का डाटा भी हासिल हो जाता। चीन के साथ भारत के रिश्ते कटुता एवं विश्वास के बने होने के कारण भारत चीन की उपस्थिति अपनी सीमाओं के ईद-गिर्द नहीं चाहता है। विशेषज्ञों का मानना है कि चीनी भागीदारी से इस नदी पर भारत-बांग्लादेश के बीच जल-बंटवारे को लेकर चल रहा विवाद और गहरा सकता है? हालांकि 2009 में प्रधानमंत्री शेख हसीना के सत्ता पर काबिज होने के बाद से ही जल-बंटवारे पर सहमति से समझौते की बात चल रही है। दोनों पड़ोसी देश तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की 2011 में की गई बांग्लादेश की यात्रा के दौरान समझौते पर हस्ताक्षर के लिए लगभग तैयार थे, लेकिन प. बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी अंतिम समय पर समझौते के विरुद्ध खड़ी

हो गईं और तय प्रस्ताव को निलंबित कर दिया गया। अब शेख हसीना और नरेंद्र मोदी की 2022 में परस्पर हुई बातचीत के बाद कुशियारा नदी के संदर्भ में अंतरिम जल बंटवारा समझौते पर हस्ताक्षर भी हो गए हैं। 1996 में गंगा नदी जल-संधि के बाद इस तरह का यह पहला समझौता है। इसे अत्यंत महत्वपूर्ण समझौता माना गया है। यह असम और बांग्लादेश के सिलहट क्षेत्र को लाभान्वित करेगा। 54 नदियां भारत और बांग्लादेश की सीमाओं के आर-पार जाती हैं और सदियों से दोनों देशों के करोड़ों लोगों की आजीविका का मुख्य साधन बनी हुई हैं। इसके बावजूद तीस्ता नदी के जल बंटवारे को अंतिम रूप अब तक नहीं दिया जा सका।

नदियों के जल-बंटवारे का विवाद अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं राष्ट्रीय स्तर पर भी विवाद का विषय बना रहा है। ब्रह्मपुत्र को लेकर चीन से, तीस्ता का बांग्लादेश से, झेलम, सतलुज तथा सिंधु का पाकिस्तान से और कोसी को लेकर नेपाल से विरोधाभास है। भारत और बांग्लादेश के बीच रिश्तों में खटास सीमाई क्षेत्र में कुछ भूखंडों, मानव-बस्तियों और तीस्ता नदी के जल बंटवारे को लेकर पैदा होती रही है। हालांकि दोनों देशों के बीच हुए भू-सीमा समझौते के जरिये इस विवाद पर तो कमोबेश विराम लग गया, लेकिन तीस्ता की उलझन बरकरार है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी 2015 में बांग्लादेश यात्रा पर गए थे, तब ढाका में द्विपक्षीय वार्ता भी हुई थी, लेकिन तीस्ता की उलझन, सुलझ नहीं पाई थी। विदेश नीति में अपना लोहा मनवाने में लगे नरेंद्र मोदी से यह उम्मीद इसलिए ज्यादा है, क्योंकि शेख हसीना दोनों देशों में परस्पर दोस्ती की मजबूत गांठ बांधने के उद्देश्य से भारत आती रही हैं। यह उम्मीद इसलिए भी है, क्योंकि 2016 में मोदी के नेतृत्व में भारत सरकार ने बांग्लादेश के साथ कुछ बस्तियों और भूक्षेत्रों की अदला-बदली में सफलता प्राप्त की थी। तीस्ता के उद्गम स्रोत पूर्वी हिमालय में स्थित सिक्किम राज्य के झरने हैं। ये झरने एकत्रित होकर नदी के रूप में बदल जाते हैं। नदी सिक्किम और पश्चिम बंगाल से बहती हुई बांग्लादेश में पहुंचकर ब्रह्मपुत्र में मिल जाती है। इसलिए सिक्किम और पश्चिम बंगाल के पानी से जुड़े हित इस नदी से गहरा संबंध रखते हैं। तीस्ता सिक्किम राज्य के लगभग समूचे मैदानी क्षेत्रों में बहती हुई बंग्लादेश की सीमा में करीब 2800 वर्ग किमी क्षेत्र मे बहती है। नतीजतन इन क्षेत्रों के रहवासियों के लिए तीस्ता का जल आजीविका के लिए वरदान बना हुआ है। इसी तरह पश्चिम बंगाल के लिए भी यह बांग्लादेश के बराबर ही महत्व रखती है। भारत-बांग्लादेश के मध्य द्विपक्षीय सहयोग की शुरुआत इस देश के अस्तित्व में आने के वर्ष 1971 में ही हो गई थी। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने पाकिस्तान से अलग होने वाले स्वतंत्र राष्ट्र बांग्लादेश का समर्थन करते हुए अपनी शांति सेना भेजी और इस देश को पाक की गुलामी से मुक्त कराया। 1983 में दोनों देशों के बीच एक तदर्थ जल हिस्सेदारी पर संधि हुई थी, जिसके तहत 39 एवं 36 प्रतिशत जल बंटवारा तय हुआ। इस समझौते द्वारा तीस्ता नदी के जल वितरण का समान आवंटन का प्रस्ताव ही नई द्विपक्षीय संधियों का अब तक आधार बना हुआ है।

यदि यह समझौता हो जाता है तो इसके सामरिक हित भी भारत के लिए महत्वपूर्ण हैं। भारत का उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में बांग्लादेश की आर्थिक कमजोरी के चलते बांग्लादेशी घुसपैठियों की निरंतरता बनी हुई है। बांग्लादेश में करीब 10 लाख म्यांमार से विस्थापित रोहिंग्या शरणार्थी बने हुए हैं। ये सीमावर्ती राज्यों में जनसंख्यात्मक घनत्व बिगाड़ रहे हैं। लिहाजा तीस्ता एवं अन्य नदियों के जल बंटवारों पर कोई निर्णायक स्थिति बन जाती है तो बांग्लादेश में कृषि और जल आधारित रोजगार मिलने लग जाएंगे, फलस्वरूप भारत में घुसपैठ थमने की उम्मीद की जा सकेगी ? दोनों देशों को संधि के उपरांत संयुक्त रूप से बाढ़ और सूखे की आपदा से निराकरण के उपाय तलाशना भी आसान होगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया **edit@haribhoomi.com** पर दे सकते हैं।

पहल

प्रो. महेश चंद गुप्ता

नालंदा विवि का पुनरुत्थान एक युगांतकारी कदम

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने नालंदा विश्वविद्यालय के नए परिसर का उद्घाटन किया है। इसी के साथ सदियों के बाद नालंदा विश्वविद्यालय पूरे विश्व में ज्ञान के प्रसार के लिए उठ खड़ा हुआ है। 455 एकड़ में 1749 करोड़ की लागत से बना नालंदा का नया परिसर केवल कंकरीट की एक इमारत भर नहीं है, बल्कि इस इमारत के निर्माण से हमारे देश का गौरवशाली इतिहास पुनजीर्वित हुआ है। यह भारत को विश्व गुरु बनाने के लक्ष्य की ओर बढ़ा एक महत्वपूर्ण कदम है। तीसरी बार प्रधानमंत्री पद की शपथ लेने के महज दस दिन बाद मोदी नालंदा विश्वविद्यालय के कार्यक्रम में गए हैं। मोदी का नालंदा जाना अनायास नहीं है बल्कि यह उनका चिंतन के बाद लिया गया निर्णय है। मोदी नालंदा के बहाने देश को आगे बढ़ने का संदेश दे रहे हैं। सदियों पहले समूचे विश्व के लिए ज्ञान का सागर बने जिस नालंदा को आक्रांताओं ने जलाकर खाक और तहस-नहस कर दिया था, उसका पुनरुत्थान एक बहुत बड़ा और युगांतकारी कदम है। श्रीराम मंदिर की स्थापना के बाद नालंदा हमारे राष्ट्र के पुनरुत्थान का एक और उदाहरण बना है। आक्रांताओं ने नालंदा के वैभव को तीन बार नष्ट किया। दो बार इसका पुनर्निर्माण किया गया। 12वीं शताब्दी में कुतुबद्दीन ऐबक के सेनापति बख्तियार खिलजी ने विश्वविद्यालय के लाखों पुस्तकों वाले पुस्तकालय में आग लगवा दी। इतिहासकारों के अनुसार यह विनाशकारी आग तीन महीने तक भड़कती रही, जिससे वहां सब कुछ नष्ट हो गया। नालंदा में लगाई गई आग किसी इमारत, पुस्तकालय को नष्ट करने का नहीं, बल्कि भारत के गौरव को आहत करने का प्रयास था, क्योंकि प्राचीन मगध साम्राज्य (आधुनिक बिहार) में 5वीं शताब्दी ई. में स्थापित नालंदा विश्वविद्यालय का नाम समूची दुनिया में था। इसमें दुनियाभर के दस हजार विद्यार्थी पढ़ते थे। दुनिया के पहले आवासीय विश्वविद्यालय के रूप में नालंदा विश्वविद्यालय का वैभव ही ऐसा था, जिसने चीन, कोरिया, जापान, तिब्बत, मंगोलिया, श्रीलंका और दक्षिण पूर्व एशिया सहित दुनिया भर के विद्वानों को आकर्षित किया। नालंदा में चिकित्सा, आयुर्वेद, बौद्ध धर्म, गणित, व्याकरण, खगोल विज्ञान और भारतीय दर्शन जैसे विषय पढ़ाए जाते थे। भारतीय गणित के प्रणेता और शून्य के आविष्कारक आर्यभट्ट छठी शताब्दी ईस्वी के दौरान नालंदा के प्रतिष्ठित शिक्षकों में से एक रहे। इतिहासकारों के अनुसार सदियों पहले नालंदा में दाखिला आसान नहीं था। यहां प्रवेश के इच्छुक विद्यार्थियों को कठिन साक्षात्कार प्रक्रिया से गुजरना पड़ता था। यह सब इतना वैभवशाली था, जो आसुरी शक्तियों और विनाशकारी सोच वालों से देखा नहीं जा रहा था। विदेशी आक्रांताओं की वजह से एक लंबे कालखंड तक देश में प्रतिकूल हालात बने रहे। आक्रांताओं ने हमारे नालंदा जैसे विशाल भवन नष्ट कर दिए। वक्ती तौर पर भवनों को ढहा देने वाले आक्रांता खुश हो कर चले गए, लेकिन जिस प्रकार काले बादलों का अंधेरा छंटने पर सूर्य की सप्त रश्मियां वातावरण को फिर से जगमग कर देती हैं, उसी प्रकार नालंदा विश्वविद्यालय से पुनः शिक्षा का उजियारा फूटना शुरू हो गया है। मोदी ने विश्वास व्यक्त किया है कि नालंदा वैश्विक हित का एक महत्वपूर्ण केंद्र बनेगा। मोदी का मिशन है कि भारत, दुनिया के लिए शिक्षा और ज्ञान का केंद्र बने, इस पर विचार किए जाने की जरूरत है। नालंदा का फिर से उठ खड़ा होना निश्चय की खुशी का मौका है। यह हमारे शैक्षिक उत्थान की प्रेरणा बनेगा मगर नालंदा की प्रेरणा तभी काम आएगी, जब हम शैक्षिक उत्थान के लिए समर्पित भाव से काम करेंगे। अगर हम आजादी के सौ साल पूरे होने के अवसर पर वर्ष 2047 तक भारत को एक विकसित देश के रूप में देखना चाहते हैं तो यह शिक्षा की बदौलत ही संभव है, लेकिन यह इतना सरल और सहज नहीं है। इसके लिए देश के विश्वविद्यालयों के लिए जमकर काम करना होगा। आजादी के बाद सत्तर सालों में शिक्षा को नजरअंदाज ही किया गया है। बजट में शिक्षा के लिए पर्याप्त प्रावधान नहीं किए गए। इसी कारण हमारे सरकारी विश्वविद्यालय पिछड़ गए। हमारे ज्यादातर विश्वविद्यालयों का बुनियादी ढांचा मजबूत नहीं है। उनमें विश्व स्तरीय स्मार्ट क्लास रूम का अभाव है। मोदी का सपना भारत को विश्व गुरु बनाने का है। यह सपना शिक्षा की बदौलत सच हो सकता है। आज नालंदा फिर से उठ खड़ा हुआ है। इसी तर्ज पर आगे चलकर समूचे देश के विश्वविद्यालयों को प्रगति पथ पर बढ़ाया जाए। यह काम केवल सरकार या संबंधित विश्वविद्यालय प्रशासन के जिम्मे छोड़ने से नहीं होगा। इसके लिए सबको मिलकर काम करना होगा।

(लेखक प्रख्यात शिक्षाविद्, हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

सजगता से दूर होती है चिंता

संकलित

दर्शन

जब तुम चिंता का अनुभव करो, बहुत चिंताग्रस्त हो जाओ, तब इस विधि का प्रयोग करो। इसके लिए क्या करना होगा? जब साधारणतः तुम्हें चिंता घेरती है, तब तुम क्या करते हो? तुम उसका हल ढूंढ़ते हो। उसके उपाय खोजते हो। लेकिन ऐसा करके तुम और भी चिंताग्रस्त हो जाते हो। तुम उपद्रव को बढ़ा लेते हो, क्योंकि विचार से चिंता का समाधान नहीं हो सकता है। विचार के द्वारा चिंता का विसर्जन नहीं हो सकता है, क्योंकि विचार स्वयं एक तरह की चिंता है। यह विधि बहुत आसान है। यह कहती है कि चिंता के साथ कुछ मत करो। सिर्फ सजग हो जाओ। मैं तुम्हें एक दूसरे जेन गुरु बोकोजू के संबंध में एक पुरानी कहानी सुनाता हूं। वह एक गुफा में अकेले रहते थे, बिल्कुल अकेले। लेकिन दिन में या कभी-कभी रात में भी वह जोरों से कहता थे, 'बोकोजू'। यह उनका अपना नाम था। और फिर वह खुद कहते, 'हां महोदय, मैं मौजूद हूं।' जबकि वहां कोई दूसरा नहीं होता था। उनके शिष्य उससे पूछते थे, 'क्यों आप अपना ही नाम पुकारते हैं और फिर खुद कहते हैं, हां, मैं उपस्थित हूं?' बोकोजू ने कहा, 'जब भी मैं विचार में डूबने लगता हूं तो मुझे सजग होना पड़ता है। इसीलिए मैं अपना नाम पुकारता हूं। जिस क्षण मैं बोकोजू कहता हूं और कहता हूं कि हां महाशय, मैं मौजूद हूं, उसी क्षण विचारणा, चिंता विलीन हो जाती है।' फिर अपने अंतिम दिनों में, आखिरी दो-तीन वर्षों में उन्होंने कभी अपना नाम नहीं पुकारा और न ही यह कहा कि हां, मैं मौजूद हूं।

गुरु की कृपा से असंभव काम पूरे हो पाते हैं

संकलित

प्रेरणा

महाभारत और श्रीमद् भागवद् कथा के रचियता महर्षि वेदव्यास भगवान विष्णु के अवतार माने गए हैं। इनका पूरा नाम कृष्णद्वैपायन था। इन्होंने ही वेदों का संपादन किया। इसलिए इनका नाम वेदव्यास पड़ा। इनके पिता महर्षि पाराशर और माता सत्यवती थीं। पैल, जैमिन, वैशम्पायन, सुमन्तु मुनि, रोमहर्षण आदि महर्षि वेदव्यास के महान शिष्य थे। एक बार महर्षि वेदव्यास हस्तिनापुर गए। उस समय गांधारी और धृतराष्ट्र ने उनकी बहुत सेवा की थी। उनकी सेवा से प्रसन्न होकर महर्षि ने सौ पुत्रों की माता होने का वरदान गांधारी को दिया था। कुछ समय बाद जब गांधारी गर्भवती हुईं। जब संतान के जन्म का समय आया तो संतान की जगह एक मांस पिंड प्रकट हुआ। जब ये बात वेदव्यास जी को मालूम हुई तो वे तुरंत गांधारी के पास पहुंचे। वेद व्यास जी ने अपनी विद्या से उस मांस पिंड से सौ पुत्र बना दिए। गुरु की कृपा से गांधारी सौ पुत्रों की माता बन गई। महर्षि के आशीर्वाद से ही गांधारी को सौ पुत्र हुए जो आगे जाकर कौरव कहलाए। जिनके सेनापति दुर्याधन हुए। महाभारत के युद्ध में दुर्याधन ने ही कौरव सेना की कमान संभाली थी। गुरु की कृपा हो जाती है तो असंभव काम भी पूरा हो जाता है। इसी लिए हम गुरु की आराधना सच्चे मन से करनी चाहिए ताकि उसका फल हमें मिले। कहा गया है की बिना गुरु ज्ञान अधूरा है। गुरु ही हमारा विपत्ति के समय मार्ग दर्शन करते हैं।

अंतर्मन

आज की पाती

लोकतंत्र के मंदिर की मर्यादा रखें

18वीं लोकसभा सत्र की शुरुआत नवनिर्वाचित सदस्यों के शपथ ग्रहण से शुरू हो गई। देश को उम्मीद है कि नवनिर्वाचित सदस्यों ने जो शपथ ली है, उस पर वो खरा उतरेंगे और हर संसद के सत्र में अपनी उचित भागीदारी सुनिश्चित करेंगे। अबकी बार संसद में सत्ता पक्ष के सामने मजबूत विपक्ष भी है, इसलिए इस बार लोकसभा के सत्र में हंगामा कुछ ज्यादा होने के अवसर भी हैं। इस सत्र में सत्ताधारी पार्टी को चाहिए कि वो बेवजह के ऐसे मुद्दे न उछाले जिससे विपक्ष खफा होकर हो-हल्ला कर सत्र का कीमती समय बर्बाद करे। साथ विपक्ष को भी चाहिए कि वो भी केंद्र की नीतियों के विरोध में बेवजह हो-हल्ला न करे। लोकतंत्र में सदन को ठीक ढंग से चलाना दोनों पक्षों का फर्ज होता है, इसलिए सभी को मर्यादा में रहना चाहिए।

- राजेश यदु, जगदलपुर

ट्रेंड

प्रतिबद्धता पर सवाल

आज के ठीक 49 साल पहले भारत में तत्कालीन कांग्रेस सरकार द्वारा आपातकाल लगाया गया था। आपातकाल वह काला अध्याय है जिसे भुलाया नहीं जा सकता। सत्ता के दुरुपयोग का खुला खेल खेला गया, वह कई राजनीतिक दलों की लोकतंत्र के प्रति प्रतिबद्धता पर सवाल खड़ा करता है।

-राजनाथ सिंह, केंद्रीय मंत्री

दिव्य के रूप में पहचान

दिव्यता तब है जब जीवन हम जो हैं उससे ऊपर उठ जाता है। कोई भी इंसान या कोई भी जीवन जो हम जहां है उससे ऊपर प्रतीत होता है, हम दिव्य के रूप में पहचानते है।

-सदगुरु, आध्यात्मिक गुरु

1100 पेड़ काट दिए

दिल्ली के रिज क्षेत्र में गैरकानूनी तरीके से 1100 पेड़ काट दिए गए। सुप्रीम कोर्ट ने नाराजगी जताते हुए कहा है कि "अगर अधिकारी अपने संवैधानिक दायित्वों का पालन नहीं कर रहे हैं तो कोर्ट को संकेत देना होगा कि पर्यावरण को इस तरह से नुकसान नहीं पहुंचाया जा सकता है।

-प्रियंका गांधी, कांग्रेस महासचिव

पीछा करना बंद करो

दुनिया का नियम है कि लोग आपका पीछा तब करेंगे जब वे आपका विकास देखेंगे, जब आप आकर्षक होंगे और जब आप खुश दिखेंगे। पीछा करना बंद करो, आकर्षित करना शुरू करो।

-हर्ष गोयनका, उद्योगपति

करंट अफेयर

भारतीय साहित्य को बढ़ावा देने आर्चर-अमीश पुरस्कार

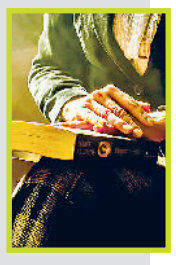

जाने-माने लेखक लॉर्ड जैफ्री आर्चर और अमीश त्रिपाठी ने समकालीन भारतीय कथा साहित्य में प्रतिभाओं और भारतीय कथा में महत्वपूर्ण योगदान देने वाली कहानी कला को प्रोत्साहित करने के लिए 25,000 डॉलर के एक नए साहित्यिक पुरस्कार का आगाज किया है। 'आईजीएफ आर्चर-अमीश अवॉर्ड फॉर लिटरेचर' की घोषणा सोमवार को की गई। दोनों लेखक इस घोषणा के लिए ब्रिटेन स्थित इंडिया ग्लोबल फोरम (आईजीएफ) के उद्घाटन पर एक साथ आए। पुरस्कार के लिए नामांकन दाखिल करने की प्रक्रिया इस साल शुरू होगी और 2025 में अगले आईजीएफ लंदन सम्मेलन में पुरस्कार के विजेता की घोषणा की जाएगी। 'केन एंड एबेल' और 'द विलफ्टन क्रॉनिकल्स' जैसी सबसे अधिक बिकने वाली किताबों के जाने-माने ब्रिटिश लेखक लॉर्ड आर्चर ने कहा, 'पुरस्कार काफी महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि वे लेखक की रचनाधर्मिता को एक पहचान देते हैं और साथ ही यह भरोसा दिलाते हैं कि लेखन कर्म को अपने दिन रात समर्पित करने वाला लेखक अकेला नहीं है।' उन्होंने कहा, 'लेखन बहुत एकांतवादी प्रक्रिया है जहां आप पूरी तरह अपनी दुनिया में खोए रहते हैं।

ऑफ बीट

कुछ ग्रहों के पास कई चंद्रमा कुछ के पास एक भी नहीं

पृथ्वी से रात में ऊपर देखने पर आप सैकड़ों हजारों मील दूर चमकते हुए चंद्रमा को देख सकते हैं, लेकिन अगर आप शुक्र ग्रह पर जाएं तो ऐसा नहीं होगा। हर ग्रह के पास चन्द्रमा नहीं होता। सवाल है कि केवल कुछ ग्रहों के पास कई चन्द्रमा क्यों हैं जबकि कुछ के पास एक भी चंद्रमा क्यों नहीं है? बताते हैं कि कुछ ग्रहों के पास चन्द्रमा क्यों हैं और कुछ के पास क्यों नहीं हैं। सबसे पहले चंद्रमा को प्राकृतिक उपग्रह कहा जाता है। खगोलशास्त्री उपग्रहों को अंतरिक्ष में मौजूद ऐसी वस्तुओं के रूप में संदर्भित करते हैं जो बड़े पिंडों की परिक्रमा करते हैं। चूंकि चंद्रमा मानव निर्मित नहीं है, इसलिए यह एक प्राकृतिक उपग्रह है। वर्तमान में कुछ ग्रहों के चंद्रमा होने के दो मुख्य सिद्धांत हैं। चंद्रमा अगर ग्रह के हिल स्फीयर रेडियस के भीतर होते हैं या सौर मंडल के साथ मिलकर बनते हैं तो गुरुत्वाकर्षण द्वारा खींच लिए या पकड़ लिए जाते हैं। क्या है हिल स्फीयर रेडियस ? वस्तुएं आस-पास की अन्य वस्तुओं पर गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं जो उन्हें एक दूसरे की तरफ खींचती है। जो वस्तु जितनी बड़ी होगी उसका आकर्षण बल उतना ही अधिक होगा।

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से **hbcgpati@gmail.com** पर भेज सकते हैं।

https://epaper.haribhoomi.com